॥ श्रीः ॥

जयश्रीराधे ।

शास्त्रसारसिद्धान्तमणि ।

भाषाटीकासमेत ।

जिसको

अनन्यरसिक प्रियादासजी शुक्ल कानपुरनिवासीने
निर्माण किया ।

जिसमें

श्रुति, उपनिषद्, रहस्यग्रंथ, संहिता, पुराण, वेदान्त, आदिशास्त्रोंका सार
[गुरुप्रकरण १, सत्संगप्रकरण २, कर्मप्रकरण ३, धर्मप्रकरण ४,
ज्ञानप्रकरण ५, भक्तिप्रकरण ६, योगप्रकरण ७, मोक्ष-
प्रकरण ८] आठप्रकरणोंमें वर्णित है.

वही

भगवद्भक्तोंके हितार्थ

"खेमराज श्रीकृष्णदासने"

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९६५, शके १८३०.

अनन्यरसिक-प्रियादासजी शुक्ल.



भूमिका.



महात्माओंसे तथा अन्य विद्वज्जनोंसे सविनय निवेदन है कि यह ग्रन्थ पक्षपातरहित है और निज उक्ति रहितहै । जो कुछ पूर्वाचार्योंका सिद्धांत और शास्त्रपुराण तथा उपनिषदोंका मतहै वही प्रमाण छांटकर सबके दृष्टिगोचर करेहैं । वर्तमान समयमें अपनी अपनी सब गातेहैं और पूर्वाचार्य तथा ऋषि मुनियोंके वाक्योंपर न तो ध्यान देतेहैं और न धारणा है केवल मुखसे कथनमात्र है हमें भी ऐसे महात्माओंके बहुत दर्शन हुए हैं कि जिनके केवल वाचकज्ञान है और धारणा कुछ नहीं पराये छिद्र देखतेहैं तुम्हें पराई क्य। तुम अपना सुधारो क्या वेदांती क्या योगाभ्यासी क्या संप्रदायी आपसमें विरोध करतेहैं और कोई कोई तत्त्वदर्शीको देखा तो उनके निकट वेदांती सम्प्रदायी कोई भी हो किसीसे वैर नहीं सबकी सुनतेहैं सो यह ग्रंथ हमने अपने कालक्षेप और चित्तनिरोधके लिये बनाया है कृपाकर इसमें कोई बात न बनी होय तो विद्वज्जन क्षमा करें और भक्ति निष्ठ परमज्ञानी मित्रवर लाला राधाकृष्णशरण महाजन जानकीप्रसादात्मज रईस तिलसारीनिवासी हाल मुकाम गोसाईंके श्यौराजपुर निवासीको हम धन्यवाद देतेहैं कि जिनने इस ग्रन्थमें जितने ग्रन्थसम्मतिको चाहने परे वे और द्रव्य भी दिया श्रीविहारीजीका मन्दिर लक्षमुद्रा लगाय जिनने बनवाया और जो सन्तमंडलीमें सुशोभित रहतेहैं ये हमारे परममित्र सत्संगी हैं इन्होंने ग्रन्थ बनानेमें सहायता दीहै सज्जन ग्रन्थको आदिसे अंततक अवलोकन करें ।

सज्जन दर्शनाभिलाषी,

पं० प्रियादासशुक्ल.

चौबेपूर,

श्रीराधामाधवौ जयतः ।

ग्रंथकर्ताका संक्षेप जीवनचरित्र ।

सविनय महाजनोंके अर्थ निवेदनहै ग्रंथकर्ता मेरे ज्ञानोपदेशक कि गुरु हैं उनके मुखसे ज्ञान सुन मैं श्रीलडैतीजीकी भक्तिका सुख अहनिश लूट रहाहूँ यह हमारा परम भाग्यहै इन महाराजका आगमन संवत् १९५२ माव मासमें हुवा और आपने रामदयाल गौडकी दुकानपर छः मास निवास कर हमें अनायास दर्शन दे कृतार्थ किया उसी समय महाराजकी हस्तलिखित पोथी कि जिसमें उन्होंने अपना जीवनचरित्र अर्थात् जिसमें जो जो दुःख सुख आदिकी वार्ता लिखीहै वह हमारे हाथमें परी हमारी इच्छा बहुत दिनोंसे थी कि इसे छपावें परंतु आज श्रीविहारीजीने अवसर पूर्णकिया कि इस बडे ग्रंथके साथ छपजायगा इसका कारण यह कि प्रथम भी इन्ही नामोंके महात्मा भयेहैं और होंगे तो उनके निश्चयके लिये हमने महाराजकी आज्ञा मांग और लिख कर ग्रंथमें मिलायाहै गंगा यमुनाके मध्य और श्रीभागीरथीके समीप एक प्राचीन अनादिकालसे विख्यात ब्रह्मावर्त्त क्षेत्र है जिसे इस समय बिठूर बोलतेहैं महर्षि वाल्मीकिजीने इसी जगह तप किया है और यही श्रीजानकीजीसे लव कुशका जन्म हुआहै और इस क्षेत्रसे पश्चिम दिशामें आधायोजन अर्थात दो कोशपर एक वह चौबेपुर ग्रामहै कि जहाँ माखनलाल पाँडेकी स्थापितकी श्रीकृष्णलीलाहै इसी ग्राममें ग्रंथकर्ताका जन्म है इनके पूर्वजोंका हाल सुनो कि कान्यकुब्जोंमें तरीके शुक्ल श्रीयुत साहिबलालजी हुएहै और सैलह गॉव इनके जन्मस्थलसे चारकोस पश्चिमहै और इनके पुत्र शुक्ल श्रीजवाहिरलालजी उनके पुत्र शुक्ल श्रीयुत दुर्गाप्रसादजी हुएहैं ये निंबार्कसंप्रदायके शिष्य हुये हैं ये ग्वालियरमें किसी पलटनमें नौकरथे परंतु संतोंके संगमें रहते थे और इनके गुरु इन्हें गीतगोविंद पढाया करतेथे इसमें इनकी बडी प्रीति थी और

गुरुके घरमें ही संवत् १९२० भाद्रपदमासके शुक्लपक्षमें राधाष्टमीके दिन आठ घडी दिन चढे इनका जन्म हुआ और ये अपने ममानेमें अपनी नानीके यहां ही परवरिश पाये और पाठशालामें पढे नौ वर्षमें इनका यज्ञोपवीत हुआ और ग्यारह वर्षकी अवस्थामें इनके पिताको देवलोक हुआ इनकी नानी रामानुजसंप्रदायकी शिष्य थी इसलिये इन्हें भी बाल्यावस्थामें मैलकोटाके संन्यासीसे उपदेश दिवाया था और इनका लक्ष्मीनारायण नाम इनकी नानीने धरा था और इनकी प्रीति बाल्यावस्थासे ही, श्रीलाडिलीलालके पदोंमें थी कोई भी कहीं भजन गाता या ब्रजचरित करता सुना तो सुनते ही चलदेते थे परंतु ब्रजविलास पुस्तकको पढते हुए द्वारकाकी लीलाएँ नहीं कभी पढते और न सुनते और कभी मुखसे वसुदेवनंदन कहते थे केवल नंदनंदनमें ही इनकी प्रीति रहतीथी वह प्रीति ऐसी कि एक समय संवत् १९३५ में कानपुरमें रासधारि योगिनलीला और दानलीला की उसको देख प्रेममें मग्न हुए और एक रोज आपने बनयात्राकी पोथी दो आनेकी ली उसमें ब्रजकी सबलीलाओंके स्थान देखकर गद्गदकंठ हो आंसुवे डारने लगे और ब्रजके दर्शनोंमें उत्कंठा कर आपने पंदरहवर्षकी अवस्थामें श्रीवृन्दावनको पयान किया और श्रीजीकी कृपासे श्रीब्रजमंडल चौरासी कोसकी यात्राकी इसप्रकार एक वर्ष तक भ्रमण कर आनंद लूट फिर तीर्थयात्राको भ्रमें और बद्रीनाथ पुष्कर नरसिंहकटाक्ष द्वारका तथा रामेश्वर श्रीरंगजी इनमें चार मास निवास कर लौट किष्किधामे चातुर्मासा किया फिर नासिकमे दो मास फिर पंढलपुरहो जगदीश हो चार वर्ष बिताकर संवत् १९३८ के अगहनमें घर आये और अपने वियोगसे जो माता तथा नानीको दुःखथा वह आप दण्डवत् प्रणाम कर दूर किया और सुख प्राप्त किया फिर कुछ काल रहे माताकी आज्ञा पाय आपने संवत १८४० में विवाहकर फिर गृहस्थाश्रमको पालनकियाहै अब भी फिर श्रीवृन्दावनमें जाय एक वर्ष निवास कर रसिकजनोंके संगका

सुख लूटा और वहां ही श्रीराधावल्लभ संप्रदायके आचार्यवर्य श्री १०८ श्रीगोस्वामी श्री हित हरिवंश जी हुये तिनके छोटे पुत्र श्रीमहाराज श्रीहित गोपीनाथजी और दिव्यवनमें इनके ही वंशमें श्रीगोस्वामी परमदयालु जगदुद्धारक श्रीहित गिरधरलालजी महाराज हुए। इन्होंने कहा कि तुम्हारी श्रीजीमें इतनी प्रीति और फिर भी तुम अन्यतिलकवाले और लक्ष्मीनारायण नामवाले कैसे, जैसी प्रियाजीमें तुम्हारी प्रीति है वैसाही तुम्हारा नाम भी प्रियादास चाहिये यह सुन इन्होंने दण्डवत् प्रणामकी और प्रार्थना की कि कृपा कर मुझे तिलक कंठी प्रदान कीजिये यह सुनकर तिलक कंठीभी दी और प्रियादास नाम भी रक्खा उस दिनसे इनका प्रियादास नाम विख्यात हुआ फिर इन्होंने ग्रंथोंका बनाना शुरू किया तो तेरह पुस्तकें बनाईं। प्रथम प्रिया रसिकविनोद जिसमें गान विद्याहै इसके अनंतर दानलीला मानलीला आदि अनेक ग्रंथ रचे हैं ये ग्रंथ बंबईमें छपवाये है फिर संस्कृतमें निकुंजदेवीस्तवराज तथा राधाष्टक रचे फिर भाषामें वर्षानाशतक, १ अनुरागशतक२ दोहावली ३ ब्रजरसकवितावली ४ भक्तिज्ञानानन्दामृतवर्षिणी ५ वृन्दावनतत्त्व रास ६ अजइन्दुमतीनाटक ७ विवेकार्कप्रकाश ये ग्रंथ रचे अनंतर यह शास्त्रसारसिद्धांतमणि नाम ग्रंथ रचा यह अनेक ग्रंथोंके प्रमाणसे इसे रचाहै और इस सुन्दर ग्रंथकी भाषा टीका भी बनाई ये सब ग्रंथ बनाकर फिर देशाटन और विद्योपार्जन भी किया और छतरपुर तथा चरखारी राजद्वारमें चार २ मास निवास कर राजाको सत्संगसे और कृष्णभक्तिसे आह्लादित किया और इन राजाओंसे विधिवत संमान मिला फिर इन्होंने शास्त्रोंके अवलोकन पर चित्त स्थिर कर देशाटनसे चित्त का उपराम किया। अवतो केवल श्रीलाडिलीलालकी लीला नाम धाम के अनुभवमें मग्न रहतेहैं और व्रज वासियोमें अत्यंत प्रीति रखतेहैं और संतजनोंको अपना सर्वस्व समझते हैं और आप स्वदेशभाषाके अलावा गुजराती मरहटी गुरुमुखी वंगला तैलंग इत्यादि भाषाओंसे भी परिचित हुए

और आपको चित्रबनाना तथा शिल्प वियाका भी परिचय था पीछे इन सबका परित्याग कर केवल योगाभ्यासमें प्रीति रखतेथे और विवेकी संतोंकी खोजमें कटिबद्ध रहतेथे एक समय आपसे किसीने पूछा कि आप किसके ध्यानमें मस्त हैं तब आपने यहपद कहा (पद) मनकी पीर मनै पहिचानै ॥ टेक ॥१॥ जो कदापि कहिहै काहूसे तौ वाको कोउ साँच न मानै ॥ ताते मौन भये हम बैठे दुःखके हाथविकाने ॥ है अतिगुप्त भावको रस जो चाहत तापै बजत दिवाने ॥ विना कृपा भये कुंवरिलालके टरिहै न दुःखसयाने ॥ प्रियादास कहैं पीर प्रसूती बूझौ बांझ ता हि का जाने ॥ इत्यादि ॥ आप अहर्निश श्रीराधा नामका जप करते अब केवल श्रीवृन्दावन तथा वर्षाने धाममें निवासकी अत्यंत इच्छा है । अभी तो घरमें ही हैं इनके वर्तमान एक पुत्र आठ नौ वर्षका है जिसका नाम किशोरीशरण है और एक बेटी ब्रजकिशोरी चार वर्ष की है सो तिन्हैं पालन तो करतेहैं परंतु परिणाममे किसी पर प्रीति नही सो यही आपने एक पद में कहाहै (पद)जगमें ऐसी रहनी रहिये ॥ १ ॥ सबसे मिले निराले सब से भेद न काहुसे कहिये ॥ दुखसुख लाभ हानि कर्मन फल तिनके भय न डरैये॥दुष्टनके उपहास वाक्य कटु सुनि जिय दुःख न लैये ॥ जिमि पुरइन जलभीतर ऐसे घरमें ना लपटैये ॥ प्रियादास हरिकेरे भजनमें आठौं याम वितैये ॥ इत्यादि और आपसे जो मिलता है उसे सिवाय उपदेशके और अन्यप्रपंचकी बातें कम रुचती हैं यह सब चारित्र आपके वर्तमान समय तकका है इस ससय आपकी अवस्था पैंतीस वर्षकी है यह जीवनचरित्र संवत् १९५५ उन्नीससौ पचपन तकका है तिसमें संक्षेप जीवनचरित्र है और जो द्रव्य आता है उसका संग्रह नही करते न द्रव्यके अर्थ उपाय करतेहै कहते हैं कि विशेषमें चित्त अस्थिर न रहेगा आप पर नानाप्रकारके देहकष्ट और द्रव्यकष्टपडे संपूर्ण महाराजके मुखसे सुने परंतु

इस जीवन चरित्रमें नहींलिखे क्योंकि महाराजने कहा इनका लिखना क्याहै ये तो सब देहके धर्म है बस अभी इतना जीवनचरित्रहै फिर पूरा आगे काव्यद्वारा कभी छपावेंगे कानपूरजिला के पश्चिम आठ कोशपर चौबेपुर है वहां आपका वर्तमानमें निवास है और हमारे ऊपर अति अनुग्रह करतेहैं जीवनचरित्र लिखित। शिष्यवर्ग.

चंपकलताशरण।

(लश्कर) ग्वालियर.



॥ श्रीः ॥

शास्त्रसारसिद्धान्तमणिग्रन्थकीविषयानुक्रमणिका ।

समाप्ताविषयानुक्रमणिका ।



॥ श्रीः ॥

॥ श्रीराधावल्लभो जयति ॥ ॥ श्रीहितहरिवंशचंद्रो जयति ॥

शास्त्रसारसिद्धान्तमणि।

भाषाटीकासहित.

गुरुप्रकरण १.

॥ मंगलाचरण श्लोक ॥

ॐ, वन्दे नवघनश्यामं पीतकौशेयवाससम्।
सानंदं सुंदरं शुद्धं श्रीकृष्णं प्रकृतेः परम् ॥ १ ॥
श्रीराधे करुणापारे कोटिपूर्णेन्दुभानने।
मंगलं कुरु मे नित्यं नंदलालेन लालिते ॥ २ ॥
ॐ,नमामि राधिकाकृष्णौ नित्यं वृन्दावनेश्वरौ।
भूमिभारहरार्थाय लीलामानुषविग्रहौ ॥ ३ ॥
अक्षरं परमं ब्रह्म ज्योतीरूपं सनातनम्।
गुणातीतं निराकारं स्वेच्छामयमनंतकम् ॥ ४ ॥
भक्तानां ध्यानसेवार्थै नानारूपधरं वरम्।
शुक्लरक्तपीतश्यामं युगानुक्रमणेन च ॥ ५ ॥

प्रार्थना।

नाहं त्वदीयचरणाम्बुजयुग्मकोशाज्जाने कदापि व्रजवल्लविसेव्यमानात्। नान्यावलंबनगतिस्त्वमतो हि मह्यं श्रीराधिके नवनिकुंजगृहं प्रदेहि ॥ ६ ॥

प्रणमामिरसिकाचार्यं हितहरिवंशमहामुनिम् ।
यत्प्रसादात्सदासुलभं राधिकावरसन्निधिम् ॥ ७ ॥
वंदेगुरुहितगिरधरंदिव्यपादाम्बुजद्वयम् ।
श्रीदिव्यवनसंस्थानंगोपीनाथकुलभूषणम् ॥ ८ ॥

ग्रन्थकर्ताका नाम धाम ।

कान्यकुब्जो द्विजश्चासीच्छुक्लवंशावतंसकः ।
नाम्ना दुर्गाप्रसादेति प्रियादासस्तदात्मजः ॥
अनन्यरसिकः कानपुरस्य वारुणीदिशि ।
राधानामजपद्वारा चौबेपुरकृताश्रमः ॥ ९ ॥
सोऽहं ग्रंथं संग्रहिष्येत्युत्तमं राधिकाज्ञया ।
सच्छास्त्रसारसिद्धांतमण्याभिख्यं यथामति ॥ १० ॥
राधिकानाम संस्मृत्य नित्यानंदेन तस्य च ।
तस्य लीलाविनोदेन समागच्छत्यहर्निशम् ॥
भाद्रमासे शुभे शुक्लेष्टम्यां वै चंद्रवासरे ।
नागाब्धिनंदभूसंख्ये वैक्रमीये सुवत्सरे ॥ १२ ॥

ग्रन्थोत्पत्ति आशय ।

भाषाव्याख्या–एक महात्मा प्रेमानंददास जिनका नाम परमज्ञानवान् भगवद्भक्त अहर्निश भगवद्ध्यानमें मग्न रहते सो श्रीव्रजमंडलमें श्रीगोवर्धन-जीके निकट निवास करतेथे तिनकी सेवामें एक उनका शिष्य सन्तोषदास रहताथा सो एक रोज कोई कार्यवश किसी ग्राममें गया वहां उसने नाना प्रकारके संसारी पुरुषोंके मुखसे अनेक प्रकारके दुःख श्रवण किया, किसीने अपनेको सुखी न कहा यह दशा देख सन्तोषदास विचारकर गुरुके पास आय सब व्यवस्था वर्णन कर अत्यंत नम्रतासे तिसका कारण निवृत्त्यर्थ प्रश्न किया।

शिष्य उवाच ।

श्लोक–भवार्णवे जन्मजरातिमिंगिले तृषानले मोहविवर्तसंकुले ।
निमज्जतो मे किमु तारकं दृढं वदार्तबंधो मयि चेदनुग्रहः १ ॥

भापार्थ–हेगुरुजी महाराज आप कैसे हो कि (अर्तबंधो) कहिये दीन-पुरुषोंके सहाय करनेहारेहो (भवार्णवे) कहिये यह संसाररूप एक समुद्र है सो कैसा भयका जामें जन्ममरन यह महाक्लेश सो समुद्रके पार जैसे बिना जहाज कोई नहीं जासक्ता तैसे यह संसार समुद्र भी तरना अत्यंत दुस्तर (कठिन) है वहां समुद्रमें जैसे मकर वडियालआदि नाना प्रकारके जीव हैं तैसे संसारसमुद्रमें काम क्रोध लोभ मोह ये ही मकरादिजीवको दुःख देनेवारे जैसे समुद्रमें वडवानल जलको शोषताहै तैसेही संसारसमुद्रमें (तृषा-नले) कहिये तृष्णा यही वडवानल है जैसे समुद्रमें भँवर उठैहैं तैसे संसा-रसमुद्रमें (मोहविवर्तसंकुले) अज्ञानरूपी भँवर उठैहैं तामें संसारी जीव बूडैं उछरैंहैं अर्थात् मनुष्ययोनिते कीटपतंगयोनिनिमें भ्रमैहैं सो हे कृपानाथ ! ऐसे घोरसंसाररूपसमुद्रमें पडा नाना क्लेश सहताहै जीव तासे निकलनेका कोई साधन (उपाय) बताइये जामें जिसके आश्रय होकर इसे पार होऊं जो हेगुरुजी जो मैं इसका अधिकारी होऊं तब कृपाकर कथन करिये इति या(प्रकार) शिष्यके आर्त वचन सुन परम उदार ज्ञानवान् गुरु ता शिष्यके प्रश्नका समा-धान अनेकशास्त्र पुराण श्रुतिस्मृतिरहस्यके प्रमाण दे कर्म ज्ञान भक्ति योग सत्संगादि तथा गुरुधर्म इनके द्वारा संसारसे निवृत्तहोनेका उपाय कथन करते हैं ताको जिज्ञासु शांतमनचित्त एकाग्रकर श्रवण कर मननकरे ।

गुरुरुवाच ।

श्लोक–संसारदुष्पारमहोदधौ नृणां तुंबीवदेवोर्ध्वमधश्च मज्जताम् ॥
गोविंदपादांबुरुहैकचिंतनं पोतं वदंतीह दृढं विपश्चितः॥२॥

भापार्थ–हेशिष्य ! (संसारेति) इस संसाररूपीसमुद्र दुष्पार याने याके पार होना अतिकठिनहै तामें यह जीव (तुंबीवत्) कहे तूंबीफलकी नाई बूडते उछलते भ्रमते तासें समुद्रमे पार जहाजद्वारा पुरुष जाता यहां संसार समु-द्रके पार होनेका उपाय केवल एक गोविंद जो परमात्मा तिनके चरणनमें

ध्यान यही एक अवलंब (पोतं) कहे जहाज पार करसकताहै अन्य उपाय यथा यज्ञादि इनका फल स्वर्गादिक है न कि निवृत्ति भगवतकी भक्तिसे जन्म मरण छूटजाताहै तासे यज्ञादिक द्वारा परमात्माको प्राप्त नहीं होता यह बात मुंडकोपनिषद्में भी कथन करी "प्लवा ह्येते अदृढा यज्ञरूपाः" इसका यह अर्थ है यज्ञादिरूप यह टूटी नौकाके सदृश हैं इनसे भवसागर पार नहीं कोई जाय-सकता तासे जिज्ञासु एक कर्मंहीके भरोसे न रहे न अपना उपाय समझै केवल श्रीकृष्णचरणमें ध्यान यह उपाय साध्य है सोई वाक्य भगवत्शरणके प्रापक शास्त्रमें चार मार्ग कहे एक तो कर्म जासे अंतः शुद्धि दूसरे ज्ञान जासे सत्या सत्यकानिर्णय तीसरा सत्संग जासे निश्चय दृढता होतीहै चौथा भक्तिसे प्रीति दृढताऽनुरागप्रेम यासे नित्यधामकी प्राप्ति परंतु ऊपरके कहे मार्ग इनके स्वरूपका लक्ष करावना केवल गुरुहीकी कृपासे होताहै ता मुमुक्षुको यह पदका अर्थ यह याने मोक्ष बंधमुक्तमोहबंध अथवा जन्म मरण बंधनसे छूटनेकी इच्छा है जाके सो मुमुक्षु ताको प्रथम गुरु करना और ताकी सेवा कुछकाल कर तासे शास्त्रोक्तज्ञानद्वारा अपने उद्धारका उपाय पूँछ वही आचरणद्वारा मुक्तिका मार्ग है ऐसा शास्त्र कहैहैं । तहां प्रमाण–

बृहद्गौतमीसंहिता ।

श्लोक–प्रवृत्तिर्भगवन्मार्गे जायते न गुरुं विना ।
तस्माद्गुरुपदांभोजं संश्रयेन्मुक्तिसिद्धये ॥

भाषार्थ–हेशिष्य । देखो जिस जिज्ञासुको मोक्षकी इच्छा हो सो गुरुके चरणोंके आश्रय रहे जबतक गुरुसे उपदेश न लेगा तबतक भगवद्धर्ममें प्रवृत्ति अन्य उपाय यथापुराणादिक बाँचकर केवल उसका अधिकारी नहीं होसकता यथा गाईका पूंछ छोड बकरीका पूंछ पकड नद उतरा चाहते वैसे कोई एक ग्रंथ पढ स्वयं ज्ञानी बन बैठे किसी महत्पुरुषसे उस ग्रंथका आशय न पूंछ अर्थका अनर्थ समझ स्वतंत्रतासे वादाविवाद किया सो प्रमाण–

नारदपंचरात्रे।

श्लोक—गुरूपदेशरहितस्स्वीयप्रज्ञासमन्वितः।
धृताजपुच्छसंत्यक्तगोपुच्छ इव मज्जति॥

भावार्थ—जिसने गुरुसे उपदेश नहीं लिया और शास्त्रपुराण बाँच स्वयं यानें आपही ज्ञानवान अपनेको समझ जो मनमें आया सोई किया शास्त्रका आशय तो केवल गुरुहीसे मिलता है फिर उनकी कुगति याप्रकार होती यथा गंगादि नदके पार जानेवाले गाईकी पूंछ परित्यागकर याने बकरेकी पूंछद्वारा पार कब जाय सकैंगे तासे शास्त्रके आशय ज्ञाता गुरुद्वारा जानना चाहिये ताको प्रमाणभी है सो श्रवणकर।

पद्मपुराणे।

श्लोक—एवं शास्त्राशयं ज्ञात्वा श्रीगुरौ दृढनिश्चयः।
गृह्णीयाच्छ्रीगुरोर्मंत्रं श्रद्धाभक्तिसमन्वितः॥

भावार्थ—कहेभयेकी तरह जो जिज्ञासू, शास्त्रका जाननेवाला ज्ञाता शांतिव्रत ऐसा गुरुको जो आश्रय करता और श्रीमंत्रका उपदेश लेताहै उसीका कल्याण याने अविद्यारूपी अन्धकार जो नेत्रोंमें है ताको नाश करदेताहै ताको प्रमाणभी सुनो।

महाशिवसंहितायाम्।

श्लोक—अज्ञानतिमिरांधस्य ज्ञानांजनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

भावार्थ—अज्ञान सोई तिमिर याने अन्धकार अन्तस नेत्रोंमें छारहाहै ताके निवृत्यर्थज्ञान अञ्जनरूपीहै सोदिव्यचक्षू होजाते तैसेही अन्तसके नेत्रोंको यह ज्ञान अंजन है सो अंजन गुरुकी कृपासे मिलताहै तासे प्रथम गुरुकरके तासे ज्ञानोपदेश ले। प्रमाण—

योगवासिष्ठे।

श्लोक—उपदेशक्रमो राम व्यवस्थामात्रपालनम्।
ज्ञतेस्तु कारणं श्रद्धा शिष्यप्रज्ञैव केवलम्॥

भापार्थ–देखो वशिष्ठजीने श्रीरघुनाथजीसे कहाकि हेराम ! गुरुशिष्य-भाव सनातनसे चलाआयाहै कोई बात हो यावत् गुरु उपदेश न करै तवतक ताके स्वरूपका भास नहीं होता। जैसे बागमें नानातरहके फूल हैं परन्तु कोई केतकीका फूल ढूंढनेगया सो ताको मालीसे पूंछा तब जाना ऐसे शास्त्र पुरानमें परमात्माकी प्राप्तिका उपाय है परन्तु विना गुरु लक्ष्यमें नहीं आता सो शिष्य अपनी श्रद्धा गुरुसे प्रगटकरे तब गुरु तो दयालु आप उपदेश देगा। पुनः

श्लोक–यावन्नानुग्रहः साक्षाज्जायते परमेशितुः ।
तावन्न सद्गुरुः कश्चित्सच्छास्त्रं वोपलभ्यते ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो जबतक परमेश्वरकी ! कृपा नहीं होती तबतक गुरु नहीं प्राप्तहोता और विना गुरुके शास्त्रका आशय नहीं मिलता। जैसे तिलमें तेल है परंतु वह निकालनेवालेसेही निकलताहै। यथा दूधमें माखनहै परंतु ताको यत्नसे मथानीद्वारा निकालनेवालाही निकासताहै तैसे शास्त्रमें तत्त्ववस्तु गुरुद्वारा प्राप्तहै तहां एक इतिहास एकसमय नारदजी भगवद्गुणानुवाद गाते चले जाय रहेथे।मार्गमें श्रीगंगासरस्वतीके निकट श्रीव्यासजी पुराणाचार्य मिले और मुनिका विधिवत् स्वागतकर सन्मानपूर्वक वरासन याने अपनेसे ऊंचेपर बैठाया तदुपरि नारदजीने कुशलप्रश्न पूंछा और व्यासजी अपनी प्रसन्नता और पुराणों की रचनाका वृत्तांत कह सब पुराण अवलोकन कराय सबका आशय कहा यह सुन नारदजी व्यासप्रति बोले कि हे व्यासजी आपने पुराण बनाये परंतु जिस वस्तुका निश्चय उसके अधिष्ठाता श्रीसच्चिदानंद श्रीकृष्णमहाराजका यश नहीं वर्णन किया जिस्से जीवका कल्याण और उसकी प्राप्ति हो। सो प्रमाण–

बृहन्नारदीयपुराणे।

श्लोक–पारावारपरंपरापरतयाप्याशा न शांता तव ।
श्रीकृष्णेति रसायनं रसपरे शून्यैःकिमन्यैः श्रमैः ॥

भापार्थ–हेव्यासजी देखो सनातनमे ऐसेही अनेकन मुनियोंने बहुत ग्रंथ विनिर्मित किये लोकोपकारार्थ परंतु किसीने पार न पाया यह भगवत्की

मायासे और किसीको निश्चयरूपी पियास नहीं शांतहुई इसीतरह विवादकी शांतिके लिये न्यायशास्त्र बना परंतु तौभी न निश्चय हुआ तासे हेसत्यवर्ती सुत! तुम श्रीकृष्णमहाराजका चरित्र वर्णनकरो जासे जीवका कल्याणहो यह सुन श्रीव्यासजीने नारदमुनिसे कहा जाको वेद भेद नहीं जानता प्रमाण शेषसंहितामें याम् "जानंति नैव गतिं यस्य श्रुतिपुराणंब्रह्मेश्वरादि यत्नादेकरोति ध्यान" इत्यादिसे सिद्धहुआ कि जाके चारित्रको वेद नहीं जानते न ब्रह्मा महादेवके ध्यान में आते ताको हम कैसे वर्णन करें यह सुन श्रीनारदमुनिने व्यासजी महाराजसे कहा कि हमने जो गुप्त रहस्य श्रीनारायणके मुखसे सुनी ताको हम तुम्हारे प्रति चार श्लोकमें कहेहैं सो सावधान हो श्रवण करो तब नारदजीनें चतुःश्लोकी भागवत जासे कहा।

चतुःश्लोकी भागवत।

श्लोक—ज्ञानं परमगुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्।
सरहस्यं तदंगं च गृहाण गदितं मया ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीनारायणहिरण्यगर्भ प्रति बोलेकि अनुभव सहित तथा रहस्यसहित परम गुह्य ये ज्ञानमें तुमसे कहताहूं सो तुम ग्रहणकरो यह कल्याणका हेतुहै।

श्लोक—यावानहं यथाभावो यद्रूपगुणकर्मकः।
तथैव तत्त्वविज्ञानमस्तु ते मदनुग्रहात् ॥ २ ॥

अर्थ—जैसे मैं अपरिच्छिन्न हूं ऐसेही मेरा सच्चिदानंदरूप तिस्में मेरेमें सर्व-सत्त्वादिक गुण हैं तैसाही मेरा जगत् उत्पन्न करना ये मेरा कर्म है जैसा मेरा स्वभाव है तैसी तत्त्वविज्ञानसहित मेरी निर्हेतुक कृपा है।

श्लोका—अहमेवासमेवाग्रे नान्यद्यत्सदसत्परम्।
पश्चादहं यदेतच्च योवशिष्येत सोस्म्यहम् ॥ ३ ॥

भावार्थ—अब भगवान् ज्ञान कहेहैं सत् कहे चेतनरूपी आत्मा और असत्य जे जड़ पदार्थरूपी माया ये आत्मासे जुदा है सृष्टिके पहिले मैं एकही था पीछे

आत्मा हमारी छाया ताकी छाया माया है सृष्टिके अंतमें चेतनस्वरूपमायाका नाशकर शुद्धसत्त्व मैं जो तामें प्राप्त होती इस श्लोकमें मायासे भिन्न आत्मा परमात्मा सर्वकारण कहा ।

श्लोक–ऋतेऽर्थं यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि ।
तद्विद्यादात्मनो मायां यथाभासो यथा तमः ॥ ४ ॥

अर्थ–अब आत्मा और माया स्वरूपकहे चेतन चेतन आत्मा विना अप्रकृत मायोपाधि जड हैं इससे आत्मा जुदा सुखदुःखका भाव मायाके संबंधमें हैं ।

श्लोक–यथा महांति भूतानि भूतेषूच्चावचेष्वनु ।
प्रविष्टान्यप्रविष्टानि तथा तेषु न तेष्वहम् ॥ ५ ॥

अर्थ–देखो आत्मा मायाते जुदो और परमात्मा स्वयंप्रकाश चर अचर जड चैतन्य सबमें व्याप्तहै यथा आकाश वायु अग्नि ये घट पट लकुट सबमें व्याप्त हैं ऐसेही परमात्मा व्याप्त सो नारायणोपनिषद्में लिखा प्रमाण– "अंतर्बहिश्च तत्सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः" इत्यादि इस श्लोकमे नारायण अपनेको सबमें व्याप्त कहा ।

श्लोक–एतावदेव जिज्ञास्यं तत्त्वजिज्ञासुनात्मनः ।
अन्वयव्यतिरेकाभ्यां यत्स्यात्सर्वत्र सर्वदा ॥ ६ ॥

अर्थ–ऊपरका कहा प्रमाण और सबमें मिला और सबसे भिन्नहूं ऐसा मेरे रूपको जो निरंतर है ताको एक तत्त्वज्ञानी पुरुषही जाने और कोईके यहां याने केवल विद्याके बलही नहीं जानते यह गुरुद्वारा जाना जाता है ।

श्लोक–एतन्मतं समातिष्ठ परमेण समाधिना ।
भवान्कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित् ॥ ७ ॥

अर्थ–तीनश्लोकते छठेतक चतुःश्लोकी भागवत हिरण्यगर्भ ब्रह्माने कही सो तुम चित्त एकाग्र कर ये मेरो मत ग्रहण कर सृष्टि उत्पत्ति नाशमें तुम्हें कभी मोह नहीं होगा तू एक मेराही चिंतनकर इत्यादि

सो याप्रकार हेव्यासजी हमारे प्रति कही सो हम तुमकूं सुनाई यह जान अब अवताररहस्य लीला भगवत्की कथन करो जासे प्राणिनको श्रवण कर कल्याण हो यह सुन व्यासजी परम आनंद हुए और श्रीव्यासजीने नारदको प्रणामकिया सो हे शिष्य याप्रकार नारदजी व्यासजीको उपदेश दे अब हरिगुणगानकरते ब्रह्मलोकको गये यहां श्रीव्यासजीने नारदके उपदेश पाय श्रीमद्भागवतमहापुराण रचा ताके श्रवणसे मनुष्यका जन्ममरण छूटजाता सो अठारह हजार ग्रंथ है सो देखो शिष्यको विना गुरुके तत्त्वरहस्यका बोध नहीं होता जैसे हजार पत्थरके टूकमें मिला पडा हीरा ताको जौहरी भिन्न करता सो ये सब गुरुद्वारा प्राप्त है।

श्लोक–तस्माद्गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम्।
शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रये ॥ ८ ॥

भापार्थ–हेशिष्य जो जिज्ञासु संसारसे निवृत्त हुआ चाहै तो प्रथम गुरु कर फिर कुछ काल गुरुके समीप रह उनकी सेवाकर उनसे सदसत्पदार्थका निश्चयकर शब्दके परे जो ब्रह्म ताको गुरुद्वारा जानना ये जिज्ञासुके धर्म हैं और गुरु भी अधिकार जान तत्त्वउपदेश दे विना गुरुके अंतर्यामी अंतसमें हैं विन लक्ष कराये नहीं जानाजाता यथा गुप्तधन गृहमें गडाहै परताके भेदी विना नहीं प्राप्तहोता और पुरुष मारामारा फिरताहै तैसेही विना सद्गुरु अंतर्यामीकी प्राप्ति नहीं वहां एक वनियाँका (इतिहास)-किसी नगरमें एक वनियाँ था जो उसके पिता बाबा धनी थे बाद उनके मरनेके वह लेरका जो कुछ धन था सब खर्चकर डाला एक रोज बहुत तकलीफ बैठे विचार किया कि लावो अपने पिताके कागज लिखे देखें सायद कहीं कुछ तगादा हो तो वही लेकर निर्वाह करें यह विचार कर जो कागज खोले तो तिनमें एक जगह लिखा था कि अमुकमास अमुकपक्ष अमुकतिथि अमुक घडीदिन चढे पूर्वकी तरफ दो लक्ष मुद्रा (रुपये) शिखरमें धरेहैं यह बाँच मजूर बोलाय शिवालाकी शिखर

खुदवाने लगा इतनेमें कोई बुद्धिमान् निकला उसने पूंछा कि यह शिवालाकी शिखरको काहे खुदावते यह सुन वनियाँने कहा मेरे पिताकी वहीपर लिखाहै कि द्वारेके शिवालाकी शिखरमें दो लाख मुद्रा गडेहैं यह सुन कागज मँगाय बाँच कहा कि एक महीनेबाद हम बताय देंगे शिवाला न खुदावो वह चुप रहा जब वो मास दिन वडी आई तब उसने वही शिखरकी छाहीं पृथ्वीपर परी तब उसमेंसे खुदवाय दोलाखमुद्रा देदिये विचारो कि अज्ञानी और ज्ञानवानमें इतना भेदहै सो हे शिष्य ऐसेही परमात्मा सबमें है परन्तु लक्ष करानेवाले विना सद्गुरुके नहीं प्राप्त होता तासे गुरुके शरणमें रहना।

भागवते।

श्लोक–नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान्भवाब्धिं न तरेत्स आत्महा ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो यह मनुष्यदेह अतिसुलभ हुआहै और अतिदुर्लभहै सो जीर्ण नौकाके सदृशहै और यह संसारसमुद्र महान विकराल जिसमें संकल्पविकल्प लहर उठतीं कामक्रोधादिक येही मकरादि जीवहैं मोह-रूपी सेवार ममता कीचड ताहूमें रोगादि कालके प्रेरक तुफान आयाकरते हैं। तामें यह जीर्ण नौकापर कोई एक पुरुष बैठा तापै सुख दुःख पाखा-नरूपी लदा तौ कहो कैसे पारजाय सकती ऐसी नौकाका कर्णधार (खेनेवाला) गुरुही पार लेजासक्ता युक्तिसे सत्संग सोई पालटंगा ज्ञानकी वल्ली भी नहीं जहाँ लगती तहां भगवद्ध्याने करि यासे खेय पार करतेहैं।

गीतायाम्।

श्लोकः–आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित्।
न मर्त्यबुद्ध्याऽसूयेत सर्वदेवमयो गुरुः ॥

भापार्थ-हेशिष्य देखो भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र महाराजने निजमुखसे अर्जुनसे कहा हे अर्जुन मैंही आचार्य याने गुरुरूप धारणकर तत्त्वउपदेश देताहूं ताते

---

१ यह नाम्ना औजार।

गुरुके विषे मनुष्यभावना नहीं तो करना नहीं प्रायश्चित्त करना होगा तासे मैं आचार्यरूपसे धर्मके स्थापनार्थ अवतारधारण करताहूं । पुनः गीतायाम् ।

श्लोक—यदायदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥

भाषार्थ—याने हे अर्जुन जबजब ज्ञान और धर्मका लोप होताहै तबतब मैं आचार्यरूप धारणकर ज्ञानोपदेशद्वारा रक्षा करताहूं ताते गुरुको मेराही रूप जान सेवनकर हेशिष्य ऐसे श्रीकृष्णमहाराजनेभी अर्जुनको गुरु करनेके हित उपदेश दिया ताते शिष्यकी गुरुविना गति नहीं सो पुनः कहतेहैं ।

श्रुतौ ।

श्लोक—यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मनः ॥

भाषार्थ—हेशिष्य ! देखो जिज्ञासु जिस देवताकी उपासना करे तैसाही गुरुभी उसी देवताको उपासक जो गुरु हो तासे उपदेश ले तब वो गुरु उसका तत्त्व अर्थ प्रकाश करैगा जैसे कोई स्थान ग्रामको जाया चाहो तो वहांका हाल और मार्ग वही कहेगा जो वहांका हाल जानताहै और नहीं बतासकता ऐसेही अपने इष्टदेवका धाम गुरुही द्वारा भेद मिलैगा ।

श्लोक—यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा शास्त्रं तस्य करोति किम् ।
नयनाभ्यां विहीनस्य दर्पणं किं करिष्यति ॥

भाषार्थ—शिष्य देखो विना गुरुके उपदेशरूपी ज्ञान विया पढ शास्त्र अवलोकनकर अर्थका अनर्थ समुझ नाना तरहके कुतर्क वादविवाद करने लगते शास्त्रमें जो तत्त्वरहस्य बातें विना गुरु नहीं मिलतीं तहां कहे कि जैसे नेत्रविहीन पुरुष दर्पण ले तामें अपना प्रतिबिंब देखा चाहताहै यही उसकी अज्ञानता है ।

दोहा—नेत्रहीनको सुख नहीं, जिमि ढिंग अद्भुत नारि ।
प्रियादास सद्गुरुविना, दिखत शास्त्रको सार ॥

ताते गुरुद्वाराही शास्त्र पढ ताके आशयको ग्रहण करै ।

महाशिवसंहितायाम् ।

श्लोक—गुकारस्त्वंधकारे स्याद्रुकारस्तन्निरोधकः ।
अंधकारविनाशित्वाद्गुरुरित्यभिधीयते ॥

भावार्थ—हेशिष्य देखो गुरु ऐसा नाम ये दोअक्षरहैं 'गु' 'रु' सो गु-नाम अंधकारका और रु-नाम प्रकाश सो जो अविद्या अज्ञानतारूपी अंधकारको हटावे सो गुरु यावत् अंधकार नहीं हटता तावत् कार्य नहीं बनता जैसे रातको सब कार्य बंद होजाते पुनः प्रातःकाल सूर्य्यके उदयसे अंधकार नाश होजाताहैं, और मनुष्य अपने कार्यमें प्रवृत्त होताहै । पथिक मार्गचलते तैसेही जन सद्गुरुने ज्ञानोपदेश दे मोह अंधकार अंतःकरणसे दूरकिया तब भगवत्प्राप्तिके मार्ग पै जिज्ञासु चलनेलगता तासे गुरु श्रेष्ठ सर्वोत्तम है ।

तत्त्वसागरे ।

श्लोक—राज्ञश्चामात्यजा दोषा पत्नीपापंच भर्तरि ।
तथा शिष्यकृतं पापं गुरुः प्राप्नोति निश्चितम् ॥

भावार्थ—हेशिष्य देखो संसारमें सामान्य मनुष्यादिकनमें जैसे स्त्रीका पाप पुरुष याने उस्के पतिद्वारा उद्धारहै तैसेही जो गुरु ज्ञानवान् अनुष्ठानरत याने परमात्माके चरणोंमें अहर्निशप्रीति है वो शिष्य कैसाभी मंदबुद्धिवाला हो गुरु ताका उद्धार करदेताहै जैसे संसार सोई कूप तामें अज्ञानी पुरुष लोटा परा तामें गुरु काढनेवाला शास्त्रोक्त ज्ञान सोई डोरी कृपारूपी कांटा तामें निभाय निकामलेताहै ताते गुरुके विना संसारते निकसना कठिन है तावे गुरु करना चहिये ।

ब्रह्मांडपुराणांतर्गतोत्तरगीतायाम् ।

श्लोक–यावद्गुरुर्न क्रियते सिद्धिस्तावन्न लभ्यते ।
तस्माद्गुरुर्हि कर्तव्यो नैवसिद्धिर्गुरुं विना ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो यावत् गुरु न बतावेगा तावत् कोई कार्य सिद्ध नहींहोता जैसे जंगलमें चन्दन है और भिल्ल ताके गुणको नही जानते उसे इंधनकर बारतेहैं जद किसीने उसका गुण बताय दिया तो आदरपूर्वक माथेमें लगाय उस्की सुगन्धते मग्न रहतेहैं तैसेही कोई अनुठान करो विना गुरुके बिताये सिद्ध न होगा ताते गुरुद्वाराही कार्यकरै ।

श्लोक–एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुं नैव मन्यते ।
श्वानजन्मशतं गत्वा चांडालेष्वपि जायते ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो जो एक अक्षरभी बतावे सोभी गुरु है फिर सन्मार्गका बतानेवाला तो परम पूज्य गुरुहै जो पुरूप गुरुका भाव न मान उनके विपे गुरुताका सम्मान नहीं करते वे कोटिन जन्म श्वान (कुत्ता) चांडालकी योनि (शरीर) धारणकरतेहैं ताते जिज्ञासू प्रीतियुतहो गुरुकी सेवाकर यही तेरा सर्वोपरि उपाय संसारसे निवृत्तिकाहै ।

मणिरत्नमालायाम् ।

श्लोक–अपारसंसारसमुद्रमध्ये निमज्जतो मे शरणं किमस्ति ॥
गुरो कृपालो कृपया वदैतद्विश्वेशपादाम्बुजदीर्घनौका ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो यह संसारसमुद्र रूप जाका पारावार नहीं सो ताके पार जानेको ऐसे समुद्रमें एक गुरुके चरणकी शरण सोई नौका ताके अवलम्बसेही एक भले पार जाय नही तो और उपाय नहीं ताते शिष्य गुरुके चरणकी सेवा करे ते विना परिश्रम भवसमुद्र पार होजायगा इति ।

उपदेशचिन्तामणौ ।

श्लोक–पितृगोत्रं यथा कन्या स्वामिगोत्रेण गोत्रिका ।
श्रीकृष्णभक्तिमंत्रेणाच्युतगोत्रेण गोत्रिकः ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो जबतक कन्याका विवाह नहीं होता तबतक कोई कर्म करती तो पिताके कुलगोत्रहीका नाम उच्चारणकरतीहै जब विवाह हुआ तब पतिके कुलगोत्रका नाम उच्चारण होता ऐसेही यह पुरुष जबतक भगवद्भक्ति गृहणकरता और गुरुसे श्रीकृष्णमन्त्र उपदेश लेता तबसे ता पुरुषको अच्युत याने अविनाशी गोत्र होताहै तैसेही द्वितीय जन्मका भाव गुरुसेहै ।

आगमे ।

श्लोक–कृष्णमंत्रोपदेशेन मायोदरमुपागतः ।
कृपया गुरुदेवस्य द्वितीयं जन्म कथ्यते ॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो जो पुरुष गुरुद्वारा श्रीकृष्ण मंत्र ले ताको आराधन सेवन करताहै ताका किसीसमयते दूसरा जन्म हुआ और पूर्वके कर्म भले बुरे ताको बाधा नहीं करसकते यह बात भविष्यपुराणमें लिखी ताको एक इतिहासद्वारा प्रमाण कहे (इतिहास) एक चोर एक साहूकारका धन ले भगा ताके पीछे साहूकार और राजाके दूत ढूंढने चले और वह चोर जहां एक महात्मा श्रीकृष्णचरित्रामृतका उपदेश देरहेथे तहां आय अपनाभी सुननेलगा तामें प्रसंग निकस्यो कि जो पुरुष गुरुसे कृष्णमंत्र लेताहै ताका दूसरा जन्म मानाजाताहै चोरने यह सुन विचारा कि हमें तो दोपहर हुए महाराजके मुखते हरिचरित्र सुनतेभये यह विचार था इतनेमें साहू और राजाके दूत आय पकड़लिया तहां राजाभी बैठेथे न्यायमें चोरने कहा कि मैं शपथकर कराहीमें हाथ डालदेताहूं कि इस जन्ममें मैंने किसीकी चोरी नहीं की अन्य जन्मका तो मैं नहीं जानता यह सुन राजाने कराहीमें तेल भरा आगपै धरादी और चोरने वैसीही द्वितीय जन्मका कहे तब कराहीमें हाथ डाल निकास लिये यह देख राजाने साहूकार तथा सिपाहीनपै क्रोध हो दंडकी आज्ञा दी तत्पश्चात् चोरने राजासे कहा कि कृष्णनामका ये प्रताप है वास्तवमें मैं चोर हूं और यही

साहूकारका धन है परंतु मैंने दो पहर महात्माके मुखसे हरिचरित्र सुना इससे दूसरा जन्म हुआ यह चरित्र देख राजा और प्रजा सब महात्माके शिष्य हो कृष्णमंत्र ले ताके प्रतापते जन्ममरणसे छूट गोलोकवासी भये सो देख शिष्य गुरुका ऐसा प्रताप है इति ।

श्लोक—अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो कैसा परमात्मा है जो अखंड अविनाशी चर कहिये जीवधारीमात्रमें व्याप्त और अचर जडपदार्थ पाषाण वृक्षादि इनमें व्याप्त होरहाहै जैसे तिलनमें तेल काष्ठमें अग्नि परंतु विना आत्मज्ञानद्वारा नहीं जाना जाता सो आत्मज्ञान तथा अलभ्य पदार्थकी प्राप्ति यह गुरुकी कृपासे होता ताते हम गुरुके चरणनको बार २ वंदन करतेहैं इति ।

शिवसंहितायाम् ।

श्लोक—भवेद्वीर्यवती विद्या गुरुवक्त्रसमुद्भवा ।
अन्यथा फलहीना स्यान्निर्वीर्य्याप्यतिदुःखदा ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो महादेव पार्वतीजीसे कहतेहैं कि गुरुद्वाराही जो विद्या प्राप्त हो सोई फलदायक है अन्यथा तो शास्त्र देख साधन करना गुरु न करना ये सब क्लेशकारिणी और कलंकी हैं जैसे विना विवाह क्वारी स्त्रीके पुत्र हुआ ताको जगतमें निरादर होताहै तासे गुरुद्वाराही विद्या सीखनी यह बातका प्रमाणभी सुनो इति ।

गीतायां षोडशेऽध्याये ।

श्लोक—यः शास्त्रविधिमुत्सृज्य वर्तते कामकारतः ।
न स सिद्धिमवाप्नोति न सुखं न परां गतिम् ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो श्रीकृष्ण महाराजनेभी अर्जुनसे कहाहै कि गुरुके मुखसे निकसी विद्याकाही ग्रहणकरे इसप्रकारसे जो धर्मशास्त्रकी विधि ताको परित्यागकर अपनी इच्छानुसार जो पुरुष किसी कार्यका अनुष्ठान करताहै

न तो ताको फल मिले न परमगति मिले उसका श्रम निष्फल है इस्से जो कार्यकरे वो गुरुसे उसकी विधि पूंछ कर करै तहां कहेहैं।

अमानसखंडे।

श्लोक–मरुज्जयो यस्य सिद्धस्तं सेवेत गुरुं सदा।
गुरुवक्त्रप्रसादेन कुर्यात्प्राणजयं बुधः॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो अमानसखंडमें महादेवजीने पार्वतीसे कहा कि साधकको चाहिये कि गुरु उत्तम जो प्राणायामद्वारा प्राण जीते हों तिसकी सेवा कर उस्से अपने प्राणकी जयकी राह पूंछे जैसे गुरु बतावे वैसे कर प्राणोको अपने वशकर मननिग्रह करे विना गुरुको जो पुरुष करता वो लाभके पलटे हानिको प्राप्त होताहै।

सूतसंहितायाम्।

श्लोक–वेदान्ततर्कोक्तिभिरागमैश्च नानाविधैः शास्त्रकदंबकैश्च।
ध्यानादिभिः सत्करणैर्न गम्यश्चिन्तामणिरेकगुरुं विहाय॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो सूतजीने वामदेवसे कहा कि योगाभ्यासी विना वेदांत तर्कमीमांसादि षट्शास्त्र पठन वा अवलोकन द्वारा जो बुद्धिद्वारा प्राणायामादिक चिंतामणिसम सोभी विना गुरु त्याज्य है।

योगचिंतामणौ।

श्लोक–आचार्य्याद्योगसर्वस्वमवाप्य स्थिरधीः स्वयम्।
यथोक्तं लभते तेन प्राप्नोत्यपि च निष्कृतिम्॥

भावार्थ–प्रथम हेशिष्य गुरुद्वारा योगका मार्ग निश्चयकर पश्चात् अभ्यासका जो साधन करेगा तो ताका श्रमफल मिलैगा सो ताका प्रतिपादन छान्दोग्यउपनिषद (आचार्य्यवान्पुरुषो वेद) याने वेदका तत्त्व जाननेवाला पुरुष वेदका अंग है इति।

वायुपुराणे।

श्लोक–यथा खनन्खनित्रेण नगे वारि निगच्छति।
तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रूषुरधिगच्छति॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो जैसे कुदारिसे पृथ्वी खोदते खोदते पुरुपको निर्मल जल प्राप्त होताहै तैसेही जो आत्मप्राप्तिविद्या गुरुके हृदयमें है ताको जिज्ञासु गुरुकी सेवाकर प्रसन्नतासे ले लेगा जैसे विना कुदारी पृथ्वीसे जल नहीं निकलता तैसे विना गुरुसेवा आत्माका दर्शन नहीं होता ताते गुरुसेवा मुख्य है ।

स्कंदपुराणे ।

श्लोक—गुरुरादिरनादिश्च गुरुः परमदैवतम् ।
गुरोः परतरं नास्ति तस्मात्सम्पूजयेद्गुरुम् ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो गुरु आदिहै अनादि है परम देवता है गुरुके शिवाय और कोई जीवका उद्धारक नहीं सो तासे सर्वोपरि गुरु परमपूज्य है अब आगे गुरुलक्षण ।

अथ गुरुलक्षणं—पद्मपुराणे ।

श्लोक—महाभागवतश्रेष्ठो ब्राह्मणो वै गुरुर्नृणाम् ।
सर्वेपामेव लोकानामसौ पूज्यो यथा हरिः ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो गुरुके लक्षण मैं तुमसे कहताहूं सो सावधान हो सुन जिनमें ये लक्षण हों सो गुरु योग्य है यथा पूज्यमान भगवद्भक्त वैष्णव ब्राह्मण हो संसारमें पूज्य सो ऐसा गुरु हरिसम पूज्य है । पुनः—

श्लोक—शाव्दब्रह्मपरब्रह्मनिष्णातो ध्यानतत्परः ।
शिष्ये पुत्रतुल्यदृष्टिर्दयालुर्निर्मलाशयः ॥

भापार्थ—गुरु कैसा हो परब्रह्म परमात्माका अष्टयाम ध्यानमें तत्पर हो और शिष्यको पुत्रतुल्य जाने दृष्टिसमता दयालुता धर्ममें प्रीति निरालस्य क्रोधरहित ।

श्लोक—वर्णाश्रममतालंवी संध्योपासनतत्परः ।
सुधीरः संशयोच्छेदी कामक्रोधविवर्जितः ॥
ब्रह्मण्यो वेदतत्त्वज्ञः कुलीनो भक्तितत्परः ।
शिष्योपदेशरसिकः सेवेच्छापरिवर्जितः ॥

भावार्थ–हेशिष्य वर्णमें ब्राह्मण हो चार आश्रममें कोई एकको ग्रहण करेहो संध्या कर्ताहो सुधीहो शिष्यके संशयका छेदनेवाला, कामी क्रोधी न हो ब्रह्मको जानै वेदके तत्त्वको जाननेवाला कुलमें श्रेष्ठ वर्णसंकर न हो भगवत्‌की भक्तिमे प्रीति शिष्यको उपदेश देनेमें अति रसिक हो अपनीसेवा करानेकी इच्छावाला न हो ।

श्लोक–श्रद्धयोपाहृतं यत्तस्पत्रपुष्पफलादिकम् ।
यो गृह्णाति मुदा शिष्यात्संतोपी गुरुरुच्यते ॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो अन्तःकरणशुद्धहो जो शिष्य पुष्पफल लेकै भेंटकरै ताको खुशीहो अंगीकारकरै ये गुरुके लक्षण हैं औरभी कहताहूँ सो सुनो ।

श्लोक–नित्यनैमित्तिकं कर्म यो न द्वेष्टि कदाचन ।
स एव गुरुतां याति वेदमार्गप्रचारकः ॥

भावार्थ–जो नित्यनैमित्तिककर्म याने संध्या तर्पण होम वेदका पाठ उपदेश सोई पूजनीय वेदका मार्ग प्रचारक गुरु ताके योग्य है ऐसा बुद्धिमान् जन कहतेहैं ।

श्लोक–अमान्यमत्सरो दक्षो निरालस्यो जितेंद्रियः ।
अद्वेष्टा पक्षरहितः परनिंदाविवर्जितः ॥

भावार्थ–अहंकारी न हो अमत्सर याने औरको न देख सकना यह जिसमें न हो आलस्यवाला न हो जितेंद्रिय याने कामी न हो पक्षापक्षरहित उपदेशदे पराई निंदा न सुने न करे दयालु हो यह लक्षण देख गुरु करै ।

श्लोक–गृहस्थो ब्रह्मचारी वा गुरुस्स्यादुक्तलक्षणः ।
ब्राह्मणेन्दुः स एव स्यादाराध्यो दैवतैरपि ॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो गृहस्थ वा ब्रह्मचारी वा विरक्त वा संन्यासी परन्तु ज्ञानवान् और वैराग्यवान् सन्तोप वा विचारवान् अष्टयाम भगवतके ध्यानमें तत्परहो ।

शारदातन्त्रे।

श्लोक–परोपकारनिरतो जपपूजादितत्परः ।
अमोघवचनः शांतो वेदवेदार्थपारगः ॥

भापार्थ–कैसा गुरु हो कि परोपकारी जप पूजा होम इनमें तत्पर हो और वचन सदा विचार कर कहे शांतप्रकृति चंचलतारहित वेदके अर्थ पर लक्ष्य और वेदांतके विचारमें कालको व्यतीत करे ऐसा गुरु पूज्य है ।

अगस्त्यसंहितायाम् ।

श्लोक–तत्त्वज्ञो मंत्रयंत्राणां मर्मवेत्ता रहस्यवित् ।
पुरश्चरणकृद्धोममंत्रासिद्धप्रयोगवित् ॥

भापार्थ–हेशिष्य पुनः देखो ये लक्षणहों तत्वको जाननेवाला मन्त्रतंत्रका मर्मवेत्ता अन्तसते मोह अज्ञानता विनाश करे प्रयोगद्वाराभी श्रीकृष्णमन्त्र सिद्ध हो अनुष्ठानी हो पाखंडी न हो यह गुरुका स्वरूप है ।

श्लोक–तपस्वी सत्यवादी च गृहस्थो गुरुरुच्यते ।
नैष्ठिको ब्रह्मचारी वा यथा श्रीनारदादयः ॥

भापार्थ–देखो शिष्य गुरु तपस्वी सत्यका बोलनेवाला गृहस्थ हो ब्रह्मचारी हो तो श्रीनारदमुनिसम नैष्ठिक शास्त्र वाक्यका पालन करनेवाला हो धर्मज्ञ दयाकरके युक्त हो और भी बहुत लक्षण परंतु सबका सार एक श्लोकमें ।

श्लोक–उपदेशेषु कुशलः सर्वाङ्गावयवान्वितः ।
तत्त्वबोधाय शिष्येषु सदैवार्द्रितमानसः ॥

भापार्थ–हेशिष्य अब सबका आशय यह एक श्लोकमें कहा पाने उपदेशमें कुशल हो जिसप्रकार जिज्ञासु समझै वही प्रकार उत्तर उसके प्रश्नका दे अनेक दृष्टांतद्वारा लक्ष्य कराय दे और तत्त्वका बोध भले विधि शिष्यको करावे ऐसे लक्षण हों जामें सो विचारवान् ताको गुरुकर अपने उद्धारका यत्न पूंछ ताको विचारे। अब पाखंडी धूर्त हो ताको गुरु न करे सो प्रमाण ।

त्याज्यगुरुलक्षणं तत्त्वसागरे।

श्लोक–कालदंतोऽसितोष्ठश्च दुर्गन्धः श्वासदाहकः ।
बह्वाशी दीर्घसूत्री च विषयादिषु लोलुपः ॥

भाषार्थ–हेशिष्य जामें ये लक्षण हों वाको गुरु न करे नहीं तो शिष्य कल्याणके पलटे नरकगामी होगा, सो लक्षण ये मैलापन दुर्गंध स्वासका रोग पराया भला न चाहै विषयी बकवादी लंपट ये लक्षण-वालेते दूर रहै।

श्लोक–हेतुवादरतो दुष्टो बकवादी च निन्दकः ।
दुष्टलक्षणसंपन्नो गुरुस्त्याज्यो यदीश्वरः ॥

भाषार्थ–विना हेतु वाद करना निंदक गुणरहित दुष्टस्वभाव मशकरा अज्ञानी ये लक्षण हों तो कैसाभी ऐश्वर्य्यपूज्यमान हो परंतु त्यागयोग्य है ।

श्लोक–बहुप्रतिग्रहासक्तो गुरुर्न स्यात्कदाचन ।
तथा कुष्ठादिरोगार्तो गुरुः कार्यो न कर्हिचित् ॥

भाषार्थ–बहुत दानका लेनेवाला और कुष्ठादिक रोग जाके होंय और गुरुताका रोजगार जाके और विद्याकरके रहित उनके शिष्यही द्वारा यही रोजगार ये त्याज्यहैं।

श्लोक–पाखंडिनो विकर्मस्था वैडालव्रतिनश्च ये ।
हैतुकान्बकवृत्तींश्च दूरतः परिवर्जयेत् ॥

भाषार्थ–पाखंडीहो स्वकर्मकरके रहित बिडालसरीखा नम्रभाषी। मतलबी बगुला कैसाध्यान ये लक्षणजामें सो गुरुके योग्य नहीं ताते गुरु विचारकर करे।

श्लोक–नास्तिका दाम्भिकाः पापा लोकनिन्दाप्रधारकाः ।
चरंति धनलोभेन नीचवर्णा सुवेषिणः ॥

भाषार्थ–नास्तिक वेद पुराणका न माननेवाला पापी लोकमें जाकी निन्दा होरही नीच कुलमें जन्म नानाभेष बनाय धनके अर्थ विचरताहै ऐसेको गुरु न करे ।

श्लोक–लोभी च लंपटो द्यूती परद्रव्यापहारकः ।
मूर्खो ज्ञानविहीनस्तु गुरूनेतान्विवर्जयेत् ॥

भाषार्थ–लोभी हो लंपट जुवारी चोर मूरख ज्ञानकरके रहित परसंतापी झूठका बतानेवाला ये लक्षण जामें सोभी त्याज्य है ऐसे पुरुषको गुरु न करै ।

श्लोक–पुंश्चलीपतयः क्रूरा नानामतविधारकाः ॥
शठास्ते दूरतो हेया गुरुत्वेधर्मभीरुणा ।

भाषार्थ–पुंश्चली कहे वेश्याका पति क्रूर याने जाका दुष्टस्वभाव खल याने नीचवृत्ति याने मद्यमांस आहारी मूर्ख इनते सदा दूर रहे गुरुकरना दूर रहो इनके निकट न बैठे या प्रकारके आचरणवाला गुरु न हो ।

शिष्यलक्षण ।

श्लोक–अथातो लक्षणं वक्ष्ये शिष्यस्यापि समासतः ।
बाह्याभ्यंतरभेदेन गुरुर्धर्मार्थसाधकः ॥

भाषार्थ–हेजिज्ञासु ! अब शिष्यके लक्षण सुनो ये लक्षण शिष्यमें हों तो ताको उपदेश दे नहीं तो गुरु पातकी होगा अंतर बाहिर साफ हो कपट करके रहित हो धर्ममें रुचि गुरुमें प्रीति गुरुधर्मका पालन करनेवाला ऐसा शिष्य चाहिये ।

श्लोक–मिथ्याभूतं जगत्सर्वं सत्यस्तु परमेश्वरः ।
इति निश्चयवान्धीरो मुमुक्षुः शिष्य उच्यते ॥

भाषार्थ–हे शिष्य मुमुक्षु ऐसाहो जगत् जो संसार ताको और ताके व्यवहारभी सब स्वप्नावस्थाके सुखवत् नाश मानताहै परमेश्वर एक केवल सत्य है ऐसा जो बुद्धिवान्‌को निश्चय है सोई शिष्य योग्य है ।

श्लोक–दुर्लभं मानुषं देहं ज्ञात्वा हीनं क्षणेक्षणे ।
लोकद्वैतविरागी यः स शिष्यो गुरुभक्तिमान् ॥

भाषार्थ–हेशिष्य देखो शिष्य ऐसा चाहिये जो यह विचार करताहो कि, यह मनुष्यतनु अतिदुर्लभहै परंतु सो भी क्षणप्रति क्षीण होता जाता है दूसरे

दोनो लोकसे वैराग्य याने मृत्युलोकमे तो दुःख होनेसे वैराग्य होताहै पर स्वर्ग लोकके भोग श्रवणकर तिनमेंभी प्रीति नही सोई शिष्य गुरुनिष्ठ होगा ।

श्लोक—महापङ्कच्यः समुद्धर्ता ब्रह्मतत्त्वप्रदर्शकः ।
गुरुरेवेति निश्चित्य गुरुधीः शिष्य उच्यते ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो ब्रह्मतत्त्वका जाननेवाला गुरुही है ऐसा जानने वाला और गुरुनिष्ठ हो भगवद्भक्त हो बुद्धिमान्हो ।

श्रीभागवते ।

श्लोक—अमान्यमत्सरो दक्षो निर्ममो दृढसौहृदः ।
धैर्यवानर्थजिज्ञासुरनसूयुरमोघवाक् ॥

भापार्थ—अमानी कहे मानापमान करिके रहित तथा मत्सरताको दूरकरै मोहकरके रहित दृढ धीरजवान्हो और तत्त्वार्थका जिज्ञासु सत्य वाक्य बोल-नेवाला हो ।

श्लोक—जायापत्यगृहक्षेत्रस्वजनद्रविणादिषु ।
उदासीनः समं पश्यन्सर्वेश्वर्यामिवात्मनः ॥

भापार्थ—जाया और पुत्र घर राज पाट भाई बंधु इनमें चित्त उपराम और वृत्ति उदासीनता सर्वेश्वर्यकी सदृश चिंतवन अहर्निश जाकी ऐसी वृत्ति सो शिष्य है ।

गोतमीतन्त्रे ।

श्लोक—शिष्यः कुलीनः शुद्धात्मा पुरुपार्थपरायणः ।
अधीतवेदः कुशलः पितृमातृहिते रतः ॥

भापार्थ—कैसा शिष्य हो कुलीन हो अंतःकरण शुद्धहो कपटी न हो पुरु-पार्थमें परायण हो वेदको जानता हो माता पिताका भक्त हो और विचारवान् हो उपदेश पाय ताको मननकरै ऐसे शिष्यको उपदेशसे गुरुका मान है ।

मानसदीपिकायाम् ।

श्लोक—धर्मविद्धर्मकर्ता च गुरुशुश्रूपणे रतः ।
सच्छास्त्रतीर्थतत्त्वज्ञो दृढदेहो दृढाशयः ॥

भापार्थ–धर्मवान् हो सत्शास्त्र कहे जो भगवत्तत्त्वका जामें निरूपण दृढ-ताहै आस्तिकबुद्धि एक परमेश्वरहीके आश्रय गुरुकी शुश्रूपामें चित्त जिनका।

श्लोक–हितैपी प्राणिनां नित्यं परलोकार्थकर्मकृत्।
वाङ्मनःकायवसुभिर्गुरोर्हितकरः सदा॥

भापार्थ–मनुष्यनका हितैपी याने सबका हितउपदेश देना नित्यपरलोकके अर्थ कर्मकृत् वाङ्मन देह सब प्रकार करके गुरुका हिती ऐसा शिष्य हो।

मंत्रमुक्तावल्याम्।

श्लोक–कामक्रोधपरित्यागी भक्तश्च गुरुपादयोः।
इत्यादिलक्षणैर्युक्तः शिष्यो भवति नान्यथा॥

भापार्थ–याप्रकार जो शिष्य कामक्रोधकरके रहित भक्त गुरुपादारविंदमें प्रीति ऐसे जाके लक्षण सोई शिष्य है वहीको हितउपदेश देना चाहिये।

त्याज्यशिष्यलक्षणमगस्त्यसंहितायाम्।

श्लोक–निन्दका नास्तिकाः क्रूरास्तथा स्वेच्छाविहारिणः।
अश्रद्दधाना विश्वासरहिताः कुलपांसनाः॥

भापार्थ–निंदक नास्तिक क्रूर और अपनी इच्छानुसार विचरना किसीमें विश्वास न रहना असत्कर्ममें रुचि और जुवामें प्रीति ये दोप जिसमें हों ऐसा शिष्य त्याज्य है।

श्लोक–गुरुद्रव्येच्छया सेवी दंभी धर्मध्वजः खलः।
वेदशास्त्रगुरूक्तीनां स्वतर्केण विखंडकः॥ १॥

भापार्थ–गुरुके द्रव्यभोगनेकी इच्छा दंभ दुष्टता वेदशास्त्रमें तर्क करना अपनेको बडामानना ऐसाभी पुरुप त्याज्यहै इससे गुरुकी अपकीर्ति है।

श्लोक–अन्यायोपार्जितधनाः परदाररताश्च ये।
गृहिणीदासरूपाश्च हेया मूढाः श्वपाकवत्॥

भापार्थ–अन्याय याने चोरी बदमाशीकरके धन पैदाकरे पराई स्त्रीमें प्रीति निजस्त्रीके दास मूढ दासकर्म करनेवाला अस्वतन्त्र ये त्याज्यहैं।

श्लोक–इत्यादिभिर्गुणैर्युक्तो यदि साक्षात्पुरंदरः ।
नोचार्य्यः क्वापि शिष्येति मंत्रदाने तु का कथा ॥

भाषार्थ–इत्यादि कहे ऊपरके कहेभये जो गुण होंय ता मनुष्यकी क्याबात पुरंदर जो इंद्र सोभी त्यागयोग्य और मंत्र देना तो पीछे ऐसेको समीप न बैठावे । इति । अब हेशिष्य तोकूं गुरु और शिष्य ऐसे चाहिये ताको एक बुढियाके इतिहासद्वारा तुम्हे समझा कर कहताहूँ ताको एकाग्रचित्त और विचारकर सुनो ।

इतिहास बुढियाका ।

एक बुढियाने अपनी चतुर्थ अवस्था विचार गुरु करनेका विचार किया सो एकदिन एक महात्माकी कथा सुननेको गई तहां गुरुका प्रसंग निकसा कि गुरु विना मनुष्यकी गति नहीं सो गुरु तीन प्रकारकेहैं एक उपकारक जो अज्ञान को उपदेश दे गुरुके पास जाय मंत्रोपदेश कराया उत्तारक वे जिन्होनें मंत्र दिया उद्धारक वे जो सर्वकाल हितउपदेश आत्मतत्त्वनिश्चय सतअसतका लक्ष्य कराते हैं सो तीनोंमें उद्धारकगुरु श्रेष्ठ और भगवत्कृपासे मिलते हैं सोई अज्ञानताभवसागरते पार करतेहैं सो यामकार सुन जो जिज्ञासु परीक्षाकर गुरु करताहै ताका कल्याणहोता यह बात सुन बुढिया निजगृहमें आय एक पोटलीमें कुछ धन बाँध गुरु करनेका विचारकर श्रीवृन्दावनधामकी ओर पयान किया इतनेमें मार्गमें एक महापुरुष मिले तिनके निकटके शिष्य बोले बुढिया तू कहां चली यह सुन बुढिया बोली कि संसारके दुःख छुटानेवाले गुरुकी तलाशमें मैं आई हूं यह सुनसाधकने कहा कि बुढिया तू इनमहात्माकी शिष्य होजाय ये बडे सिद्ध मृतको जिवाय देतेहैं यह सुन चुपहो बुढिया आगे चली इसी प्रकारसे बहुत चमत्कारी मिले परंतु बुढियाने यह पहिलेही सुन रक्खाया कि चमत्कारी याने रसायन इत्यादि चाटक नाटकवालोंसे परतत्त्वकी प्राप्ति न जन्म मरणसे छूटना यह विचार करते आगे जाय देखा कि श्रीयमुनाजीके निकट

एक महात्मा जितेन्द्रिय परम अनन्यभक्त नित्य अनुभवसमाधिमें तत्पर श्रीराधाविहारीकी छविछटामें मग्न यह दशा देखि बुढियाने दंडवत् कर पोटली महात्माके आगे धर अतिकरुणायुक्त वचनद्वारा महात्मासे प्रार्थना शरणागतके अर्थ करतीभई कि हेज्ञानसागर कृपानिधान हमें संसारके दुःख तपनरूपीसे दुःखी इस अतिजिज्ञासुको हित उपदेशरूपी छायामें निवास दीजै यह सुन प्रथम तो महात्मा चुप रहे फिर सोचकर विचारा कि शरणागतसे न बोलना येभी अहंकारकी प्रबलशक्ति अंतःकरणमें प्रवेश करेगा ऐसा जानि बुढिया प्रति बोले कि तू शिष्य होगी या ये. पोटली द्रव्ययुक्त लाई ताको उपदेश दिवावेगी देख बुढिया जा मायासे बचतीहै सो ताको मूल पोटरीके भीतरका पदार्थ है इसके पीछे शरीरसे प्राणभी चोर भिन्न करतेहैं तासे तू इसे प्रथम गरीबनको बाँट फिर आ यह सुन बुढियाने वैसाही किया और आय महात्माकी दंडवत्की यह देख महात्माने विचारा कि विना परीक्षा उपदेश न देना चाहिये यथा विना पात्रशुद्धि पदार्थ खराब जाताहै तैसेही परीक्षा कर मंत्र दें यह सोच महात्माने विचारा कि ऐसा यत्न करें कि बुढियाके खेदभी न हो यह विचार बुढियासे कहा कि अभी सूर्य्य दक्षिणायन है उत्तरायणमें मंत्र श्रेष्ठ है तबतक ये घटले ये वृक्षोंको सींच जामें बडे हों यह सुन बुढिया घट ले वृक्षोंको सींचनेलगी बहुत दिन बाद विचारा कि इतना श्रम करतीहूँ परंतु वृक्ष हरा नहीं होता इसका कारण क्या फिर देखा कि वृक्षके जडकी मृत्तिका कठोर और कडेसे आच्छादितहै यह विचार एक लोहेकी कुदारी बनाय तासों गोडकर काट साफ किया इतने बाद जल डारना शुरू किया और थोडे कालमें वे वृक्ष फूल फलकर युक्त हुए यह देख बुढियाने महात्मासे निवेदन किया ताको देख बहुत दिनके श्रमका कारण पूंछा तब बुढियाने सब वृत्तांत यथावत् जैसे प्रथम परिश्रम कर फिर लोहेकी कुदारी द्वारा गोडा था सो सब कहदिया यह सुन महात्मा बोले देख बुढिया यही मोक्षका कारण ज्ञान है

श्लोक—इत्यादिभिर्गुणैर्युक्तो यदि साक्षात्पुरंदरः ।
नोच्चार्य्यः क्वापि शिष्येति मंत्रदाने तु का कथा ॥

भावार्थ—इत्यादि कहे ऊपरके कहेभये जो गुण होंय ता मनुष्यकी क्यावात पुरंदर जो इंद्र सोभी त्यागयोग्य और मंत्र देना तो पीछे ऐसेको समीप न बैठावे । इति । अब हेशिष्य तोकूं गुरु और शिष्य ऐसे चाहिये ताको एक बुढियाके इतिहासद्वारा तुम्हे समझा कर कहताहूँ ताको एकाग्रचित्त और विचारकर सुनो ।

इतिहास बुढियाका ।

एक बुढियाने अपनी चतुर्थ अवस्था विचार गुरु करनेका विचार किया सो एकदिन एक महात्माकी कथा सुननेको गई तहां गुरुका प्रसंग निकसा कि गुरु विना मनुष्यकी गति नहीं सो गुरु तीन प्रकारकेहैं एक उपकारक जो अज्ञान को उपदेश दे गुरुके पास जाय मंत्रोपदेश कराया उत्तारक वे जिन्होनें मंत्र दिया उद्धारक वे जो सर्वकाल हितउपदेश आत्मतत्त्वनिश्चय सतअसतका लक्ष्य कराते हैं सो तीनोंमें उद्धारकगुरु श्रेष्ठ और भगवत्कृपासे मिलते हैं सोई अज्ञानताभवसागरते पार करतेहैं सो यामकार सुन जो जिज्ञासु परीक्षाकर गुरु करताहै ताका कल्याणहोता यह बात सुन बुढिया निजगृहमें आय एक पोटलीमें कुछ धन बाँध गुरु करनेका विचारकर श्रीवृन्दावनधामकी ओर पयान किया इतनेमें मार्गमें एक महापुरुष मिले तिनके निकटके शिष्य बोले बुढिया तू कहां चली यह सुन बुढिया बोली कि संसारके दुःख छुटानेवाले गुरुकी तलाशमें में आई हूं यह सुनसाधकने कहा कि बुढिया तू इनमहात्माकी शिष्य होजाय ये बडे सिद्ध मृतको जिवाय देतेहैं यह सुन चुपहो बुढिया आगे चली इसी प्रकारसे बहुत चमत्कारी मिले परंतु बुढियाने यह पहिलेही सुन रक्खाथा कि चमत्कारी याने रसायन इत्यादि चाटक नाटकवालोंसे परतत्त्वकी प्राप्ति न जन्म मरणसे छूटना यह विचार करते आगे जाय देखा कि श्रीयमुनाजीके निकट

एक महात्मा जितेन्द्रिय परमअनन्यभक्त नित्य अनुभवसमाधिमें तत्पर श्रीराधाविहारीकी छविछटामें मग्न यह दशा देखि बुढियाने दंडवत् कर पोटली महात्माके आगे धर अतिकरुणायुक्त वचनद्वारा महात्मासे प्रार्थना शरणागतके अर्थ करतीभई कि हेज्ञानसागर क्षमानिधान हमें संसारके दुःख तपनरूपीसे दुःखी इस अतिजिज्ञासुको हित उपदेशरूपी छायामें निवास दीजै यह सुन प्रथम तो महात्मा चुप रहे फिर सोचकर विचारा कि शरणागतसे न बोलना येभी अहंकारकी प्रबलशक्ति अंतःकरणमें प्रवेश करेगा ऐसा जानि बुढिया प्रति बोले कि तू शिष्य होगी या ये पोटली द्रव्ययुक्त लाई ताको उपदेश दिवावेगी देख बुढिया जा मायासे बचतीहै सो ताको मूल पोटरीके भीतरका पदार्थ है इसके पीछे शरीरसे प्राणभी चोर भिन्न करतेहैं तासे तू इसे प्रथम गरीबनको बाँट फिर आ यह सुन बुढियाने वैसाही किया और आय महात्माकी दंडवतकी यह देख महात्माने विचारा कि विना परीक्षा उपदेश न देना चाहिये यथा विना पात्रशुद्धि पदार्थ खराब जाताहै तैसेही परीक्षा कर मंत्र दें यह सोच महात्माने विचारा कि ऐसा यत्न करें कि बुढियाके खेदभी न हो यह विचार बुढियासे कहा कि अभी सूर्य्य दक्षिणायन है उत्तरायणमें मंत्र श्रेष्ठ है तबतक ये घटले ये वृक्षोंको सींच जामें बडे हों यह सुन बुढिया घट ले वृक्षोंको सींचनेलगी बहुत दिन बाद विचारा कि इतना श्रम करतीहूँ परंतु वृक्ष हरा नहीं होता इसका कारण क्या फिर देखा कि वृक्षके जडकी मृत्तिका कठोर और कडेसे आच्छादितहै यह विचार एक लोहेकी कुदारी बनाय तासों गोडकर काट साफ किया इतने बाद जल डारना शुरू किया और थोडे कालमें वे वृक्ष फूल फलकर युक्त हुए यह देख बुढियाने महात्मासे निवेदन किया ताको देख बहुत दिनके श्रमका कारण पूंछा तब बुढियाने सब वृत्तांत यथावत् जैसे प्रथम परिश्रम कर फिर लोहेकी कुदारी द्वारा गोडा था सो सब कहदिया यह सुन महात्मा बोले देख बुढिया यही मोक्षका कारण ज्ञान है

जबतक तूने वृक्षके मूलके तरे साफ नहीं कियाथा न कुदारीसे गोडाथा तबतक जो तुमने जल डारा सो वृथाही गया उस वृक्षकी मूलमें न लगा ऐसेही जिसका अन्तःकरण विषयरूपी कूरासे आच्छादित अतिकठोर विचाररहित ताको उपदेशरूप जल नहीं व्यापै तासे विचार बुहारीसे साफ करे विवेक कुदारीसे अन्तःकरण सोई पृथ्वी ताको गोडै सत्संग थलहा और ज्ञानोपदेशजल भाव तव प्रेमभक्तिरूपी वृक्ष बढेगा तामें मुक्तिफल लगैगा जाके प्राप्त पुरुष जन्म मरणसें छूट जाता और शिष्य तू वाही दिन होगईथी जा दिन घट ले वृक्ष सींचवेमें तत्पर हुईथी इतना विवेक जो कहा सो बाकी था सो जान गई अब गृहमें जाय श्रीराधाविहारीके चरनों का ध्यान करौ यह सुन बुढियाने महात्मा गुरुको दंडवत् कर निजगृहमें आय कुछ काल भगवतकी भक्तिकर जीवनमुक्तिसुख लूट अंतसमयमें नित्यधाम श्रीगोलोकमें निवास किया सो देखो शिष्य जिज्ञासुको चाहिये कि बुद्धिरूपी बुढिया विचाररूपी धन ले विवेकद्वारा परीक्षा कर गुरु कर तिनसे ज्ञानोपदेश ले संसारसे पारहोना कि चमत्कारी गुरु न करे कि हमारे गुरु लखपती हैं या हमारे गुरु जटा बढाये या ठाढे रहते सो इनकी तरफ को न देख ज्ञान वैराग्य कर युक्तसेही शिक्षा ले ताको कल्याण होगा ।

गुरुगीतायाम् ।

श्लोक—गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।
सर्वविश्वनिवासाय तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥

भावार्थ—देखो ब्रह्मा विष्णु महादेवादि ये सब गुरुमूर्ति हैं श्रीदत्तात्रेय जीनेभी चौवीस गुरु कियेथे सो सारवस्तु सबका लियाथा न कि कानमें मंत्र एक उत्तार गुरुहीसे मन्त्र लेना चाहिये और सबसे तो सार उपदेश लेना चाहिये इत्यादि ।

इति श्रीपुनरुभ्दुर्गाप्रसादात्मजभ० र० विद्याभास्कर श्रीशास्त्रसारसिद्धान्तमणौ गुरुप्रकरण सम्पूर्णम् ॥ १ ॥

सत्संगप्रकरणम् ।

हे शिष्य अब एकाग्रमन कर तू सत्संगका माहात्म्य सुन कैसा है सत्संग की दुःखरूपी घामसे बचाता और मनमाने फलका देनेवाला कल्पवृक्ष सत्संग है जो कोऊ देखै सिहाय वो माँगे तो फल देतहै ये बिन कहे अपार जैसे फलित वृक्षके नीचे बैठो तो तामेंसे स्वतएव याने आपही फल गिरा करतेहैं तैसेही सत्संगमें अनेक प्रकारकी वार्ता ज्ञान वा भक्तिका निर्धार सुननेमें आताहै तासे जिज्ञासुको सज्जन महात्माओंका सत्संग अवश्यकरना चाहिये ये वार्ता श्रीकृष्णने उद्धवप्रति श्रीमद्भागवतएकादशस्कंधमें कहीहै ।

भागवते एकादशे ।

श्लोक—यथोपाश्रयमाणस्य भगवंतं विभावसुम् ।
शीतं भयं तमश्चेति साधु सेवेत तत्तथा ॥

भावार्थ—श्रीकृष्णमहाराज उद्धवसे कहेहैं कि हे उद्धव जैसे अग्निके सेवन करनेसे शीतादिकसे कंपित शरीर सुख पाताहै और प्रचंड अग्निसे अंधकार दूर होताहै तैसे संसारके दुःख यही शीत ताको सत्संग उष्णतासे दूर करताहै तहां पुनः कहे ।

श्लोक—निमज्ज्योन्मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायनम् ।
संतो ब्रह्मविदः शांता नौर्दृढेवाप्सु मज्जताम् ॥

भावार्थ—देखो ये संसाररूप घोरसमुद्र दुर्गंधयुत तामें श्वान शूकर कृमी, आदिक योनि ग्रहणकर बूडते उछलते लवमात्रभी सुख नहीं पाते तामें महात्मावोंका सत्संग सोई नौकामें बैठ पार होजातेहैं पुनः ।

श्लोक—अन्नं हि प्राणिनां प्राण आर्तानां शरणं त्वहम् ।
धर्मो वित्तं नृणां प्रेत्य संतो वा बिभ्यतोऽरणम् ॥

भावार्थ—जैसे संसारी जीवोंके प्राणकी रक्षा करनेवाला अन्न यथा शरीरकी रक्षा अन्नसे तैसेही जो पुरुष संसारसे अलग हो मेरा चिंतवन करताहै उसका मैंहीं निर्धारक हूँ तैसे जिज्ञासुका उपाय सत्संगहै अवश्य सेवन करना तो संसारकी बाधा नहीं व्यापती ।

श्लोक–संतो दिशंति चक्षूंपि बहिरेके समुत्थिताः ।
देवता बांधवाः शांताः संत आत्मानमेव च ॥

भापार्थ-हे उद्धव! संतको सत्संगसे सत् असत् पदार्थका भान होजाता जैसे नेत्रहीन अनुमानसे मार्ग चलताहै ताको कांटा विष्टा लगजाता तो ऐसेही नाना प्रकारके दुःखनते बचनेका उपाय महात्माओंका सत्संग कि जिनके वचन ज्ञान-युक्त अंजनरूप लगतेही दिव्यदृष्टि खुलजाती अंतःकरण शुद्ध होजाता जासे आत्माके अनुभवकी सिद्धिहो तासों जिज्ञासु महद्जनोंका सत्संग करे ।

श्लोक–प्रायेण भक्तियोगेन सत्संगेन विनोद्धव ।
नोपायो विद्यते सम्यक् प्रमाणं हि सतामहम् ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! मै निश्चय करके कहताहूं तुमसे याने जो मेरी भक्ति और मेरे प्राप्त्यर्थ मार्ग ढूंढे तो महात्माओंका सत्संग करे विना सत्संगके ये मेरी मायाका आवरण नाश विना मेरे स्वरूप तथा मेरी लीलाका आशय जानेंगे नहीं तो अज्ञानी भ्रमवशपर मेरी लीलामें विपय मानकर तदनुसार वर्तकर नरकगामी होते सो ताको .एक (इतिहास) कोई एक माहात्माका शिष्य परस्त्रीगमनमें अतिलंपट था एक दिन गुरुने कहा कि बच्चा परस्त्री नरकका और संसारमें निंदाका हेतु होतीहै यह सुन शिष्यने कहा कि महाराज श्रीकृष्णजीनें ईश्वर हो सोरा हजारसे क्रीड़ाकी हम तो एक ही दोसे स्नेह किया तो नरक कैसे जायँगे । यह सुन महंत चुप होगये एकदिन जब चेला सोगया तब बाबाज़ीने एक पत्थरकी शिला उठाय ताकी छातीपर धर दी तब वह चिल्ला उठा इतनेमें और मनुप्य आय शिलाका कारण पूंछा तब महंतजी बोले कि यह कहताहै कि कृष्णचंद्रने सोरा हजारसे क्रीडा की तो हम दो चारसेभी न करें तो श्रीकृष्ण महाराजने तो गोवर्धननखपर सातरोज धारण किया ये सातपहरही शिला छातीपर धरेरहे यह सुन शिप्यने हाथ जोड प्रार्थना की कि मेरा अपराध क्षमा हो अब हमें आपकी कृपाने ज्ञान हुआ तब महंतने शिला

उतारली और शिष्य भगवद्भक्तिमें लीन हुआ. सो ऐसे भगवतके अपराध से बचानेवाला ज्ञानही है सो सत्संगवे होता है. इति ।

भागवते प्रथमे० ।

श्लोक–व्रतानि यज्ञाश्छंदांसि तीर्थानि नियमा यमाः ।
यथावरुन्धे सत्संगात्सर्वसंगाय देहिनाम् ॥

भापार्थ--हे शिष्य ! भगवानका वाक्य है कि, व्रत और यज्ञ तथा तीर्थ वेदका उच्चारण तीर्थ यम नियमका साधन सो ये सब करे परंतु जबतक इनके करेसे तत्त्वप्राप्तिका लक्ष्यकरानेवाला सत्संग है सो प्रथम सत्संगतीर्थमें मज्जनकर अंतर्बाह्यके विषयवासनाके मूल तिनको दूर करे ये शास्त्रसंमत है ।

योगवासिष्ठे ।

श्लोक--यस्मिन्देशे न तत्त्वज्ञो नास्ति सज्जनपादपः ॥
सफलः शीतलच्छायो न तत्र दिवसं वसेत् ॥

भापार्थ--हे शिष्य! देखो वशिष्ठजीने श्रीरघुनाथजीसे कहा कि हे रामजी! जिस देशमें जिस ग्राममें तत्त्ववेत्ता (ज्ञानी) नहीं न कोई सज्जन याने सत्संगी और न दयावान् पुरुप तहां कैसाभी सुख हो तत्त्वजिज्ञासु एक दिन भी तहां वास न करै ।

गीतायाम्।

श्लोक—काम एप क्रोध एप रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥

भापार्थ—हे शिष्य! देखो श्रीकृष्णमहाराजने अर्जुनसे कहा कि, हे अर्जुन! कैसाही ज्ञानी हो परंतु विना सत्संगके नष्ट होजाता है कामक्रोधादि तथा रजोगुण इनके अविद्याके भ्रमरमें पड ज्ञान नष्ट होजाताहै जैसे विना मल्लाहके नावको वायुके उपद्रव तथा जलके भ्रमर ये डुबाय देते जो मल्लाह हुआ तो लंगर डार तूफानसे नाव बचाताहै तैसे सत्संग में जो विचार प्राप्त हुआ तासे संसारबाधा दूरहोवीहै ।

भागवते दशमस्कन्ध उत्तरार्द्धे ।

श्लोक–महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्तेस्तमोद्वारं योषितां संगिसंगम् ।
महांतस्ते समचित्ताः प्रशांता विमन्यवः सुहृदः साधवो ये॥

भापार्थ–हेशिष्य देखो ! विदुरने उद्धवसों कहाहै कि महात्माओंकी सेवा व्यर्थ नहीं विचार कर देखो तो मुक्तिका दरवाजा परंतु जो विचारवान हो सत्संग करे काहेते कि संतजनोंका हृदय अतिकोमल होताहै उनके निकट गये उनके सत्संगसे वे अलभ्यलाभ परमात्माकी प्राप्तिका मार्ग बताते जैसे चंदनके वनमें गये तो वह आपही खुसबोय देताहै तैसे सत्संगमें लाभहै ।

श्लोक–रगहूणैतत्तपसा न याति न चेज्यया निर्वपणाद्गृहाद्वा ।
न च्छन्दसा नैव जलाग्निसूर्यैर्विना महत्पादरजोभिषेकम्॥

भापार्थ–हे शिष्य चहो तप तीर्थ वेदपाठ ज्ञान सूर्यादि देवताओंकी उपासना जलमें शीतकालमें वास करना अग्नियोंमें उष्णकालमें धूनी तापना ऐसे नानाप्रकारका तप विनका जो फल महात्माओंका सत्संग याने उनकी पदरजमें प्राप्तहोना ऐसा सत्संगका प्रभाव है ताते महापुरुषकी सेवा करना । और हेशिष्य भगवतका वाक्यहै कि विना सत्संग संसारसे निवृत्ति नहीं और कुसंगका गुण नरक है जिन्होंने मन वशकर संसारके भोगोंसे चित्त उपराम किया और परमतत्त्व सारूप्य मोक्षके मार्ग पै चलेहैं ऐसे महात्माओंकी पदरजहीसे कल्याण सेवनेवाले का होताहै विचारकर देखो तो तीर्थ संसारी जीवोंको उद्धारक गंगादिक हैं तिन गंगादिक नदियोंका पातक महात्मावोंके चरण स्पर्शसे छूट उद्धार होताहै और गोपिनकी पदरजउद्धवने भगवतसे प्रार्थनाकीहै तो हमसरीखे जीवनकी का कथाहै।

भागवते दशमे० ।

श्लोक–आसामहो चरणरेणुजुपामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ॥
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा
भेजुर्मुकुंदपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो उद्धवजीने श्रीकृष्ण महाराजसे कहा कि आप कृपाकर हमैं श्रीवृन्दावनकी गुल्म लता करो काहेते कि बडे वृक्षनपै रज नहीं पहुंचेगी और छोटेनपै जब आपकी कृपापात्र श्रीव्रजगोपी महाराणी निकसैगी तब उनके पदकी रज उड हमारे ऊपर पड़ैगी तासों हम धन्य मानैंगे इसका यह सिद्धांत जबतक महत्त्वका अहंकार है तबतक महात्माओंका दर्शन नहीं प्राप्त होता पुनः श्रीकृष्णसे काहेको कहा जब श्रीउद्धव गोपिनको ज्ञानका उपदेश देतेथे तब रज (मिट्टी) काहे न ली तात्पर्य्य कि विना भगवतकृपा महात्माका दर्शन नहीं देखो शिष्य उद्धव श्रीकृष्ण महाराजके परममित्र वेभी अपनी गति महात्माओंकी पदरजसे मानी तासे जिज्ञासु सत्संगमें रहै ।

योगवासिष्ठे ।

श्लोक–संगः सर्वात्मना त्याज्यो यदि त्युक्तुं न शक्यते ।
सद्भिरेव प्रयोक्तव्यः सत्संगो भवभेषजम् ॥

भावार्थ–हेशिष्य विचारवान पुरुषको चाहिये कि कुसंग याने विषयी पुरुषोंका संग त्यागना और महात्माओंका सत्संग करना जासे संसारी भयसे बचे तहां एक बनिया और ठगका इतिहासहै एक बनिया मार्गमें जारहाथा कि उतनेमें एक ठगनेभी बनियाका भेष बनाय उसीके संग हो चला कुछ दूर चल उसने चाहा इसे अन्य मार्गसे चोरोंके पास लिवाय जाऊं यह विचारता था कि इतनेमें कोई क्षत्री उसी मार्ग हो कढा बनियेने पूंछा कि अमुक ग्रामको कौन मार्ग है यह सुन छत्री बोला हमारे पीछे आवो यह चोरनका मित्र है सो तुम्हें उनके पास लेवाये जाताथा इति ऐसेही मोह बनमें काम क्रोध येई चोर तिनते आत्मा धन बचावो तासे सत्संग अवश्य करना चाहिये यह बात अन्य ग्रन्थमें ।

पंचदशीमें ।

श्लोक–क्षणसत्संगमार्गेण यः कुर्य्यादात्मचिन्तनम् ।
तन्महापातकं हंति तमः सूर्योदयो यथा ॥

भापार्थ—हेशिष्य देखो पंचदशीके कर्ता विद्यारण्यस्वामीका भी सिद्धांत है कि क्षणभरभी महात्मोंके दर्शन सत्संगसे महापातक जन्म मरण ये छूटजाते हैं और अन्तसमयमें महाअज्ञान तमको नाश करदेते यथा सूर्यका प्रकाश तम कहे अन्धकारको दूर करताहै तहां तुलसीदासनेभी भाषामें कहाहै कि "सतसंगतिमहिमा नाहे गोई॥पुनः।तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत्संग" इत्यादि । अन्योक्ति । सत्संगही मोक्षका मूल । मिटै जन्ममरणादिकशूल । तासे देखो शिष्य सत्संगकी महिमा अपरंपारहै ।

प्रमाण ।

श्लोक–संसारेऽस्मिन्क्षणार्धोऽपि सत्संगः शेवधिर्नृणाम् ॥

अर्थ-इस संसारसे बचनेका उपाय आधी घरी सत्संग महात्मोंका करे इत्यादि प्रमाण पुनः औरहू एक इतिहास मांडव्यराजा आधही घरीमें मुक्तिका अधिकारी हुआ ताका श्रवणकर मैं कहताहूं ।

इतिहास ।

जंबूद्वीपमें भारतवर्षमें महेंद्राचलपर्वतहै ताके निकट एक आनंदनगर था तहांका राजा मांडव्यनाम बडा धर्मात्मा और ज्ञानी और भगवद्भक्त था जिसने अनेकन यज्ञ की और तपके बलसे इंद्रका परम मित्र हुआ इंद्रभी उसे अर्धसिंहासनपर बैठाता था सो एक समय में देवतावोंसे और धूम्रकेतुसे महा संग्राम हुआ सो तहां राक्षसकी प्रबलता देख देवताओंने मांडव्य राजासे उसके मारनेके अर्थ प्रार्थना की यह सुन राजाने उस राक्षससे युद्धकर उसे मार देवताओंको सुखी किया तब देवतोंने राजासे कहा कि हमारे अर्थ आपने बडा श्रम किया अब जो इच्छा हो सो तुम्हारी सेवा करें यह सुन राजाने सोचा कि स्वर्गके वास छोड और क्या देंगे सोभी राक्षसोंसे भययुक्त है सो तासे ऐसी वस्तु मांगे कि जिस्में इनका जी भी न दुखै यह विचार राजाने देवतोंसे पूंछा की प्रथम यह कहिये कि हमारी आयु कितनी शेष वाकी है यह सुन समीपही धर्मराज खडेथे वे बोले कि एक घरी वाकी है वाही समय सनकादिक आये तिनके चरणोंमें पड राजा अपनी आयुकी अवधि

और संसारमें पुनः न आनेके उपायार्थ प्रार्थना की यह सुन सनकादिकोंने राधानाम परममन्त्र श्रवणमें राजाको दिया ता मंत्रके प्रतापसे ताही समय दिव्यरूप धारणकर सबके देखते गोलोकको गया इति । सोहे शिष्य देखो सत्संगका ऐसा प्रताप है तासे सत्संग करना चाहिये ।

वायुपुराणे ।

श्लोक—सदा संतोऽभिगंतव्या यद्यप्युपदिशंति न ।
या हि स्वैरकथास्तेषामुपदेशा भवंति ताः ॥

भाषार्थ—हेशिष्य संतोंके समीप गये उनकी टहलकरनेसे उनके सत्संगसे अवश्य लाभ होगा काहेते कि महात्माओंका हृदय कोमल होताहै दयारूपी चंद्रमा तासे उपदेशरूपी सुधावृष्टि स्वत एव हुआकरती तू नहींभी माँगेगा तौभी उनकी कृपादृष्टिसे तेरा अंतस शुद्धहोगा जैसे रतौंधीवाला नेमकर चंद्रमाको एक घंटे रोज देखे तो ताकी शीतलताते नेत्रोंकी गर्मी शांत होजाती तैसे महात्मोंके सत्संगसे दिव्यदृष्टि खुलजाती है ।

स्कंदपुराणे ।

श्लोक—यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिंचना सर्वैर्गुणास्तत्र समासतेसुराः ।
हरावभक्तस्य कुतो महद्गुणा मनोरथो नश्यति धावतो बहिः ॥

भाषार्थ—हेशिष्य ये मन वृथा धावता जिज्ञासुको श्रीकृष्णभक्तिकी इच्छा हो तो जो जप तपका फल है अंतसकी शुद्धि सो मेरे अनन्यभक्तनको सत्संगही कल्याणका कारण है सो हेशिष्य मनुष्यकी तो बात कहा सत्संगके प्रभावसे राक्षसनको गति भई औरभी वानर स्त्री शूद्रनको तथा तिर्यग् योनि तरगये । प्रमाण—

श्लोक—सत्संगेन च दैतेया यातुधानाः खगा मृगाः ।
गंधर्वा अप्सरा नागाः सिद्धाश्चारणगुह्यकाः ॥

भाषार्थ—देखो सत्संगके प्रभावते दैत्य पक्षी मृग गंधर्व अप्सरा सर्प सिद्ध वैताल यक्ष इत्यादि ।

श्लोक–विद्याधरमनुष्येषु वैश्यशूद्रस्त्रियोऽन्त्यजाः ।
रजस्तमःप्रकृतयो यस्मिन्यस्मिन्युगेऽनघ ॥

भावार्थ–विद्याधर गंधर्वनकी जात मनुष्यनमें वैश्यशूद्र स्त्री तिनमेंभी रजोगुणी वा तमोगुणवाला जैसे युगमें जो प्रगटभये ते सब सत्संगसे तरे ।

श्लोक–बहवो मत्पदं प्राप्ता स्त्वाष्ट्रकायाधवादयः ।
वृषपर्वा बलिर्बाणो यमश्चैव विभीषणः ॥

भावार्थ–बहुतकरके मेरेमें प्राप्त सत्संगकरके हुए जैसे राक्षसोंमें बलि विभीषण बाणासुर यम इत्यादि और बहुत तरे ये मुखिया हैं ताते सत्संगही श्रेष्ठ है ।

श्लोक–सुग्रीवो हनुमानृक्षो गजो गृध्रा वणिक्पथः ।
व्याधः कुब्जा व्रजे गोप्यो यज्ञपत्न्यस्तथा परे ॥

भावार्थ–वानरोंमें सुग्रीव हनुमान् ऋक्षोंमें जांबवान् गज गृद्धनमें जटायु ग्राह व्याध स्त्रीनमें कुब्जा व्रजगोपी यज्ञपत्नी अहिल्या शबरी इत्यादि सत्संगसे तरीं ।

श्लोक–ते नाधीतश्रुतिगणा नोपासितमहत्तमाः ।
अव्रतातप्ततपसः सत्संगान्मामुपागताः ॥

भावार्थ–ये ऊपरके कहेभये कहो कौन श्रुतिशास्त्रकी गणनामें याने कौन जप तप व्रत इन्होंने किया केवल मेरे भक्तनके सत्संगसेही ये सब मेरेको प्राप्त हुए ऐसा श्रीकृष्ण महाराजने सत्संगका माहात्म्य उद्धवप्रति कहाहै ।

भविष्यपुराणे ।

श्लोक–आदौ श्रद्धा ततः साधुसंगतिर्भजनक्रिया ।
ततोऽनर्थनिवृत्तिश्च ततो निष्ठा रुचिस्ततः ॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो भविष्यपुराणमें नारदजीनें व्याससे कहा कि जब जिज्ञासुकी श्रद्धा भगवद्भक्तिकी हो तो सत्संग महात्मावोंका करे जासे भक्तिका रूप जाने भजन नाम नामसंकीर्तनादिद्वारा श्रीयुगुलसरकार राधाविहारीजीके नामका आराधन करे ताते नित्यधाम श्रीवृन्दावनको प्राप्त हो ।

श्लोक–साधवो हृदये मह्यं साधूनां हृदयं त्वहम् ।
मदन्यं ते न जानंति नाहं तेभ्यो मनागपि ॥

भावार्थ–हेशिष्य भगवतने उत्तरगीतामें कहा कि हेअर्जुन तू साधुनका सत्संग कर तब मेरे निज स्वरूपको जानैगो काहेते कि साधुनमें मोमें अन्तर नहीं याने हम वो एक हैं प्रकृत कहे देह भिन्न है और साधुनके हृदयमें मेरा वास और मेरे अन्तरमें साधुनका वास वे साधुनको मेरे विना और कुछ आधार नहीं ताते तू सत्संगकर या प्रकारसों देख अर्जुन परममित्र जिनका रथ भगवतने हांका परंतु संसारसे निवृत्त और मोक्षका उपाय संतोंके संगहीमें बताया ताते जिज्ञासु सत्संग करै ।

नारदपंचरात्रे ।

श्लोक–सत्संगाद्भव निस्पृहः प्रियगुणं श्रीशं प्रपद्यात्मवान् ।
प्रारब्धं परिभुज्य कर्म सकलं प्रक्षीणमायार्णवः ॥

भावार्थ–हेशिष्य देखो नारदजीने यज्ञदेव राजासे कहा कि जिसनें महात्माओंका संग किया और अन्तसमय सत्संगमें प्रीति भई, ताको प्रारब्धकर्म जो तीन प्रकारका सो नष्ट होजाताहै संचित आगामी कर्तृत्व यानें क्रियमाण जो करते हो सो इन तीनोंका फल स्वर्ग और नरक अच्छा हुआ तो स्वर्ग खराब हुआ तो नरकमें वास और इनहींसे तीन ताप पैदा हैं अध्यात्म अधिभूत अधिदैव याने इन तीनोंका सार षट्विकारभी दुःख भोगना उत्पत्ति गर्भमें वास तहां नानाप्रकारके मलमूत्रमें दुःख जायमान याने उत्पत्ति वृद्धि जरा (बुढ़ापा) नाश इनते वचनेका उपाय और मायाके आवरण कहेभये ऊपर मोहजालमें फँसा ता जालको काटनेवाला महात्मोंका संगहीं है याने जैसें किसी जालमें पक्षी फँसाहै ताको मूसाने काट दिया तब वह उड़गया इसीप्रकारसे भ्रमजालसे सत्संगही द्वारा यह जीव पक्षी निकस सकताहै ताते हे शिष्य तूभी संतोंका सत्संग कर और वाके द्वारा

श्रीराधावल्लभके स्वरूपका लक्ष्यकर तिनके चरणोंमें ध्यानकर जीवन्मुक्त सुख लूट अंतमें परधाम श्रीगोलोकमें निवास मिलैगा ताते सत्संग सर्वोपरि है ऐसा शास्त्रका सिद्धांत है ।

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मजअनन्यरसिकप्रियादासकृत श्रीशास्त्रसार सिद्धातमणौ सत्सगप्रकरण सम्पूर्णम् ॥२॥

अथ कर्मप्रकरणम् ३.

हेशिष्य अब तुम मन एकाग्र करके सुनो जिस्से अंतःकरण शुद्ध हो काहेते कि विना अंतःकरण शुद्धभये तत्त्वज्ञानकी धारणा नहीं होवै जैसे मलिन कांचमें प्रतिबिंब नहीं दिखाई देता तैसे अंतरशुद्धि कर्मसे होती है सो विना कर्म किये न अंतर न बाहर शुद्ध होता विना अंतरशुद्धि हितउपदेश नही लगता ताते कर्मद्वारा अंतर्बाह्य शुद्धि करे सो कर्म दो प्रकारका है ताको सुनो ।

जाबलोपनिषदि ।

"द्विविधः कर्मकांडः स्यान्निषेधविधिपूर्वकः" अर्थ-द्विप्रकारके कर्मकांड एक विधि और दूसरा निषेध इति ।

ब्रह्मांडपुराणे ।

श्लोक—निषिद्धकर्मकरणे पापं भवति निश्चितम् ।
विधिना कर्मकरणे पुण्यं भवति निश्चितम् ॥

भावार्थ—हेशिष्य कर्म दो प्रकारके शुभ और अशुभ शुभका फल पुण्य स्वर्गादिकोंमें वास और अशुभ कर्म किया तो उसका फल जन्म मरणआदि नाना प्रकारके क्लेश सहने पडतेहैं क्योंकि शारीरकमें व्यासजीने कहाहै कि परमात्माने सृष्टिका निर्वाह उत्पत्ति नाशका करनेवाला कर्मही कहाहै " कर्मैव प्रधानं " फिर भाषामें भी किसी महात्माकी उक्तिहै "कर्मप्रधान विश्व करि राखा। जो जस करै सो तस फल चाखा" इत्यादि वह कर्म तीन प्रकारका है प्रारब्ध, आगामी और संचित इन तीनोंके भोगते २

जो शेष (बाकी) रहा उसके भोगनेके अर्थ यह जीव पंचभूतात्मक प्राकृत स्थूलशरीर धारण करता है फिर इस शरीरसे जो अच्छा कर्म किया तो निवृत्त हुवा और खराब कर्म किया तो पट्विकार युक्त वही मनुष्य शरीर फिर पाया अर्थात् इस कर्मभोगसे कोई नहीं बचा राजर्षि भर्तृहरिजीनेभी कहाहै ।

भर्तृहरिशतके ।

श्लोक–ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितो ब्रह्मांडभांडोदरे
विष्णुर्येन दशावतारगहने क्षिप्तः सदा संकटे ॥
रुद्रो येन कपालपाणिपुटके भिक्षाटनं कारितः
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमेव गगने तस्मै नमः कर्मणे ॥ १ ॥

भापार्थ– हे शिष्य देखो कर्मका ऐसा प्रताप है कि जिस ब्रह्माने कुम्हार की नाई सृष्टि रचना कियाहै अर्थात् जैसे वह बासन बनाताहै ऐसे ब्रह्मा भी सृष्टि रचता है और विष्णु भगवानको अवतारग्रहण करनेवाला किया है महादेवको भिक्षाटन करनेवाला कियाहै और सूर्यको आकाशमें भ्रमायाहै ऐसे कर्मदेवको नमस्कारहै ।

गीतायाम् ।

श्लोक–" अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्" इत्यादि ।

भापार्थ–श्रीकृष्णमहाराज अर्जुनसे कहेहैं कि हे अर्जुन कर्म अवश्यभोगने पडते है शुभहों चाहे अशुभ हों दोनोंका फल यावन्मात्रजीवोंको प्राप्त होता है मेरेको नहीं पुनः ।

भागवते दशमस्कन्धे ।

श्लोक–कर्मणा जायते जंतुः कर्मणैव विलीयते ।
सुखं दुःखं भयं क्षेमं कर्मणैवाभिपद्यते ॥

भापार्थ–हे शिष्य देखो श्रीमद्भागवतमें श्रीगर्गाचार्यने भी नंदरायजीसे कहा है कि यह तुम्हारा पुत्र संसार अर्थात् प्रकृतिसे न्यारा है इस संसारका कर्ता हर्ता कर्म है यह केवल प्रेरकहै जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल भोगनेके लिये इसको शरीर मिलता है कर्मसे जीव पैदा होताहै और कर्ममें ही

लयहोता है और सुख तथा दुःख भय और क्षेम ये संपूर्ण कर्मसे ही प्राप्त होते हैं इत्यादि ।

श्लोक-देहानुच्चावचाञ्जंतुः प्राप्योत्सृजति कर्म च ।
शत्रुर्मित्रमुदासीनः कर्मैव गुरुरीश्वरः ॥

भापार्थ-देखो हे शिष्य इस शरीरको कर्म ही बनाताहै कर्म ही पालताहै कर्महीं नाश करता है कर्म ही शत्रुहै कर्मही मित्रहै कर्मही उदासीन है कर्म ही गुरु है । और "कर्मैवप्रधानंसृष्टेरुत्पत्तिकारणम्" इत्यादि कर्मसे सृष्टि उत्पत्ति होती है इसकारण ईश्वर इससे न्यारा इसका प्रेरक है इसलिये विचारवान् पुरुप फलग्राही नहीं है ।

मनुस्मृतौ ।

श्लोक-ज्ञात्वाऽज्ञात्वा च कर्माणि जनोऽयमनुतिष्ठति ।
विदुपः कर्मसिद्धिस्स्यात्तथा नाविदुपो भवेत् ॥

भापार्थ-ज्ञानी तथा अज्ञानी उन दोनोंको कर्मोंके भोग भोगने पडतेहैं बुद्धिमान् लोग कर्म अर्थात् जप तप कर उसमें सिद्ध फलकी इच्छा नहीं करके उसके फलको प्राप्त हो कर्मोंके बन्धनोंसे मुक्त हो जाते हैं । और अज्ञानी कर्म करता है उसके फलके वश हुवा बंधनमें परजाता है । तहां ज्ञानी और अज्ञानीका दृष्टांत-एक तालावमें निर्मल जल था उसमें एक मणि पडी थी वहां दो पुरुप स्नान करते थे दोनोंने मणि देख उसको लेना चाहा वहां ज्ञानीने विचारा कि न जाने कितना जल हो और भीतर कोई जीव होगा यह विचार जान और लोभ छोड गृहका मार्ग लिया । और अज्ञानी उसमें कूद पडा और कूदते हीं नीचे कीचडमें फँस प्राण गँवाये इति ऐसेही अज्ञानी पुरुप कर्म कर उसके फलरूप कीचडमें फँस अनेक जन्म लेकर सुख दुःख भोगते फिरते हैं । यह नहीं जानते कि स्वर्गादि सुख भी नाशवानहै ।

भाग्द्वानसंहितायाम् ।

श्लोक-कर्मकांडं ज्ञानकांडमिति वेदो द्विधा मतः ।
भवति द्विविधो वेदो ज्ञानकांडस्य कर्मणः ॥

भापार्थ—हे शिष्य देखो वेदमें भी दो मार्ग कहे हैं। एक कर्मकांड द्वितीय ज्ञानकांड तिसमें भी प्रथम कर्मही कहा है क्योंकि जिससे ज्ञानकी प्राप्ति होती है इसलिये अब कर्मका स्वरूप कहतेहैं कि कर्म कितने प्रकारके हैं कौन विधि कौन निपेध केसे कौन किये जातेहैं किनका कौन फलहै।

श्लोक—त्रिविधो विधिकूटः स्यान्नित्यनैमित्तकाम्यतः।
नित्येऽकृते किल्विपं स्यात्काम्ये नैमित्तिकं फलम्॥

भापार्थ—हे शिष्य वे विधिनिपेधवाले कर्म तीनप्रकारके हैं। "नित्यकर्म" "नैमित्तिककर्म" "सकामकर्म" ये तीन प्रकारके कर्म हैं नित्य कर्म "संध्या तर्पण" नैमित्तिककर्म "तीर्थमें पर्वस्नान" सकामकर्म कोई कार्यके अर्थ "अनुष्ठान पुरश्चरण जप यज्ञ" इत्यादि ये ऊपर कहे नित्य नैमित्तिक कर्म न करनेसे पुरुप प्रायश्चित्तका भागी होताहै यथा संध्या तर्पण श्राद्ध गुरुमंत्र आदिका जपइत्यादिभेदके कर्म हैं अबफल।

शिवसंहितायाम्।

श्लोक—द्विविधन्तु फलं ज्ञेयं स्वर्गो नरक एव च।
स्वर्गो नानाविधश्चैव नरकोपि तथा भवेत्॥

भापार्थ—हेशिष्य! अब कर्मोंके फल सुनो अच्छे कर्मोंसे स्वर्गके सुख प्राप्त होतेहैं वे नानाप्रकारके हैं यथा इंद्रलोकमें वास अथवा अल्प थोडे पुण्यसे मर्त्य लोकमें राजा होना ऐसेही नरक नानाप्रकारके हैं यथा मनुष्ययोनि नीच जातिमें जन्म दारिद्य कुष्ठादि रोग तथा सूकर आदि योनिको धारण करना अनेकजन्मोंको धारण करना।

श्लोक—पुण्यकर्माणि वै स्वर्गो नरकः पापकर्माणि।
कर्मबंधमयी सृष्टिर्नान्यथा भवति ध्रुवम्॥

भापार्थ—हे शिष्य! देखो पुण्यकर्मसे स्वर्गादिक प्राप्त होतेहैं और पापसे नरक प्राप्त होता है इसलिये विचारवान् पुरुप इन दोनोंसे भिन्न रहता हुवा कर्म करता हुवाभी फलकी इच्छा न करे क्यों कि सृष्टिका कारण कर्मही है ऐसा

नारदजीनेभी कहा है बृहन्नारद पुराणमें प्रमाण "कर्माधीनं जगत्सर्वम्" इति इत्यादि इस्से जानाजाता है कि परमात्माने सृष्टिका कार्य कर्मके अधीन रक्खा है और आप इनसे न्यारा है ।

श्लोक–पापभोगावसाने तु पुनर्जन्म भवेत्खलु ।
पुण्यभोगावसाने तु पुनर्जन्म भवेत्खलु ॥ १ ॥

भापार्थ–हे शिष्य देखो पापका भोगनेवाला नरकमें वास कर नानाक्लेशोंको भोगताहै और कृमि आदि चौरासी योनियोंको धारण कर पश्चात् पुण्यके फल से स्वर्गलोकमें वास और अप्सराओंके संग विमान पर बैठकर घूमता फिरता है परंतु पुण्य क्षीण होने पर फिर जन्म लेने पडते हैं पुण्यसे कुछ जन्म मरण नहीं छूटता और मोक्ष केवल परमात्माकी भक्ति और ज्ञानसे होता है इस लिये कर्म करे परंतु उनको सामान्यभावसे जाने जैसे स्नान निद्रा चलना फिरना उनमें कोई फलबुद्धि नहीं करता वैसेही शुभ कर्म यज्ञादिकोंमेंभी फलबुद्धि न करे नही बंधन स्वर्गादिका भोग होवेहै यह वृत्तांत गीतामेंभी श्रीकृष्णमहाराजने अर्जुनसे कहा है "क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशंति" अर्थ पुण्य क्षीण होनेपर देवता स्वर्गसे ऐसे निकाल देते हैं कि जैसे मकानका भाडेदार मकानका भाडा न चुकने पर निकाल देताहै ।

श्लोक–स्वर्गेपि दुःखसंभोगो देवांगनादर्शनादध्रुवम् ।
ततो दुःखमिदं सर्वं भवत्यत्र न संशयः ॥

भापार्थ–हेशिष्य ! स्वर्गमें भी ईर्षा द्वेष दुःख हैं । देवांगनाओंकी अप्राप्ति कोई अच्छे विमानपर बैठा कोई ऊंचा कोई नीचा ऐसे परस्पर दुःख मानसिकव्यथा वहां भी जबतक भगवत्की प्राप्ति नहीं होचुके तबतक कर्म फलसे निवृत्त नहीं होता इसलिये भगवत् प्राप्तिसे ज्ञान और कर्मसे बंधन है ।

जाबाल्यसंहितायाम् ।

श्लोक–तत्कर्म कल्पकैः प्रोक्तं पुण्यं पापमिति द्विधा ।
पुण्यपापमयो बंधो देहिनां भवति क्रमात् ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! देखो कर्मके फल दुःख और सुख हैं परंतु, परिणाममें सुख ही अज्ञानके संग दुःख होजाता है विचार कर देखो तो सुखके निवासस्थान वैकुंठादि भी महाकल्पमें नाशको प्राप्त होते हैं । जब ब्रह्मा ही नहीं रहता तब ब्रह्माके रचेहुए लोक कब स्थिररह सकते हैं । इसलिये ही ज्ञानी पुरुष जिन्हें परत्वज्ञानहै वे इन कर्मोंमें नहीं फँसते है ।

श्लोक—तावत्कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्येत यावता ।
मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते ॥ १ ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! श्रीकृष्णमहाराजने उद्धवसे कहा कि हे उद्धव ! तबतक कर्मोंको किये ही जाना उपरामको नहीं प्राप्त होना कि जबतक मेरी कथासुनना आदिमें श्रद्धा नहीं उत्पन्न होवै वह श्रद्धा यह कि मेरी प्रेमलक्षणा भक्तिका प्रेम अर्थात् उन्मादसा चढना देहदशाकी विस्मृति होना ऐसी दशा होनेतक कर्म करना कर्मका त्याग नहीं कर्मके फलका त्याग करना ऐसा शास्त्र कहता है । कर्म अंतःकरणको साफ करताहै जैसे कि काँचपर रज पडनेसे मलिनता होती है और उसको रोज पोंछकर साफ किया जाता है ऐसेही कर्मद्वारा रोज अंतःकरणको साफ राखे क्योंकि अंतःकरण शुद्ध होने पर ज्ञानकी स्थिति होतीहै ।

श्लोक—कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥

. भाषार्थ—हे शिष्य ! जो कर्म वेदोंसे हुये वे वेद परमेश्वरसे हुये ऐसे ही ब्रह्म सबमें व्याप्त है । इस प्रकार यज्ञाधिष्ठाता परमेश्वर यज्ञमें वर्तताहै । इसलिये हे शिष्य अब वे कर्म तुझसे कहताहूँ कि जिनसे अंतर और बाह्य शुद्धि ये दोनों हों प्रथम बाह्य अर्थात् देहशुद्धि यथा दंतधावन और स्नानादिक इसको वैद्यक शास्त्र भी कहता है । " धर्मार्थकाममोक्षाणामारोग्यं मूलकारणम् ।" इति । अर्थ । धर्म अर्थ काम और मोक्ष इन सबका फल भोगनेका मुख्य कारण आरोग्य अर्थात् शरीरकी स्वच्छता स्नानआदिसे

होतीहै । प्रथम प्रातःकाल उठ अपने इष्टदेवका स्मरण करे । यथा- "प्रातः स्मरामि वृषभानुकुमारिकास्यम्" इत्यादि। फिर सूर्य्य तथा पृथ्वीको नमस्कार कर शौच जाय फिर दंतधावन कर स्नान करे तब यह मंत्र पढे और यही मंत्र विश्वामित्रजीने श्रीरामचंद्रजीसे कहा है ।

रामपटले ।

श्लोक-ब्रह्मांडे यानि तीर्थानि करैः स्पृष्टानि ते रवेः ।
तेन सत्येन मे देव तीर्थं देहि दिवाकर ॥
गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिंधुकावेरि जलेस्मिन्सन्निधिं कुरु ॥

भापार्थ--हे सूर्य्य नारायण आपकी दृष्टिमें सब ब्रह्मांडके गंगा यमुना नर्मदा कावेरी गण्डकी सरयू सरस्वती ताम्रपर्णी कृतमाला मानसी गंगा इत्यादि तीर्थ हैं इसलिये इनके जलको अपनी किरणद्वारा मेरे स्नानके जलपात्रमें प्रवेश करो ऐसा कह स्नान करे और देह पोंछ धोती पहिर आसनपर स्थित होवे और तहां यह मंत्र पढे ।

आसनमन्त्र ।

श्लोक--ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥ १ ॥

भापार्थ--हे पृथ्वि मैं आपको प्रणाम करताहूँ क्यों कि तुमने त्रिलोकीको धारण कियाहै पुनः तुम शेषजीसे धारण कीहो इसलिये हे देवि ! हे विष्णुप्राणवल्लभे! कृपाकर मेरा आसन निर्विघ्न धारण करो यह कह पृथ्वीपर जल छिडक आसन बिछावे और उसपर पद्मासन लगाकर बैठे पीछे संतुष्ट हुवा मनुष्य प्रथम शिखाको खोल फिर बाँधे और इस मन्त्रको पढे ।

शिखाखोलनेका मन्त्र ।

श्लोक-ब्रह्मपुत्री शिखा या च ब्रह्मदंस्तपस्विनी ।
सर्वदेवनमस्कारः शिखामुक्तिं करोम्यहम् ॥

भापार्थ-हे सर्वदेवताओ मैं तुमको नमस्कार करताहूं क्यों कि जो यह ब्रह्मपुत्री शिखा है इसके खोलनेमें कोई विघ्न न हो। यह मन्त्र पढकर शिखा खोले और इसको साफ कर फिर बाँधे और यह मंत्र पढे।

शिखाबाँधनेका मन्त्र।

श्लोक-ब्रह्मनामसहस्रेण शिवनामशतेन च।
विष्णुनामसहस्रेण शिखाबंधं करोम्यहम्॥

भापार्थ-ब्रह्माके हजार नाम शिवजीके हजार नाम और विष्णुके हजार नामोंके माहात्म्यसे निर्विघ्न मेरी शिखाका बंधन हो यह कह गायत्री मन्त्र पढ शिखाबंधन करै। पुनः ऊपर यह मन्त्र पढकर कुशासे अपने ऊपर जल सेचन करे।

प्रोक्षणमंत्र।

श्लोक-ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपिवा।
यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं स वाह्याभ्यंतरः शुचिः॥

भापार्थ-यह पढ ऊपर जल छिडक पश्चात् तीन वार आचमन करे और "अनंताय नमः" "अच्युताय नमः" "गोविंदाय नमः" यह पढ फिर दहिने हाथमें जल लेकर संकल्प पढे।

संकल्प।

ॐ अद्य तत्सद्ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जम्बूद्वीपे भरतखंडे आर्य्यावर्तैकदेशांतर्गते कलियुगे प्रथमचरणे पुण्यक्षेत्रे अमुकसंवत्सरे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नोऽमुकनामाहं प्रातःसंध्योपासनकर्म करिष्ये। इति

अब जिज्ञासु पुरुप यह समझे रहै कि इन अमुकशब्दोंसे उसदिन जो संवतसर जो महीना जो तिथि जो वार जो उस मनुष्यका नाम होवे संपूर्ण उच्चारण कर जल जमीनपर छोडदे पश्चात् फिर विनियोग छोडै।

विनियोगोंके चार मंत्र ।

ॐकारस्य ब्रह्मा ऋषिर्गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता शुक्लो वर्णः सर्वकर्मारंभे विनियोगः ॥ १ ॥ सप्तव्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्वृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांस्यग्निवाय्वादित्यबृहस्पतिवरुणेंद्रविश्वेदेवा देवता अनादिष्टप्रायश्चित्ते प्राणायामे विनियोगः ॥ २ ॥ गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्रीछंदः सविता देवता अग्निर्मुखमुपनयने प्राणयामे विनियोगः ॥ ३ ॥ शिरसः प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिपदागायत्रीछंदो ब्रह्माग्निर्वायुः सूर्य्यो देवता यजुः प्राणायामे विनियोगः ॥४॥

अर्थ-ये ऊपर कहे हुए चार विनियोगहैं इनकी यह विधि है कि हाथमें जल लेता रहे और एक एक विनियोग पढ पढ कर अपने सामने छोडता जावे पश्चात् प्राणायाम करे अर्थात् वायुके आने जानेके लिये जो नाकके दो स्वर हैं इनमें दक्षिण स्वरसे चढावे वह पूरक है और वायेंसे उतारे वह रेचक है ऊपर कुछ समय रोके वह कुंभक है ऐसे वायुके चढाने धारण करने और उतारनेके समय गायत्रीका जप करे एक सौ आठ वार न सधे तो चौबीस वार करे अब वह गायत्री लिखता हूं ।

गायत्रीमंत्र ।

ॐभूः ॐभुवः ॐस्वः ॐमहः ॐजनः ॐतपः ॐसत्यं ॐतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्ॐ

अर्थ--इस मंत्रका जप करे पश्चात् सूर्य्यको अर्घ्य देवे ।

सूर्य्यको जल ।

एहि सूर्य्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते ॥
अनुकंपय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर ॥ इत्यादि ।

हे शिष्य ! पश्चात् पितृतर्पण करे सो मैं विधिसे कहताहूं ।

पितृतर्पण ।

प्रथम आचमनकर पश्चात् पैंती पहिरै तीन कुशकी दहिने हाथमें दो कुशकी बांए हाथमें पहिर संकल्प करे ।

अथ संकल्प ।

अमुक संवत्सरे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुक नामांहं देवर्षिपितृतर्पणं करिष्ये प्रथम पूर्वको मुख और बांऐ कंधेऊपर जनेऊ फिर उत्तरको मुख और मालाकी तरह जनेऊ फिर दक्षिणको मुख करे और अपसव्य दक्षिण कंधेऊपर जनेऊ धारण करे इसीप्रकार क्रमसे देव ऋषि तर्पणमें जलविषे यव और चावल पितृतर्पणमें तिल डारे इति ।

ॐब्रह्मा देवः आगच्छतु गृह्णात्वेतं जलाञ्जलिम् । ब्रह्म तृप्यताम् १ । विष्णुस्तृ० १ । रुद्रस्तृ० १ । प्रजापतिस्तृ० । देवास्तृप्यं० १ । छंदांसि तृ० १ । वेदास्तृ० १ । ऋषयस्तृ० १। पुराणाचार्यास्तृ० १ । गन्धर्वास्तृ० १ । इतराचार्यास्तृ० १ । संवत्सरः सावयवस्तृप्य० १ देव्यस्तृप्यं० १ अप्सरसस्तृ०१। देवानुगास्तृ० १ । नागास्तृ० १ । सागरास्तृ० १ । पर्वतास्तृ०१ । सरितस्तृ० १ । मनुष्यास्तृ० १ । यक्षास्तृ० । रक्षांसि स्तृ० १ । पिशाचास्तृ० १ । सुपर्णास्तृ० १ । भूतानि तृ० १ । पशवस्तृ० १ । वनस्पतयस्तृ० १ । औषधयस्तृ० १ । भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृ० १ ।

यह देवतर्पण समाप्त अब मालाकी तरह जनेऊ करे ।

ऋषितर्पण ।

ॐमरीचिस्तृ०२। अत्रिस्तृ०२।अंगिरास्तृ०२ । पुलस्त्यस्तृ० २ । पुलहस्तृ० २ । प्रचेतास्तृप्यताम्० २ । वशिष्ठस्तृ० २ । भृगुस्तृ० २ । नारदादयस्तृप्यं० २ । इति ।

अब भी अंगोछा या जनेऊ मालाकी तहह रक्खे उत्तरको तर्पणकरे ।

ॐसनकस्तृ०२।सनन्दनस्तृ० २ । सनातनस्तृ० २ । कपिल-

स्तृ० २ । आसुरिस्तृ० २ । वोढुस्तृ०२ । पञ्चशिखस्तृ०२।इति ।
अब अपसव्य हो दक्षिणको मुखकर तिल लेकर दिव्यपितरोंका तर्पण करे
ॐकव्यवाडनलस्तृ० ३। ॐसोमस्तृ०३।ॐ यमस्तृ० ३।ॐ अग्निष्वात्ताः पितरस्तृप्यंताम्० । ॐसोमपाः पितरस्तृ० । ॐ बर्हिषदःपितरस्तृ० ।

पश्चात् चतुर्दश यमराजोंका तर्पण करे ।

ॐयमाय नमः इदं तिलोदकं तस्मैस्वधा३ । धर्मराजाय नमः इ० ३ । मृत्यवे नमः० । अन्तकाय नमः०।वैवस्वताय नमः० कालाय नमः० । सर्वभूतक्षयाय नमः० । औदुम्बराय नमः० दध्नाय नमः । नीलाय नमः। परमेष्ठिने नमः। वृकोदराय नमः। चित्राय नमः । चित्रगुप्ताय नमः । इति ।

अब अपने पितरोंका तर्पण करे जिसको जौन गोत्र वा पिता आजा परआजा होतो उसी शाखासे बोलने मातृकुलका नाना वृद्धपडनाना।इत्यादि अस्मत्पिता वसुरूप अमुकगोत्रकुल इदं तिलोदकं गृह्णात्वेतं जलाजलिं तस्मै स्वधा अस्मत्पितामह रुद्र रूप इदं० गृह्णात्वेतं० अस्मद्वृद्धप्रपितामह आदित्यरूप इदं जलं तस्मै० माता गायत्रीरूपा देवी इदं जलं तस्यै० पितामही सावित्रीरूपा देवी इदं जलं त० । प्रपितामही सरस्वतीरूपा देवी इदं० ऐसेही नाना पडनाना वृद्ध परनाना इनके कुलके नामको उच्चारण कर इदं जलं० कहे तर्पणकरे पश्चात् भूले चूके का ये श्लोक पढकर तर्पण करे इत्यादि ।

श्लोक-ये केचास्मत्कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणो मृताः ।
ते पिबंतु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥

इति पश्चात् सूर्य्यादि नवग्रहोंका तर्पण कर हाथ जोडे ।

इति पितृतर्पणम् ।

अब हे शिष्य तर्पणकर अपने इष्टदेवके मंत्रका जप तथा ध्यान पाठ करे यथा राधासहस्रनाम या गोपाल सहस्रनाम या जौन जिसकी

उपासना इष्ट हो । प्रथम हाथमें जल लेकर इस प्रकार पढे । श्रीराधा मूल-शक्तिः श्रीकृष्णो देवता इष्टभक्तिप्राप्त्यर्थे जपे विनियोगः फिर हृदयादिन्यास करे यथा गोपालसहस्रनाममें है । पुनः अपने इष्टदेवका ध्यान करे । यथा प्रकार ।

श्लोक–अंगे तु वामे वृषभानुजां मुदा विराजमानामनुरूपसोभगाम्॥
सखीसहस्रैः परिसेवितां सदा स्मरामि देवीं सकलेष्टकामदाम्॥ इत्यादि
ॐ श्रीराधाकृष्ण इति परो मंत्रः सर्वार्थसाधकः ।

अर्थ-हे शिष्य ये कहे हुए ऊपरके कर्म अवश्य करना क्यों कि जिससे अन्तःकरणकी शुद्धि और ज्ञानकी प्राप्ति होती है और जिससे ज्ञान-स्वरूप आत्माका ज्ञान होता है वह आत्मा सत् असत्के आभास विषय-से निवृत्त है । हे शिष्य इसप्रकार कर्म प्रकरण कह कर अब तुझसे धर्म-प्रकरण कहताहूं ।

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मजाप्रियादासकृत श्रीशास्त्रसारसिद्धांतमणौ कर्मप्रकरण सम्पूर्णम्॥ ३॥

धर्मप्रकरणम् ४.

शिष्य हे गुरु जी महाराज ! आपने कर्मप्रकरण सुनाया इससे मैं परम आनंदित हुआ । अब कृपा कर धर्म विषय कहो कि धर्मका कैसा स्वरूप है और धर्म के प्रकारकाहै । और वह कौन श्रेष्ठधर्महै कि जिससे भगवतकी प्राप्ति हो वह विधिवत् कहो ।

गुरुवचन ।

श्लोक–प्रवृत्त्यर्थो निवृत्त्यर्थो धर्मो हि द्विविधो मतः ।

भावार्थ–हेशिष्य ! शास्त्रमें दो प्रकारके धर्म कहे हैं एक प्रवृत्ति धर्म और दूसरा निवृत्ति धर्म है जिस धर्मसे स्वर्गकी प्राप्ति होवे वह प्रवृत्ति धर्म जिससे भगवतकी प्राप्ति होवे वह निवृत्ति धर्महै प्रवृत्तिधर्म यहकि वर्णाश्रमद्वारा यज्ञादि

१–मन्त्र यह अर्थ धर्म काम मोक्षका देनेवाला है ।

करना परंतु इससे जन्म मरण नहीं छूट सकता इससे स्वर्गका वास वहां से फिर जन्म होनेमें राज्यप्राप्ति होवी है सो गीतामेंभी श्रीकृष्णमहाराजने अर्जुनसे कहाहै "क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशंति" इत्यादिसे सिद्धहै । अब निवृत्ति धर्म सुनो सत्संग महात्माओंकी सेवा श्रीराधाविहारीकी भक्ति यह आगे भक्ति प्रकरणमें विस्तारसे कहेंगे हे शिष्य इसलिये जिज्ञासुको परम श्रेष्ठ करनेवाला धर्म चीन्हना यथा वर्णाश्रम धर्म कहेहैं क्योंकि धर्म सर्वोपरि है ।

याज्ञवल्क्यस्मृतौ ।

श्लोक--दाराः पुत्रो नृणां च स्वजनपरिकरो बंधुवर्गः प्रियो वा ।
माता भ्राता पिता वा श्वशुरबुधजनो ज्ञातिरैश्वर्य्यवित्तम् ।
विद्या नीतिर्विपुलसुहृदो यौवनं मानगर्वौ ।
मिथ्याभूतं मरणसमये धर्ममेकं सहायम् ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! देखो विचारकरो कि अपना इनमें कोईभी नहीं जैसे स्त्री पुत्र भाई बंधु माता पिता श्वशुर मित्र इन कहे हुओंमें अपना कोईभी नहींहै क्योंकि मरणकालमें इनमेंसे कोई भी काम नहीं आता केवल भगवत्का नाम और धर्म काम आता है ।

मनुस्मृतौ ।

श्लोक—नामुत्र हि सहायार्थं पिता माता च तिष्ठतः ।
न पुत्रदारा न ज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलम् ॥

भापार्थ—हे शिष्य! देखो मनुजीने भी सोई बात प्रतिपादन करी है कि शरीरांतके समय न नामवरी सहाय न पिता न माता न भ्राता न बंधुवर्ग न पुत्र न स्त्री आदि कोई भी सहायक नहीं परलोकमें केवल धर्म ही सहाय होता है यही बात राजा बलिसे वामन भगवान्‌ने कही है ।

वामनपुराणे ।

श्लोक—वधूर्जनित्री जनकः सहोदरः सुतो धनं मित्रममुत्र गच्छता ॥
समेति सार्कं न सहायकोपि को विना स्वधर्मेण नरेण वै क्वचित् ॥

भाषार्थ-हे शिष्य ! देखो वामन भगवान्‌ने राजा बलिसे कहा है कि हे राजन् तू धर्म ही को देखे रह तेरा सहायक धर्म ही काम आवेगा न कि स्त्री पुत्र माता जनक (पिता) सहोदर (भ्राता) विपुल बहुत धन राज्य ये संपूर्ण धर्मके विना वृथा हैं इनमें से कोई भी अंत में सहायक नहीं ये सब देहसंबंधी हैं विना अपने अच्छे अनुष्ठान या महात्माओंका संग या भगवद्भक्तिके और कोई भी काम नहीं आता ॥

महाभारते मोक्षपर्वणि ।

श्लोक-न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः ।
धर्मो हि नित्यः सुखदुःखे अनित्ये जीवो हि नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः॥

भाषार्थ-हे शिष्य पुरुषको चाहिये कि स्नेहके वश न हो स्त्री पुत्र भाई बंधुमें प्रीतिवाला न हो न लोभवश हो धनमें प्रीतिवाला न हो क्रोधवश हुवा किसीसे वैर न करे कामके वश पर स्त्रीसे प्रीति न करे अथवा राजाके भयसे वृथा साक्षी नदे जीवका नाश विचार कर देखो तो जितने देहके व्यवहार हैं वे सब अनित्य हैं इनके लिये धर्मका त्यागना अयोग्य है सुख दुःख ये अनित्यहैं जीव नित्य है इस लिये हे कौरवनंदन धर्मका परित्याग न करे-पांडवोंके दूत बन श्रीकृष्णने दुर्योधनादिकोंके प्रति यह उपदेश किया है इस लिये धर्मही श्रेष्ठहै यह बात श्रुतिभी कहै है "धर्मो नित्यः" इत्यादि अन्यपुराणोंमेंभी हरिश्चंद्र तथा मोरध्वज आदिकोंने स्त्री पुत्र धनका लोभ त्यागकर धर्मही ग्रहण किया है इति ।

गीतायाम् ।

श्लोक-स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकंपितुमर्हसि ।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥

भाषार्थ-हे शिष्य ! देखो गीतामें श्रीकृष्णभगवान्‌ने अर्जुनसेभी कहा है कि हे अर्जुन ! तू कंपित मत हो और क्षत्रियधर्मका परित्याग मत कर इसमें तत्पर हो क्योंकि इस देहका नाश होता है और आत्मा तो आनंदरूप और नित्य है इसमें कोई उपाधि नहीं इसलिये धर्म श्रेष्ठहै इति ।

गीतायाम् ।

श्लोक-श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥

भापार्थ-हे अर्जुन तू अपने स्वधर्म अर्थात् क्षत्रिय धर्मका परित्याग करेगा और दया मोह इनको धारण करेगा तो तू नरकको प्राप्त होगा और संसारमें निंदा होगी क्योंकि देख यह जो मोह है सो वैश्यका धर्म है और दया ब्राह्मणका धर्महै इसलिये तू धनुप उठाय इनसे संग्राम कर यह तेरा धर्म है अपने धर्ममें निधन मरनाभी श्रेयः कल्याणकारी है और परधर्ममें सदा भय है इति ।

शिष्यवाक्यं-विचारदीपिकायाम् ।

श्लोक-धर्मस्य मार्गा बहवो महर्षिभिः संदर्शिता मुक्तिविमुक्तिसिद्धये ॥
कस्तेषु गम्यस्तु मयाऽऽत्मशुद्धये निश्शेपधर्मैकरहस्यविद्गुरो ॥

भापार्थ-हे गुरुजी महाराज यह कृपा कर कहो कि मनुष्यको क्या कर्तव्यहै क्यों कि वेदादिशास्त्रोंमें तथा धर्मशास्त्रके अधिष्ठाता मनुआदिकोंने धर्म बहुत प्रकारके कहे हैं एकसे स्वर्ग दूसरेसे मुक्ति अर्थात् निवृत्ति और प्रवृत्तिमार्गके भेदसे इनमें कौन धर्म श्रेष्ठ और आत्मउज्जीवन है ।

गुरुवचनं-महाभारते ।

श्लोक-श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितो योऽनुष्ठानक्रमो भुवि ।
धर्म इत्युच्यते लोकैरधर्मो यदतोऽन्यथा ॥

भापार्थ-हे शिष्य ! देखो महाभारतमें जहां धर्मका निश्चय कियाहै तहां, श्रीव्यासदेवजीने यही कहा है कि श्रुतिस्मृतियोंके प्रमाणयुक्त जो धर्मका अनुष्ठान है वही श्रेय है लोकमें वही धर्म माननीयहै और जो श्रुतिस्मृतिमें नहीं वह त्याज्यहै ।

जाबाल्यसंहितायाम् ।

श्लोक-रामायणे भारते च पुराणेषु च ये स्मृताः ।
धर्माः श्रुतिस्मृतिप्रोक्ता धर्मेभ्यो न पृथक् स्थिताः ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! देखो जावालि ऋषिने भी कहाहै कि जो धर्म रामायण भारत पुराण श्रुतिस्मृतियोंमें है वही श्रेय है और इनके वाह्य जो है वह त्याज्य है । यथा-जैनादिक ।

शांडिल्यसंहितायाम् ।

श्लोक–क्षमा सत्यं दमः शौचं दानमिन्द्रियसंयमः ।
अहिंसा गुरुशुश्रूपा तीर्थानुशरणादयः ॥ १ ॥
आर्जवं वाप्यलोभश्च देवब्राह्मणपूजनम् ।
अनभ्यसूया च तथा धर्मः सामान्य उच्यते ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! देखो अब मैं धर्मका स्वरूप कहताहूं इसको श्रवण करो क्षमा याने कोई अपनेको कटुवाक्य कहै ताको सहन करे सत्यबोलै दम नाम इंद्रियोंको दमन करै याने उनके वेगको रोके शौच याने अंतरवाह्यस्नानादि दानका देना किसी जीवको न मारे गुरुकी सेवा तीर्थयात्रा सर्वजीवोंपर दया ब्राह्मण तथा देवताओंका पूजन अतिथिसत्कार करे किसीसे ईर्पा न करे ये सामान्य धर्मके लक्षण हैं ।

श्लोक–वाचा च चित्तेन च कर्मणापि यत्
संपालनं नित्यमवेक्ष्यशास्त्रतः ॥
सत्यस्य तद्धर्ममिहोत्तमं बुधाः
प्राहुस्ततस्तं हि समाश्रयाऽचिरम् ॥ १ ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! देखो वाणी करके मनकरके शरीर करके किसीको दुःख न दे और सर्वकाल शास्त्र अवलोकन करे तथा महात्माओंका तत्संग मिथ्या. न भापण करे सत्यका परित्याग न करे ऐसी धर्मशास्त्रकी आज्ञा है अब सर्वधर्मोंसे श्रेष्ठ धर्म जो कि भागवतमें उद्धवने प्रश्न किया, और श्रीकृष्णने सर्वधर्मोंको यथार्थरीतिसे कहा वे कहताहूं सुनो ।

श्रीमद्भागवते एकादशस्कन्धे उद्धववचनम् ।

श्लोक–यस्त्वयाभिहितः पूर्वं धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः ।
वर्णाश्रमाचारवतां सर्वेपां द्विपदामपि ॥ १ ॥

यथाऽनुष्ठीयमानेन त्वयि भक्तिर्नृणां भवेत् ।
स्वधर्मेणारविंदाक्ष तत्समाख्यातुमर्हसि ॥ २ ॥
पुरा किल महाबाहो धर्मं परमकं प्रभो ॥
यत्तेन हंसरूपेण ब्रह्मणेभ्यात्थ माधव ॥ ३ ॥
स इदानीं सुमहता कालेनामित्रकर्शन ॥
न प्रायो भविता मर्त्यलोके प्रागनुशासितः ॥ ४ ॥
तत्वं नः सर्वधर्मज्ञ धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः ॥
यथा यस्य विधीयेत तथा वर्णय मे प्रभो ॥

भाषार्थ-हे शिष्य ! देखो उद्धव भगवान्से पूछतेहैं कि हे प्रभो तुम्हारे बिना धर्म कौन कहे और आपसे वक्ता मैं कहा ढूंढों इसलिये कृपा कर यह कहो कि धर्मोंमें कौन धर्म श्रेष्ठ है और कौन धर्ममे भगवद्भक्ति दृढ होती है हे प्रभो ! जो कहोकि वेदके विषे धर्मका निरूपण कियाहै तो हे नाथ ब्रह्माकी सभामें चारो वेद मूर्तियां धारण करस्थितहैं वहां भी आपने हंसस्वरूप धारण कर वेदका सार धर्मका उद्धार किया है और आपहीने महाभारतमें अर्जुनसे धर्मके विषयका उपदेश कियाहै इसलिये कृपा कर आप ही धर्मका उपदेश करो ।

गीतायाम् ।

श्लोक-यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत ।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥

भाषार्थ-हे अर्जुन देखो मेरेको अवतार लेनेका कोई प्रयोजन नहीं और कोई प्रेरक नहीं परन्तु जब जब धर्मका लोप हुवा देखता हूं तब तब मैं अवतार धारण कर धर्मकी रक्षा करता हूं इसलिये हे भगवन् देखो इस प्रकार आपने धर्मकाही निरूपण किया है फिर भी आपने गीतामें कहा है ।

श्लोक-परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगेयुगे ॥

भापार्थ–हे अर्जुन देखो मैं धर्मका विनाश देख युग युग अर्थात सत्ययुग त्रेता द्वापर कलियुग इन चारों युगोंमें जब जब दुष्ट बर्तेहैं और धर्मकी हानि होती है तब तब उनका नाश कर गौ ब्राह्मण वेदोक्तधर्म इनका उद्धार करता हूँ यह बात आपने कही थी पुनः तैत्तिरीय उपनिषद्में भी कहा है । "धर्मं चर धर्मान्नप्रमादितव्यम्" । इत्यादि । अर्थ–हे पुरुष ! तू धर्मका आचरण (धारण) कर धर्मसे किसी कालमे प्रमाद न करना चाहिये इति हे कृपानाथ ! ये आपके ही मुखसे निकसे वचनहैं तैसे ही कृपा करो क्योंकि जिससे विधिवत् विधि निषेध धर्म सुननेकी श्रीमुखसे इच्छाहै ।

श्रीकृष्णवाक्यं–भागवते एकादशस्कंधे ।

श्लोक–धर्म्य एष तव प्रश्नो नैःश्रेयसकरो नृणाम् ।
वर्णाश्रमाचारवतां तमुद्धव निबोध मे ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! तुम्हारा प्रश्न धर्मके विषे है वह वर्णाश्रम तथा आचारवान् पुरुषोंको भगवद्धर्म श्रेष्ठहै । तहां प्रथम वर्णाश्रमधर्मोंको भी ग्रहण करे । वह पुराणोंमें कहाहै ।

"स्ववर्णाश्रमधर्मेण तपसः हरितोषणात्" इति ।

भापार्थ–तात्पर्य यह कि अपने वर्णाश्रमके धर्मद्वारा ही हरि जो श्रीकृष्ण उनका भजन करे यह तप है । तहां पुनः ।

श्रुतिः ।

"ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो येषां पूर्वानुवदंति स्वे स्वे धर्म आचरंति" इति ।

भापार्थ–हे उद्धव देखो श्रुति भी यही प्रतिपादनकरै है कि, ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इन चारों वर्णोंने अपने २ वर्णधर्मद्वारा परमात्माका भजन करना श्रेष्ठहै हे उद्धव प्रथम मैं चारों युगोंका धर्म कहताहूं फिर वर्णाश्रमधर्म कहूँगा एकाग्रचित्तसे तिसको श्रवण करो ।

श्लोक–आदौ कृतयुगे वर्णो नृणां हंस इति स्मृतः ।
कृतकृत्याः प्रजा जात्या तस्मात्कृतयुगं विदुः ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! पहिले सत्ययुगमें मनुष्योंका वर्ण हंस होता भया प्रजा कृतकृत्य होती भई इसलिये कृतयुग नाम हुवा और तिनके कर्महूं श्रेष्ठ थे सो कहतेहैं ताको सुनो ।

श्लोक–वेदः प्रणव एवाग्रे धर्मोऽहं वृषरूपधृक् ।
उपासते तपोनिष्ठा हंसं मां मुक्तकिल्बिषाः ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! तहां कृतयुगमें प्रणव (ओंकार) ही वेद होता भया । और तहाँ धर्म वृषभ (बैल) की तरह चारों पाँव रोपे खडा था ये यज्ञादि कर्म नहीं मनको वशीकर इन्द्रियोंके विषय रोककर अंतसमय मेरा ध्यान करते थे इति ।

श्लोक–त्रेतामुखे महाभाग प्राणान्मे हृदयात्त्रयी ।
विद्या प्रादुरभूत्तस्या अहमासं त्रिवृन्मखः ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! जब त्रेता युग भयो तब विराट मेरे प्राणसे और हृदयसे वेदत्रयी विद्या, निकसी ताते अध्वर्यु उद्गातृरूप यज्ञ प्रगट भया सो यज्ञ मेरा रूपहै । सो यज्ञ तीन प्रकारकाहै ज्ञानयज्ञ ध्यानयज्ञ कर्मयज्ञ, "ज्ञान-यज्ञसे इन्द्रियोंका दमन" "और ध्यानयज्ञसे मनका लय" "कर्मयज्ञ याने अग्निहोत्र ब्राह्मण भोजन" इत्यादि । अब विराटस्वरूपसे चारों वर्णोंकी उत्पत्ति कहतेहैं ।

चारोंवर्णोंकी उत्पत्ति ।

श्लोक–विप्रक्षत्रियविट्शूद्रा मुखबाहूरुपादजाः ।
वैराजात्पुरुषाज्जाता य आत्माचारलक्षणाः ॥

भापार्थ–हे उद्धव ! विराटस्वरूपसे चारो वर्णोंकी उत्पत्ति हुई । मुखसे ब्राह्मण बाहुसे क्षत्रिय जंघासे वैश्य पाँवसे शूद्र उत्पन्नभये सो ताको प्रमाण भी मैं कहताहूं सुनो ।

यजुर्वेदे माध्यंदिनीयशाखापुरुषसूक्ते ।

मंत्र-ब्राह्मणोस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ॥
ऊरू तदस्ययद्वैश्यः पद्भ्याँशूद्रोऽअजायत ॥ इति ।

वह ऊपर श्लोकके जो अर्थ इस सूक्तके मंत्रका अर्थ है । याने चारों वर्ण भगवत् विराटके यथायोग्य अंगोंसे भये हैं उनके कर्म धर्म वर्णयुक्त भये हैं वह आगे कहेंगे ऐसे ही चारो आश्रमकी भी उत्पत्ति हुई है यथा ब्रह्मचर्य गृहस्थ वानप्रस्थ संन्यास ।

चारों आश्रमोंकी उत्पत्ति ।

श्लोक-गृहाश्रमो जघनतो ब्रह्मचर्य्यं हृदो मम ।
वक्षःस्थानाद्वनेवासो न्यासः शीर्षणि संस्थितः ॥

भापार्थ-हे उद्धव ! जैसे वर्ण विराट्से पैदा भये ऐसे ही चारों आश्रम विराट्भगवानके अंगसे पैदा भयेहैं वह ऐसे कि गृहस्थाश्रम जांघसे । ब्रह्मचर्य धर्म हृदयसे वानप्रस्थ धर्म वक्षःस्थल (छाती) से संन्यास धर्म मस्तकसे प्रगट भये हैं । इनके फल पूर्वकर्मानुसार हैं अब सब वर्णाश्रमोंके स्वभाव कहता हूं उनको हे उद्धव ! सुनो इत्यादि ।

श्लोक-वर्णानामाश्रमाणां च जन्मभूम्यनुसारिणीः ।
आसन्प्रकृतयो नृणां नीचैर्नीचोत्तमोत्तमाः ॥

भापार्थ-हे उद्धव! सब वर्णधर्मके स्वभाव न्यारे२ जैसे जिनने नीचभूमि[1]में जन्म लिये वे नीचसंगवाले तादृशस्वभाववाले हुए जिन्होंने अच्छी भूमिमें जन्म लिये उन्होंनें सत्पुरुषोंके यहां प्रगटहो सज्जनोंका सत्संग किया उनके आचरण श्रेष्ठ व्यवहारमें परमगतिके अर्थ वही बर्ताव तदनुसार आचरण धारण रखते हैं।

चारों वर्णोके स्वभाव ।

श्लोक-शमो दमस्तपःशौचं संतोपः क्षांतिरार्जवम् ।
मद्भक्तिश्च दया सत्यं ब्रह्मप्रकृतयस्त्विमाः ॥

भापार्थ-हेउद्धव ! सबमें समता इंद्रियोंका बश करना भगवत्ध्यान अंतस् और बाह्य दोनों व्रत साफ संतोष जो मिला उसीमें संतुष्ट क्षमा याने

१ भूमिका तात्पर्य कुलहै यहां पृथ्वी न जानना

क्रोधका रोकना शुद्धभाव मेरी भक्तिमें प्रीति दया ये ब्राह्मणके स्वभाव हैं। अब क्षत्रियोंका स्वभाव सुनो।

श्लोक-तेजो बलं धृतिः शौर्यं तितिक्षौदार्यमुद्यमः।
स्थैर्यं ब्रह्मण्यतैश्वर्य्यं क्षत्रप्रकृतयस्त्विमाः॥

भापार्थ-तेज बल धृति(धीरज)शूरता याने रणसे पग न हटाना क्षमा याने ब्राह्मणके कटुवाक्य सहना उदारता द्रव्यसंग्रह उद्यम याने ग्रामादिक युद्धद्वारा जीतना ऐश्वर्य खजाना घोडा हाथी फौज इन करके युक्त हो अब वैश्यका स्वभाव कहता हूं तिसको सुनो।

श्लोक-आस्तिक्यं दाननिष्ठा च अदंभो ब्रह्मसेवनम्।
अतुष्टिरर्थोपचये वैश्यप्रकृतयस्त्विमाः॥

भापार्थ-आस्तिकता दानकरना कपट न करना ब्राह्मणकी सेवा करना द्रव्यके संग्रहणमें अतृप्त यह वैश्यका स्वभाव है अब शूद्रका स्वभाव कहता हूं।

श्लोक-शुश्रूपणं द्विजगवां देवानां चाप्यमायया।
तत्र लब्धेन संतोपःशूद्रप्रकृतयस्त्विमाः॥

भापार्थ-ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इनकी सेवा करनी जो कुछ मिले इसीमें संतुष्ट रहना यह शूद्रके लक्षण हैं।

शिष्यवाक्य।

हे गुरुजी महाराज कृपा कर अब चारोंवर्णोंके कर्म कृपा कर विधिवत् समुझायके कहो मेरी सुनिवेकी इच्छा है।

गुरुवाक्य।

हे शिष्य! देखो जो श्रीकृष्ण महाराजने जो चारों वर्णोंके धर्म उद्धवसे कहे हैं वेही धर्म मैं तुमसे कहताहूं।

ब्राह्मणके कर्म।

श्लोक-इज्याध्ययनदानानि सर्वेपां च द्विजन्मनाम्।
प्रतिग्रहोऽध्यापनं च ब्राह्मणस्यैव याजनम्॥

भापार्थ-हे शिष्य! श्रीकृष्ण महाराज उद्धवसे कहते हैं कि हेउद्धव!ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इन तीनोंका धर्म समान है याने यज्ञकरना वेद पढना दान देना

भगवद्भक्ति करना यह तीनों वर्णोंका अधिकारहै परंतु प्रतिग्रह दान वेदपुराणका सुनाना ये ब्राह्मणके धर्म हैं ये तीनों कर्म ब्राह्मणकोही उचितहैं अब ब्राह्मणके कर्म और शरीरके निर्वाहक व्यवहार कहताहूं इससे भिन्न कर्म ब्राह्मणको त्याज्य है ।

श्लोक-प्रतिग्रहं मन्यमानस्तपस्तेजोयशोनुदम् ।
अन्याभ्यामेव जीवेत शिलैर्वा दोषदृक्तया ॥

भाषार्थ-हे उद्धव! ब्राह्मण को जब दान न मिले या क्षत्रिय अन्न न दे तो जो खेत कटे वहां पर जो अन्न परा रहता है उसको बीन लावे इसीको शिलवृत्ति कहतेहैं अथवा इसमेंभी देहका निर्वाह न हो तो पाठशालामें पढावे और यज्ञ करावे परंतु नौकरी नीचसेवा न करे ब्राह्मणके ये लक्षण हैं न कि बडी चुटिया सफेद धोती जनेऊसे ब्राह्मण नहीं इसीमें प्रमाण ।

ब्राह्मणोपनिषदि ।

श्लोक-कर्मण्यधिकृता ये तु वैदिके ब्राह्मणादयः ।
तेभिर्धार्यमिदं सूत्रं क्रियांगं तद्धि वै स्मृतम् ॥

भाषार्थ-कर्ममें तत्परहो वैदिकधर्म संध्योपासन वेदका पाठन सूत्र (जनेऊ) काधारी ब्राह्मणहै ।

जाबालोपनिषदि ।

शिखा ज्ञानमयी न च विद्वानकेशधारणः ।

अर्थ-हे उद्धव ज्ञान ही शिखा (चोटिया) न कि विद्वान् बाल धारन बडी भारी चोटिया रखनेवाला ब्राह्मण नहीं इति । " उपवीतं तन्मयं " । अर्थ-याने मनकी वृत्तिका लय सोई यज्ञसूत्र (जनेऊ) है पुनः प्रमाण श्रुतिमें भी कहाहै "यज्ञोपवीतस्स्यात्सयज्ञस्तं यज्वनं विदुः" अर्थ-यज्ञके विषय चित्त जाका लगा ज्ञानरूपी यज्ञमें मनके विकार सोई साकल्य होमना संतोष विचार क्षमा येही तीन सूत्र हैं न कि तीन सूतके ताग नहीं यज्ञोपवीत यज्ञसूत्र तहा सोई प्रमाण धर्मशास्त्रमें भी कहाहै सो प्रमाण ।

श्लोक–जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्द्विज उच्यते ।
वेदाभ्यासी भवेद्विप्रो ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः ॥

भाषार्थ–इससे भी सिद्ध हुआ कि जन्ममें न शिखा न जनेऊ ये संस्कार द्वारा प्राप्त हैं इसलिये जो ब्राह्मणके धर्म हैं तादृश ब्राह्मणको वर्तने चाहिये और यह आचार न हो तो ब्राह्मणमें १ अंश है वह प्रमाण धर्मशास्त्रमें भी ऋषि वाक्य ।

श्लोक–असिजीवी मसीजीवी देवलो ग्रामयाचकः ।
उपहर्ता पाककर्ता चैते विप्रा द्विजाधमाः ॥

भाषार्थ–ब्राह्मणमें ये कर्म हों तो शूद्रवत् है असि माने तलवार उसको लेनेवाला नौकर मसी माने लिखाई पोथी लिख बेचना देवीके मंदिरकी पूजा लेनेवाला निज गाममें भिक्षा माँगनेवाला रोटीबनानेकी नौकरी करना धान्य कुधान्य ग्रहणकरना ये लक्षण जिस ब्राह्मणमें हों वहभी शूद्रवत् इनते न होम न तप न जप न पुरश्चरण कराना गुरुपुत्र भी हो ये लक्षण हों तो त्याज्य है तिनते दीक्षा न लेना चाहिये ताको प्रमाण । "यादृशी गुरुबुद्धिः स्यात्तादृशीं शिक्षति" अर्थ-जैसी गुरुकी बुद्धिहोगी वैसीही शिष्यको शिक्षा होगी तातै ऐसे ब्राह्मणसे परमार्थ सिद्ध नही सोई प्रमाण ।

वाजसनेयसंहितायाम् ।

" ॐ इति प्रणवेनगायत्र्ययुतं अरुणोदये ब्राह्मणो
नैव जपेत सोधमः ।

भाषार्थ ब्राह्मण प्रणव कहे ॐकारयुत दस हजारगायत्री सूर्यउदयतक जप कर तर्पण नहीं करता सो ब्राह्मण अधम नीच जानना केवल नाम मात्रका ब्राह्मण ।

बौधायनसूत्र ।

करतलामलकमिव पश्यत्यपरोक्षेण ब्राह्मणः कृतार्थतया कामरागद्वेषादिरहितः शमदमादिसंतोषवान्मात्सर्य्यतृष्णासंमोहा-

दिनिवृत्तः स एव ब्राह्मण इत्युच्यते ॥ श्रुतिः। अत एव ब्रह्म-
विद्ब्राह्मणः ॥

भापार्थ-परोक्षज्ञानी रागद्वेषादिरहित शम दम संतोषादि धारनेवाला तृष्णा मोहसे निवृत्त ये लक्षण जिसमें हों वह ब्रह्मवित् यानें ब्रह्मके स्वरूपका जाननेवाला ब्राह्मणहै इसका प्रमाण भी अन्यग्रंथमें ।

ब्रह्मकर्मसंग्रहमध्ये ।

श्लोक-ब्राह्मणस्य हि देहोयं क्षुद्रकामाय नेष्यते ।
कृच्छ्राय तपसे चेह प्रेत्यानंतसुखाय च ॥

अर्थ-हे शिष्य जो ब्राह्मण या प्रकारसे कहे हुए आचरण बर्तते हैं और शूद्राचरण नीच कर्मोंका परित्याग करतेहैं वे ही ब्राह्मणहै क्योंकि ब्राह्मणका देह केवल तपके अर्थ जो है धर्मशास्त्रके अनुकूल चलता है तिसको अंतमें नित्यानंद सुख की प्राप्तिहो जन्ममरणसे छूट जाताहै इति अब क्षत्रियधर्म सुनों मृगयादिक (शिकार) खेलै युद्ध और मल्लविद्या सीखै रात्रिमें जागरण कर ग्रामकी चोरोंसे रक्षा करै वैश्यलक्षण रोजगार करै घृतादि और धातु इन पदार्थोंको बेचै लेना देना करै साधु ब्राह्मणकी सेवा करे शूद्रलक्षण शूद्र सबकी टहल करे तीनो वर्णोंसे स्नानादिक कर्मद्वारा जो प्राप्त हो उसीमें संतुष्ट रहे हे उद्धव ये चारों वर्णके धर्म हैं इति अब चारों आश्रमों-के धर्म कहता हूं सुनो ।

चारोआश्रमधर्मवर्णन ।

वानप्रस्थो गृहस्थश्च ब्रह्मचारी तु कीदृशः ।
संन्यासी च कथं ज्ञेयो लक्षणानि निरूपय ॥

भापार्थ- हेशिष्य उद्धवजी श्रीकृष्ण महाराजसे हाथ जोरकर प्रश्न किया कि हे नाथ जैसे आपने चारों वर्णोंके धर्म कहे वैसेही कृपाकर चारों आश्रम गृहस्थ ब्रह्मचर्य्य वानप्रस्थ संन्यस्त इन सबके पृथक् पृथक कर्म लक्षण कृपा कर कहो मेरी प्रार्थना है ।

श्रीकृष्णवाक्य ।

श्लोक–द्वितीयं प्राप्यानुपूर्व्याज्जन्मोपनयनं द्विजः ।
वसन्गुरु कुले दांतो ब्रह्माधीयीत चाहुतः ॥

भावार्थ–हेशिष्य ब्रह्मचर्य धर्म श्रवण कर जब ब्राह्मणका उपनयन (जनेऊ) याने यज्ञोपवीत गायत्री उपदेश गुरुसे लेलेवे तब उसका द्वितीय जन्म हो जाताहै तब उसे गुरुके गृहमें जाय इंद्रियोंको वश कर वेदाध्ययन करना और गुरुकी आज्ञा पालन करे और इन व्रतोंसे रहे सो कहते हैं इति ।

श्लोक–मेखलाजिनदंडाक्षब्रह्मसूत्रकमंडलून् ।
जटिलोधौतदद्वासो रिक्तपादः कुशान्दधत् ॥

भावार्थ–मेखला याने मृगचर्मका जनेऊ कैसा गलेमें धारणकरे दंड याने पलाशकी लकडीका दंड हस्तमें राखे रुद्राक्षकी माला यज्ञोपवीत कमंडलु याने काठका लोटा (जलपात्र) रक्खे और जटा रखावे बाल न बनवावे तेल न लगावे वस्त्र और दाँत न धोवे कुशोंपर शयन करे जूती न पहिरे इति पुनः ।

श्लोक–स्नानभोजनहोमेषु जपोच्चारे च वाग्यतः ।
न च्छिन्द्यान्नखरोमाणि कक्षोपस्थगतान्यपि ॥

भावार्थ–स्नान विना कोई वस्तु न खाय होम करे गायत्री तथा गुरुमंत्रका जप करे मौनी रहे वृथा बकवाद न करे लघुशंकाकी शुद्धिके लिये जल लेजाय नख न कटावे कांख तथा उपस्थके बाल न बनवावे नाईको न छुवे इन कहे हुए वाक्योंकी धारणा करे ।

श्लोक–रेतो नावकिरेज्जातु ब्रह्मव्रतधरः स्वयम् ।
अवकीर्णेऽवगाह्याऽप्सु यतासुस्त्रिपदीं जपेत् ॥

भावार्थ–वीर्य्य स्खलित न हो ब्रह्मचर्यका मुख्य यह धर्म है यदि प्रमाद या स्वप्नमें वीर्यका पतनगिरना हो तो जलसे स्नान कर प्राणायाम और गायत्रीका जप करे इति ।

श्लोक–अग्न्यर्काचार्यगोविप्रगुरुवृद्धसुराञ्छुचिः ।
समाहित उपासीत संध्ये च यतवाग्जपन् ॥

भापार्थ-अग्नि सूर्य्य गुरु वृद्ध ब्राह्मण गौ वेदका पाठ गायत्रीका जप एकांतमें निवास सेवे साँझको भिक्षा ले सोभी सात घरोंसे आटा माँग अग्निमें रोटी डार खावे अथ वा फलाहार लेवे उन वस्तुओंको न खाय कि जिनसे प्रमाद बढे इति ।

गृहस्थलक्षण ।

श्लोक-गृहार्थी सदृशीं भार्य्यामुद्वहेदजुगुप्सिताम् ।
यवीयसीं तु वयसा यां सवर्णामनुक्रमात् ॥

भापार्थ-हे उद्धव जब द्वादश वर्ष बीत जायँ तब ब्रह्मचर्यसे गृहस्थाश्रम ग्रहण करे तो अपने समानवालेकी कन्या लेवे शास्त्रविधिसे विवाह करे और विधिवत् बर्ताव करे द्वितीय स्त्रीकी इच्छा हो तो शास्त्रोक्तसे ग्रहण करे कब कि जब प्रथम स्त्रीके पुत्र न हो रोगिणी हो व्यवहारमें भ्रष्ट हो तब, और विहारभी जैसे शास्त्रकी आज्ञा वैसे, मासिकधर्ममें चाररोज त्याज्य है सो कहते हैं "प्रथमेहनि चांडाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी । तृतीये रजकी ज्ञेया चतुर्थेहनि शुध्यति इति॥" प्रथम दिन जो स्त्रीको छुए तो मानों चांडालकी स्त्रीसे स्पर्श दूसरे दिन मानो ब्राह्मणको मारनेवालीसे स्पर्श तीसरे दिन धोबिनकी सम चौथे दिन शुद्ध होती है तब इस विधिसे ग्रहण करे "पंचमे सप्तमे चाथ नवमैकादशे दिने । षोडसे दिवसे स्पर्शः पश्चात्संगं परित्यजेत" अर्थ-पांचवेंदिन सातवें दिन नवें दिन ग्यारहवें दिन सोलहवें दिन तक स्त्रीसंग करे बाद स्त्रीसंग न करे नहीं तो "कृतो हि नित्यः स्त्रीसंग आयुर्बलविनाशकः"अर्थ-नित्य पशुवत् स्त्रीसंग किये आयु छिन्न बलकी हानि बुद्धिका नाश होताहै और इन आगे कहे दिवसोंमेंभी स्त्रीसंग न करे तथा च गर्भोपनिपादि-श्राद्ध एकादशीपर्वतीर्थेषु गुरुसन्निधौ सूर्य्योदये तथा सायं स्त्रीसंगं विवर्जयेत् । अर्थ-श्राद्धके दिन एकादशीके दिन व्यतीपात ग्रहणादिकपर्व तीर्थोंमें गुरुद्वारे सूर्य्यके उदयमें सायं कालमें इन समयोंमें स्त्रीप्रसंग वर्जितहै । और इतनी स्त्रियोंसे संग न करे तहाँ प्रमाण ।

श्लोक-रोगिणी गर्भिणी चैव कुमारी व्यभिचारिणी ।
शोकसंशययुक्ता या ता स्त्रीं संगंविवर्जयेत् ॥

अर्थ--रोगिणी हो गर्भिणी कुमारी (जिसका विवाह नहीं हुवा हो) इनसे संग न करे और व्यभिचारिणीसे भी क्यों कि रोगकाभय होताहै शोकमें हो कोई संशय या भय युक्त हो इन स्त्रियोंसे प्रसंग न करे । अब सुनो युवास्त्रीसे एकांतमें बात न करे । यहां पराई स्त्रीका तात्पर्य्य है । पराई स्त्रीसे हास्यरस न करे । जहां बहुतस्त्रियें हों वहां न जाय । अब गृहस्थका कर्म सुनो ।

श्लोक-वेदाध्यायस्वधास्वाहावल्यन्नाद्यैर्य्यथोदयम् ।
देवर्षिपितृभूतानि मद्रूपाण्यन्वहं जपेत् ॥

भापार्थ-हेशिष्य! गृहस्थको पांच यज्ञ करने चाहिये ब्रह्मयज्ञ करे तो ऋपियोंको सन्तुष्ट करे श्राद्धसे पितरोंकी तृप्ति करे होम याने अग्निमें घृतकी आहुति डार स्वाहा शब्द उच्चारण कर देवतानको प्रसन्न करे बलिप्रदान कर भूत यज्ञ करे । अन्नजलसे अतिथि ब्राह्मण साधुओंकी सेवा करे सबमें मेरेको जान सबसे प्रीति करे महान् यज्ञ ये पाँच हैं । और गृहस्थ व्यवहार कहेहैं ।

श्लोक-यदृच्छयोपपन्नेन शुक्लेनोपार्जितेन वा ।
धनेनाऽपीडयन्भृत्यान्न्यायेनैवाहरेत्क्रतून् ॥

भापार्थ-हेशिप्य ! उद्यम कर उत्तम धन लेकर कुछ तो कुटुंबका पालन पोपणकरे कुछ परमार्थ साधुसेवामें लगावे परंतु कपट चोरीरहित जो धन उत्तम हो उससे देवता तीर्थ अतिथि सत्कार करे और पुत्र कलत्र भी दुःख न पावें ।

श्लोक-कुटुंबेषु न सज्जेत न प्रमाद्येत्कुटुंब्यपि ।
विपश्चिन्नश्वरं पश्येददृष्टमपि दृष्टवत् ॥

भापार्थ-हे शिप्य ! देखो कुटुंबमें रहे कुटुंबका पालन करे परंतु उनके

मोहमें न फँसे यह समझे जैसे पुरुष धर्मशालामें रातको ठहरतेहैं। भोरहुए चल देतेहैं। इसीभाँति गृह समझे और सज्जनोंका सत्संग करे।

श्लोक-पुत्रदाराप्तबंधूनां संगमः पांथसंगमः।
अनुदेहं वियंत्येते स्वप्नो निद्रानुगो यथा॥

भापार्थ-पुत्र दारा बंधु ये जैसे मार्गके संबंधी वैसे इन्हें जानों और इनमें प्रीति कम राखे यह स्वप्नकी संपत्ति है तासे विचारवान् ऐसे गृहस्थाश्रमको सेवन करे कदापि न ख्याल करे कि मेरा है यह सब मिथ्याहै।

वानप्रस्थधर्मलक्षण।

श्लोक-वनं विविक्षुः पुत्रेषु भार्यां न्यस्य सहैव वा।
वन एव वसेच्छांतस्तृतीयं भागमायुपः॥

भापार्थ-हेशिष्य वानप्रस्थधर्मसुनो। जब आयुका तीसराभाग आवे तब याने पचास वर्षसे ऊपर गृहस्थीका भार ज्येष्ठ पुत्रको सौंप, स्त्रीसंग ले अथवा वह पुत्रके समीप रहे तो वहीं छोडदे और आप किसीवनमें जाय बसे।

श्लोक-कन्दमूलफलैर्वन्यैर्मेध्यैर्वृत्तिं प्रकल्पयेत्।
वसीत वल्कलं वासस्तृणपर्णाजिनानि च॥

भापार्थ-कन्द मूल फलोंका भोजनकरे भोजपत्र पहिरे तृणकी कुटी बनाले तृण अथवा मृगचर्म बिछाय भगवद्ध्यानमें मग्न रहे गृहमें चित्त न जाय।

श्लोक-केशरोमनखश्मश्रुमलानि बिभृयाद्दतः।
न धावेदप्सु मज्जेत त्रिकालं स्थंडिलेशयः॥

भापार्थ-केश याने बाल डाढी मूछ इत्यादिक न बनवाना नाईको न छुए और न बालोंको स्याह करे न तेल डारे तीनकाल स्नान करे गायत्रीका जप कर शरीर शुद्ध करे। दृष्टि बंद कर अन्तसमें भगवन्मूर्तिका ध्यान करे ग्राममें न जाय।

श्लोक-ग्रीष्मे तप्येत पंचाग्नीन्वर्षास्वासारषाड् जले।
आकण्ठमग्नः शिशिरे एवं वृत्तस्तपश्चरेत्॥

भापार्थ–ग्रीष्ममें पंचाग्नि तापै वर्षामें जलवृष्टि सहै जाडेमें कण्ठपर्य्यन्त जलमें रहे सदा हरिकी लीला धामका स्मरण इस वृत्तिका धारणकरे सोई तपहै।

श्लोक–स्वयं संचिनुयात्सर्वमात्मनो वृत्तिकारणम् ।
देशकालबलाभिज्ञो नाददीतान्यदाऽऽहृतम् ॥

भापार्थ–अपनी जीविका याने शरीरके निर्वाहके अर्थ वनफल अथवा ऊंचीवृत्तिका नाज संग्रह करे जबतक नया न आवे फिर पुराना खर्च करदे संग्रह न राखे ऐसा कहा है ।

श्लोक–अग्निहोत्रं च दर्शश्च पूर्णमासश्च पूर्ववत् ।
चातुर्मास्यानि च मुनेराम्नातानि च नैगमः ॥

भापार्थ–पूर्व नाम गृहस्थाश्रम सरीखे व्रत करे यथा चातुर्मास्यव्रत एकादशीव्रत तीर्थमें भ्रमण ज्ञानका संपादन यह वानप्रस्थधर्ममें कहा है सो जानो । पुनः–

श्लोक–एवं चीर्णेन तपसा मुनिर्धमनिसंततः ।
मां तपोमयमाराध्य ऋषिलोकादुपैति माम् ॥

भापार्थ–इस प्रकारसे तपस्या कर शरीरको क्लेश देता हुआ इंद्रियोंको दमन करे पश्चात् ज्ञानद्वारा मेरे स्वरूपका निश्चय कर फिर क्रमसे ऋषिलोक महर्लोकमें जाय पीछे क्रमसे मेरे लोकको जाता है इति ॥

संन्यासधर्म ।

श्लोक–यदा कर्मविपाकेषु लोकेषु निरयात्मसु ।
विरागो जायते सम्यङ् न्यस्ताग्निः प्रव्रजेत्ततः ॥

भापार्थ–जब इंद्रियोंके विपयोंसे चित्तमें उपरामहो और संसारसे वैराग्य-वाला चित्तसे स्वर्गके सुखकी तरफ भी मन न जाय अग्निहोत्र यज्ञादिकी तरफभी न दृष्टि हो क्योंकि ये भी मोक्षके दाता नहीं केवल सच्चिदानंदमय जगत देख सुखदुःखकी भी समताहो तब संन्यास ले ।

श्लोक–विप्रस्य न्यसतो गेहादेवा दारादिरूपिणः ।
विघ्नान् कुर्वन्त्ययं ह्यस्माना क्रम्यसमियात्परम् ॥

भापार्थ–जब ब्राह्मण संन्यास लेनेको तत्पर होताहै तब देवता स्त्री पुत्रादि द्वारा नाना प्रकारके विघ्न करातेहैं कि यह हमारी समताको न पावे इसलिये इनके विघ्नोंसे न डरे इनसे मुख मोड़ संन्यास धारण करे क्यों कि यही इसका परम कल्याण है।

कोयं संन्यास उच्यते कथयति संन्यस्तो भवति ॥ इति ।

भापार्थ–हे शिष्य ! नारदपरिव्राजक उपनिषदमें कहा है कि संन्यासका तात्पर्य समझे कि संन्यास क्या वस्तु है तब संन्यास ले नही उभयभ्रष्ट-याने इसलोक परलोक दोनोंसें गये । परमार्थ भी न सिद्धहुवा और यहां स्त्री पुत्रादिकोंके भी सुखसे गया"अज्ञानिषु च वैराग्यं क्षिप्रमेव विनश्यति" इति । अर्थ–ज्ञानके विना वैराग्य शीघ्र नष्ट होजाता है पुनः प्रमाण ।

बृहन्नारदीये ।

श्लोक–गृहं वस्तु सुतं दारान्सुखार्थं हि विसर्जयेत् ।
वर्णधर्मकुलधर्मशिखासूत्रविनाशकः ॥

भापार्थ–गृह धन पुत्र स्त्री वर्णधर्म कुलधर्म शिखासूत्र इनके त्यागनेवाला संन्यासी नहीं संन्यासी ऐसा चहिये सो तिसको सुनो मैं कहताहूं । यह बात उपनिषद्में भी है ।

मैत्रेयोपनिषदि ।

श्लोक–अहंकारसुतं वित्तभ्रातरं मोहमंदिरम् ।
आशापत्नीं त्यजेद्यावन्न तु मुक्तो न संशयः ॥ १ ॥
ममतामोहमयी माता जातो बोधमयः सुतः ।
एकमेवा द्वितीयं यद्गुरुवाक्येन निश्चितम् ॥
एतदेकांतमित्युक्तं न मठे न वनांतरे ॥ २ ॥
कर्मत्यागान्न संन्यासो न प्रैषोच्चारणेन तु ।
संधौ जीवात्मनोरैक्यं संन्यासः परिकीर्तितः ॥
वमनाहारवद्यस्य भातं सर्वेश्वरादिषु ।

तस्याधिकारः संन्यासे त्यक्तदेहाभिमानिनः ॥
यदा मनसि वैराग्यं जातं सर्वेषु वस्तुषु ॥
तदैव संन्यसेद्विद्वानन्यथा पतितो भवेत् ।
द्रव्यार्थमन्नवस्त्रार्थं यः प्रतिष्ठार्थमेव वा ॥
संन्यसेदुभयभ्रष्टः स मुक्तिं नाप्तुमर्हति ।
उत्तमं तत्त्वचिंतैव मध्यमं शास्त्रचिंतनम् ॥
अधमा मंत्रचिंता च तीर्थभ्रांत्यधमाधमा ॥

भाषार्थ-हेशिष्य! ये लक्षण हों जिसमें वह संन्यासी अहंकाररूप पुत्रका त्याग आशारूप स्त्रीका त्याग मोहरूप घरका त्याग वित्तरूप भ्राताका त्याग (१) ममता माताका त्याग भयसुताका त्याग अज्ञान पिताका त्याग ये त्यागे तब संन्यासी कहिये घर, स्त्री, पुत्र, माता, पिता, भ्राता, कुल और धर्म इनके त्यागसे संन्यासी नहीं (२) गुरुकी वाक्य वा तत्त्वका अनुसंधान उसीमें निवास यह नहीं कि वन पर्वत या मठ या गुफामें रहे (३) जिसका चित्त निर्विकल्प समाधिमें लगा है उसको एकांतका कुछ प्रयोजन नहीं वर्णधर्मका त्यागभी न कि मुखसे यह मिथ्याज्ञानी मायासे भिन्न आत्मा और परमात्माको आत्माका धारक ऐसी बुद्धि जिसकी सो संन्यासी (४) जिसके मनके विकार नष्ट हों सो संन्यासी है(५)यदि मनसे वैराग्य नहीं और गृह वर्ण धर्म त्यागा तो वे उभयलोकसे गये भेषधारी संन्यासी हैं हे शिष्य द्रव्यार्थ अन्नवस्त्रार्थ या प्रतिष्ठार्थ जो संन्यास लेतेहैं वह कि जो ऐसे संन्यासी उभय भ्रष्टहैं उत्तम वह कि जो आत्मचिंतवन करता है मध्यम शास्त्रचिंतवन करताहै मंत्र तंत्रके देखनेवाले संन्यासी अधम हैं ग्रामदेशमें भ्रमणकरनेवाले संन्यासी महाअधम हैं इनका संग त्याज्यहै इति ।

संन्यासस्वरूप ।

श्रुति"संन्यासात्पातयेद्यस्तु पतितं न्यासयेत्तु यः इति ।
भाषार्थ-मनके विकार जो कामक्रोधादिक रागादिक मानापमान सुख दुःख

चिंतवन इन वासनाओंको "न्यासयेत्" याने वह न्यास (त्याग) करनेवाला संन्यासी है ।

तुरीयातीतोपनिषदि ।

श्लोक–संन्यासी चतुर्विधो भवति ।

भापार्थ–संन्यासी चार प्रकारके कोई शास्त्रसे छः प्रकारके कहते हैं हंस परमहंस तुरीयातीत कुटीचक बहूदक ये दो भेद हैं तिनहीमें अतीत अवधूतभी हैं तिनके कर्मस्वरूप न्यारे न्यारे कहताहूं सो सुनो ।

कुटीचकधर्म ।

श्लोक–कुटीचकः शिखायज्ञोपवीतदंडकमंडलुधरः ।
कौपीनशाटीकन्थाधरः । एकत्रान्नमदन्नपरः ॥
श्वेतोर्द्ध्वपुंड्रधारी दंडहस्त इति । पुनः । त्रिदंडहस्तः ।
सितयज्ञसूत्रकापायांबरोर्द्ध्वपुंड्रधारी इति ॥

भागवते एकादशे ।

श्लोक–बिभृयाच्चेन्मुनिर्वासः कौपीनाच्छादनं परम् ।
त्यक्तं न दंडपात्राभ्यामन्यत्किंचिदनापदि ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! कुटीचक संन्यासी गेरुरँगे वस्त्र पहिरे चुटैया राखे जनेऊ पहिरे त्रिदण्ड धारण करे सफेद मृत्तिकाका ऊर्द्ध्वपुंड्र धारण करे कमंडलु याने काठका पात्र धारण करे मठ बनायके रहे । इति । भागवतमें कहाहै कि जितनेमें अंग ढके उतना वस्त्र ले और दंड कमंडलु धारण करे अब कहैहैं कि, त्रिदंडका तात्पर्य यह नहीं कि तीन बांस एकमें बांध हाथमें ले यह तो बाहिर सूचनके अर्थ अन्तरके सुनो ।

श्लोक–मौनाऽनीहानिलयमा दंडा वाग्देहचेतसाम् ।
न ह्येते यस्य संत्यंग वेणुभिर्न भवेद्यतिः ॥

भापार्थ–तीन दंड कौन ? वचनदंड याने मौनी रहे । देहका दंड सकामकर्म न करे । चित्तका दंड प्राणायाम करे । जिसके ये दंड नहीं सो केवल बांस दंडधारी संन्यासी नहींहै ।

बहूदकसंन्यासीके धर्म ।

मूल–बहूदकशिखादिकन्थाधरस्त्रिपुंड्रधारी ।

भापार्थ–बहूदकने शिखा कंथा आदिक धारण करना त्रिपुंड्र धारण करना शिवमंत्र जपना और कर्म कुटीचकवाले करना ।

श्लोक–दृष्टिपूतं न्यसेत्पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम् ।
सत्यपूतां वदेद्वाचं मनःपूतं समाचरेत् ॥

भापार्थ–पृथ्वीमें देखकर पांव धरे वस्त्रसे छान कर जलपिये वचन सत्य बोले आचरण मन शुद्ध राखे और शरीरके निर्वाहके लिये केवल भिक्षा सो भी जैसे शास्त्रमें कहीहै ।

श्लोक–भिक्षां चतुर्षु वर्णेषु विगर्ह्यान्वर्जयंश्चरेत् ।
सप्तागारानसंक्लृप्तांस्तुष्येल्लब्धेन तावता ॥

भापार्थ–ब्राह्मणके घरसे भिक्षा ले परंतु चार प्रकारका अन्न ब्राह्मणके घरमें आवे यही चारवर्णका तात्पर्य्य है । प्रतिग्रह दान यजन अध्यापन याने पाठशालापढाना उंछवृत्ति याने पडा हुवा अन्न खेतसे बीन लाना जिसे शिल कहतेहैं ऐसे जो ब्राह्मण निर्वाह करते हों उनके सात घरोंसे भिक्षा ले । और इन गुणोंसे रहित ब्राह्मणोंकी भिक्षा न ले भिक्षाका भाग करके संन्यासी भोजन करे ।

श्लोक–बहिर्जलाशयं गत्वा तत्रोपस्पृश्य वाग्यतः ।
विभज्य पावितं शेषं भुंजीताऽशेपमाहृतम् ॥

भापार्थ–इस प्रकारकी भिक्षा कर जलके निकट जो गाँवके बाहिर नदी या तालाबहै उसके तीर जाय हाथ पांव धोय आचमन कर मार्गदोप शुद्ध कर भिक्षाके तीन भाग करे दो भाग आप खाय और एक भाग जलाशयके जीवोंको दे भोजन कर जल पिये इस प्रकारसे निर्वाह शरीरका करे फिर आत्मचिन्तन करे इति ।

परमहंसोपनिषदि–परमहंसलक्षणम् ।

श्लोक–हंसःपरमहंसस्तन्मंयपूर्वकं कटिसूत्रं कौपीनदंडकमंडलुं सर्वमप्सु विसृज्याऽथ जातरूपाधरश्चरेत्।न योगशास्त्रप्रवृत्तिःन सांख्यशास्त्राभ्यासः न मन्त्रशास्त्रव्यापारः न परप्राणिनामसंकीर्तनं परोपघातकर्म करोति तत्फलमुक्तं भवेत्॥ मधुकरे करपात्रेण पञ्चसप्त गृहाणां तु भिक्षेत क्रियाव्रतम्।गोदोहनमाकाङ्क्षे न्निष्क्रांतो न पुनर्व्रजेत् ग्राममेकरात्रं तीर्थे त्रिरात्रं पत्तनं पञ्चरात्रं क्षेत्रे सप्तरात्रमनिकेतः स्थिरमतिरनग्निसेवी निर्विकार इत्यादि।

भाषार्थ–हे शिष्य! हंस परमहंसके लक्षण सुनो हंस परमहंस इनके शिखा (चुटैया) जनेऊ कमंडलु और दंडका त्याग है इसमें प्रमाण "ज्ञानदंडो धृतो येन काष्ठदण्डो वृथा करे"।अर्थ-ज्ञानका दंड जिसने धारण किया उसे हाथमें बाँसलेनेका कुछ प्रयोजन नहीं। इति "कर उभयस्मिन्पात्रम्" अर्थ-दोनों हाथ मिलायके सरोवरमें जल पिये विचार रूप जनेऊ तृष्णाछटा सोई शिखा उसका त्याग परमहंसजाति आत्मानन्दरूप है और न हठयोगके कर्म करे न सांख्यशास्त्र देखे न कोई तंत्र मन्त्रके ग्रंथ केवल भगवत् सच्चिदानंद श्रीकृष्णके नाम कीर्तन करे। बाजा न सुने नृत्य न देखे न स्त्रियोंको देखे भिक्षा पांच वा सात घरसे लेवे देर तक न ठहरे मिले व न मिले गाय जितनी देरमें दुही जाय उतनी देर ठहरे ग्राममें एक रात्रि तीर्थमें तीन रात्रि बदरीनारायण ऐसे धाममें सप्तरात्रि ठहरे मनकी स्थिरता यही एकांत विकार जो रागादि इनसे रहित न कि अग्निको न छूनेवाला संन्यासी।

गीतायां श्रीकृष्णः।

श्लोक–अनाश्रितं कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥

भाषार्थ–हे शिष्य! श्रीकृष्णजीने महाराज अर्जुनसे कहा है कि हे अर्जुन कर्म करे यथा संध्योपासन परन्तु इनमें फलबुद्धि न करे और जो

अनाश्रित रहे भोजनेके अर्थ किसीपुरुषका आसरा न करे प्रारब्धवशमें जो मिले ताहीको पावे नाकि अग्निका त्यागी संन्यासी होताहे इति । हे शिष्य ! ये मैंने तुमसे वर्णाश्रमधर्म कहा अब सदाव्रत धर्म कहता हूं जिससे महात्माओं की प्राप्ति और मोक्षका मार्ग मिलता हे वह यहाकि आये गये का मुट्ठी अन्नसे सत्कार करना इसको एक किसानके इतिहासद्वारा भले प्रकार समझायके कहता हूं सुनो ।

इतिहास ।

एक किसान खेती करता था वहाँ एक कुंवा था परंतु कोई वृक्ष न था इसकरण ज्येष्ठमासमें धूपसे दुःखी हो वाने यह विचार एक वटका वृक्ष लगाया जब वह बडा हुआ तब पथिक लोग धूपसे दुःखी हुए छायाको देखकर ठहरने लगे एक दिन एक महात्मा सिद्धियोंको वशकिये उसी वृक्षके नीचे ठहरे और किसानको बुलाय उससे पूछाकि यह वृक्ष और कुवाँ किस धर्मज्ञकाहै यह सुन किसान हाथ जोर कर बोला कि यह सब आपकाहै तब महात्माने किसानसे कहा कि एक लोटा जल भरलावो किसानने ऐसा सुनतेही लोटा माँज जलसे भर महात्माको दिया जब महात्माने जल पिया तो जाने कि जल खाराहै किसान से कहा कि तेरे कुवाँका जल खारा है यह सुन किसान बोला कि आपकी कृपा से मीठा हो जायगा तब महात्माने एक कंकर भगवत्नाम लेकर उसमें डाल दिया और कुएंका पानी मीठा होगया यह देख किसान महात्माका चेला हुआ कुछ काल तक महात्माने वहां निवासकिया और उपदेश देकर फिर चल दिये यहाँ किसानने विचारा कि धर्म सर्वोपरि है देखो हमने अपने स्वार्थके लिये वृक्ष लगाया था इससे अलभ्य लाभ प्राप्त हुआ कि कुवाँका जल मीठा हो गया और उससे हजारों मन नाज प्राप्त होने लगा और भगवत्प्राप्तिका मार्ग महात्मा बतागये यह सोच किसाने सैकडों वृक्ष लगवादिये और धर्मशालाएँ बनवाय दईं उसमें अन्नक्षेत्र लगाय दिये कि जिससे आये गये का सत्कार होने लगा इस प्रकारसे अनेक महात्मा आय२ अनेक तरहसे भगवत्प्राप्तिका

उपाय बताय गये उससे वह किसान इस लोकका सुख भोग कर अंतमें नित्य श्रीकृष्णधाम गो लोकका निवासी हुआ और जन्म मरण से छूटा। इति। इस लिये हेशिष्य! यह सदाव्रत कल्पवृक्ष जैसे वृक्षके ऊपर कौआ गीध बैठते हैं वो कोई कालमें उसपर हंस भी बैठतेहैं ऐसे ही रोज कंगाल आतेहैं तो अन्न जलके आसरे कभी महात्माभी कृपाकरते हैं जैसे लगानेवाला वृक्षकी सेवा करता है वैसे सदाव्रतका देनेवाला भी वैसे उसपर दृष्टि कर प्रीतिरूपी जलसे सींचता रहे क्यों कि जिससे हरा बना रहे इति।

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मज अ०र०प्रियादासशुक्लकृत श्रीशास्त्रसारसिद्धांतमणौ धर्मप्रकरणं सम्पूर्णम् ॥ ४ ॥

अथ ज्ञानप्रकरणम् ५.

शिष्यवाक्यं-गीतायाम्।

श्लोक—किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं कर्म पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते॥

भाषार्थ—हे गुरुजी महाराज! यह कृपाकर कहो कि जब पुरुषका कर्म और धर्मद्वारा अंतःकरण शुद्ध होजाताहै तब फिर क्या कर्तव्य है और ब्रह्मका स्वरूप कैसे जानाजाता है और गीतामेंभी जो अर्जुनने प्रश्न किया कि अधिभूत अध्यात्म अधिदैव इनके भेद वह कहो और यह भी कथन करो कि मायामें जीव कैसे फँसा है और कैसे मुक्त होताहै।

गुरुवाक्य।

श्लोक—ज्ञानं निःश्रेयसार्थाय पुरुषस्यात्मदर्शनम्।
यदाहुर्वर्णये तत्ते हृदयग्रंथिभेदनम्॥

भाषार्थ—हे शिष्य! सावधान हो सुनो कि यह संसार मिथ्या मायाका जाल है इससे निकलनेका उपाय केवल एक ज्ञान है जैसे हृदयमें जो मोहका आवरण तिसको छेदन करता है तब आत्मदर्शन होता है ऐसा शास्त्र कहते हैं।

भागवते तृतीयस्कंधे ।

श्लोक–अतो भगवतो माया मायिनामपि मोहिनी ।
यत्स्वयं चात्मवर्त्मात्मा न वेद किमुतापरे ॥

भापार्थ–हे शिष्य!अविद्या याने अज्ञान ताका कारण माया सो माया कैसी है याने भगवान्से अन्य मायावालाकोभी मोहनेवाली है सो अत्यंत दुस्तर है इससे बचनेवाला उपाय केवल महात्माओंका संग ज्ञानका संपादन और भगवत्की कृपा मुख्य है ।

श्लोक–मायैव विश्वजननी नान्या तत्त्वधिया परा ।
यदा नाशं समायाति विश्वं नाना तदा खलु ॥

भापार्थ–यह माया संसारकी माता है जाके चार पुत्र हैं काम क्रोध मोह लोभ अज्ञानता पति सोई राजा सो ज्ञान उत्पत्तिसे ये सब द्वंद्व दूर होतेहैं जब इसके नित्यता या अनित्यताका भान हो विश्वही नाशसे प्रतीत होताहै ।

गीतायां सप्तमे ।

श्लोक–दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यंते मायामेतां तरन्ति ते ॥

भापार्थ–हे शिष्य! देखो श्रीमुख याने श्रीकृष्ण भगवान्नेही निज मुखसे अर्जुनसे कहा है कि यह मेरी माया अत्यंत दुस्तर है इससे कोई पार नहीं जासकता जिसपर मेरी कृपा हो तिसकी छूटतीहै और दूसरा उपाय ज्ञानसे जब इसके औगुन लक्ष्य हो आतेहैं यथा स्त्री पुत्र गृह धन इनमें स्नेह सोई कारागृह है तिसका प्रमाण सुनो ।

योगवाशिष्ठमें ।

श्लोक–तावद्रागादयः स्तेनास्तावत्कारागृहं गृहम् ।
तावन्मोहोंघ्रिनिगडो यावज्ज्ञानं न जायते ॥

भापार्थ–तबतक रागादि चोरोंका भय है और तबतक घर कारागृह याने जेहलखाना है और तबतक स्त्री पुत्रका मोहरूप निगड (बेडी) है कि जबतक तुम्हें ज्ञान नही उत्पन्न होता है अर्थात् ज्ञान उत्पन्न होनेसे ये ऐसे न रहैंगे

और संसारकी अनित्यता प्रतीत होगी सबसे वैराग्य होगा अभी तुम इन्हें प्रीतिसे सेवन करतेहो ऐसा श्रीरघुनाथजीसे वशिष्ठजीने कहा है पुनः कहते हैं।

विचारदीपिकायाम्।

श्लोक—इमे च दारात्मजसेवकादयः समाश्रितानामथ कर्म वा निजम्।
गतिस्तथैषां ननु का भविष्यति मयि प्रयाते परलोकमंततः॥

भावार्थ—हेशिष्य! पुरुष कहता है कि मेरी स्त्री मेरा पुत्र मेरा भ्राता मेरा नौकर इन सबका मैं ही पालन करता हूँ मेरे विना ये भूखे मरेंगे यही अज्ञानता है क्योंकि मोह जन्म मरणका मूलहै जब तुम न थे तब तुम्हारे माता पिताका कौन पालन करता था इसीको विचारवान् समझते हैं कि उनकी पूर्वसंसिद्धि पालती है और अब न रहेंगे तौ भी इनका भाग्य इन्हें पालेगा ऐसा विचार सत्पुरुष ज्ञानवान्केही उत्पन्न होता है।

अध्यात्मरामायणे।

श्लोक—सुखस्य दुःखस्य न कोपि दाता परो ददातीति कुबुद्धिरेषा।
अहं करोमीति वृथाभिमानः स्वकर्मसूत्रग्रथितो हि लोकः॥

भावार्थ—हे शिष्य देखो अध्यात्मरामायणमें लक्ष्मणप्रति श्रीरघुनाथजीने कहा है कि सुख और दुःख दोनोंका देनेवाला अपने पूर्वके संचित कर्मके भोग सो प्रारब्ध है इसीके अनुसार यह पुरुष भोगता है इसमें अज्ञानी कहता है कि अमुकसे लाभ और अमुकसे दुःख मिलता है यही उनकी अज्ञानताकी भ्रांति है ऐसेपुरुष पापरत मोहवश अनर्थद्वारा धन उपार्जन कर स्त्रीपुत्र का पालन करते हैं और आप नरकगामी होते हैं।

वाल्मीकीये।

श्लोक—पापैरनेकैस्तु यदर्थमादराद्वित्तं समानीय करोमि संव्ययम्॥
ते बांधवा वै मम दुःखभागिनः किं वा भविष्यंति गतस्य रौरवम्॥

भावार्थ—हे पुरुषो जिन स्त्री पुत्र कुटुंबको अपना मान और अनेक प्रकार के पाप तथा छल पाखंड चोरी इत्यादिद्वारा धन ले तिन्हें पोषण करते हैं

तिसका फल परिणाममें रौरवादिक नरक भोगने परेंगे सोई बात गर्भोपनिषदसे भी प्रमाणित और सिद्ध है ।

गर्भोपनिषदि ।

श्लोक–यन्मया परिजनस्यार्थे कृतं कर्म शुभाशुभम् ।
एकाकी तेन दह्येहं गतास्ते फलभोगिनः ॥

भाषार्थ–हे शिष्य ! देखो जब यह जीव गर्भमें नाना प्रकारके क्लेश रुधिर मांसमें संगलित होता है तब सोचता है कि मैंने जिनके हेतु अनेक प्रकारके पापद्वारा द्रव्य संग्रह कर उन्हे पोषण करा और शेष बची सो उन्हीं को दे आया सो इस समयमें मैं जठराग्निसे तप्त हो क्लेश सह रहा हूँ परन्तु वे इसमें कोई नहीं दिखाते ।

विवेकमार्तंडे ।

श्लोक–स्वयं समेत्यैकतरुं विहंगमाः प्रातःप्रयांतीह दिशं स्वकां स्वकाम्।
त्यक्त्वा यथान्योन्यमगं च तं तथा सर्वे समायांति च यांति बान्धवाः॥

भाषार्थ–देखो सायंकालमें जैसे एक वृक्षपर नाना प्रकारके पक्षी बैठते हैं और प्रातःकाल होतेही सब अपनी २ दिशाओंको चले जातेहैं ऐसे ही पुत्र कलत्र भी ये सब पक्षीरूप हैं । आयुके अन्तरूप दिनमें सब तितर बितर होजाते हैं कालरूप बाज सब पंछीरूप जीवोंको खाया करता है यह उपाधि ज्ञानसे नष्ट होती है ।

योग वाशिष्ठे ।

श्लोक–यथा काष्ठं च काष्ठं च समेयातां महोदधौ ।
वायुवेगेन विश्लेषस्तथा सर्वे कुटुंबिकाः ॥

भाषार्थ–जैसे महोदधि (समुद्र) में दो लकडी एक ठौर कुछ कालतक रही पश्चात् तूफान याने वायुके वेगसे न्यारी२होगई इसी तरह यह सब कुटुम्ब पुत्र कलत्र संसाररूप समुद्रमें एक जगह है और कालरूप तूफान भिन्न भिन्न सबको करता है इसलिये इनमें मोह करेगा तो कपोत कपोतीसम दुःख पावेगा इति ।

महाभारते।

श्लोक–यथाकपोतोऽन्नकणाभिवाञ्छयाशिचंविशन्नेतिदुरन्तबन्धनम्।
कुटुम्बजाले विषयाशयाऽविशं तथा विमुच्येय कथं जगत्पते॥

भाषार्थ–एक जंगलमें एक वृक्षपर एक कबूतर एक कबूतरी रहतेथे। वहीं उनके बच्चे थे कोई समयमें दोनों पक्षी कहीं चाराको गयेथे इतनेमें बधिकने चारा डाल उनके घोंसलेके बच्चे जालमें फांस लिये तबतक दोनों पक्षी आगये अपने बच्चोंको जालमें फँसे देख दुःखवश आप भी फँस प्राण गंवाये यही प्रकार अज्ञानीपुरुषोंके है। स्त्री पुत्र कुटुम्बके मोहमें पड जन्म मरणका क्लेश उठातेहैं।

श्रीमद्भागवते।

श्लोक–लोहदारुमयैः पाशैर्दृढबद्धो विमुच्यते।
स्त्रीधनादिषु संसक्तो मुच्यते न कदाचन॥

भाषार्थ–हे शिष्य! देखो जो पुरुष लोहेके फांसमें बँधा होताहै वह भी कभी छूट जाताहै परंतु स्त्री धन पुत्रके स्नेहमे फँसा वह विना महात्माओंके संगके नहीं छूटता है और ज्ञानद्वारा इनमें दोष देखे तब इनसे चित्त उपराम होताहै।

योगवाशिष्ठे स्त्रीलक्षणम्।

श्लोक–मांसपांचालिके यस्तुयंत्रोल्लोलेंगपंजरे।
स्नाय्वस्थिरक्तशालिन्यःस्त्रियः किमिव शोभनाः॥

भाषार्थ–हे पुरुष! जो तू कहताहै कि,स्त्री मेरी सो विचार कर तेरा क्या है स्नायु रुधिर हाड लार कफ इनपर चाम मढाहै अंगअंग में घिन भरहै पुनः प्रमाण।

विचारदीपिकायाम्।

श्लोक–इयं च मुक्तालिलसत्पयोधरा क्वणन्मणिव्रातनितंबमंडला।
विभाति रम्या ललनाऽविचारतो विचारदृष्टया तु कुमांसपुत्रिका॥

भाषार्थ–हे पुरुष! स्त्री नहीं नीकीहै जो आभूषणोंसे आच्छादितहै

इसलिये मनोहर लगतीहै जैसे कपोलपै झुमका पयोधरपर मोतियोंकी माला नितंबपै कौंधनी पायनमें कडा इसीसे शोभा नहीं तो मांसकी पुतरियामें जो प्रीति दृष्टिसे बँधैगा तो जैसे नीमच ऋपि उसीके वशपर पछताये वैसे जो विचार शून्यहैं ते पछिताते हैं इतिहास ।

श्लोक–एषा तु वद्धालकदामभिर्दृढं कृष्ट्वा च हावांचितलोलवीक्षणैः । मामङ्गना नर्तयतीह संततं नाद्यापि लज्जे कपितुल्यतां गतः ॥

भापार्थ–यह कथा पुराणमें विख्यात है कि नीमच ऋपि जंगलमें अखंड तप करते थे सो यह तप देखि भयभीत हुए इंद्रने मेनका अप्सरा भेजी इसका रूप देखि आसक्त हुए मुनिने इसके संग बहुत कालतक आनंद विलास किया । एक दिन मुनि एक पर्वतकी चट्टानपर अकेले बैठे थे वहां एक बूढा बंदर था वहां बाजीगरने एकबंदरिया बाँध चाराडाल फाँस लगा दिया यह देख जंगलमें बंदर अकेला था फँस गया उसे पकड बाजीगर गाँव गाँव नचाने लगा यह देख मुनिने विचारा कि यह अप्सरा हमें भी कामदंडद्वारा नचाती है मैं इसके रूपमें आसक्तहो वृथा जन्म गँवा रहाहूं। यह विचार अप्सराको त्याग गुफामें प्रवेश कर भगवत्का भजन कर मुक्त हुए इसलिये जो ज्ञानी होते हैं स्त्रीके जालमें नहीं फँसते हैं ।

पुत्रवान्को दुःख पंचदशी ।

श्लोक–अलभ्यमानस्तनयः पितरौ क्लेशयेच्चिरम् ।
लब्धोपि गर्भपातेन प्रसवेन च बाधते ॥
जातस्य ग्रहरोगादि कुमारस्य च मूर्खता ।
उपनीतेप्यविद्यत्वं मनोदाहश्च पंडिते ॥
पुनश्चपरदारादि दारिद्र्यं च कुटुंबिनः ।
पित्रोर्दुःखस्य नास्त्यन्तो धनी चेन्म्रियते तदा ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! देखो ऐसेही पुत्रके विषे सिवाय दुःखके सुखका नाममात्र है जब पुत्र न था तब अनेकप्रकारके उपाय पुरश्चरण कराया जब

गर्भमें आया तब बंधेज कराया उत्पत्तिमें स्त्रीके प्राणनाश यदि हुए यहभी दुःख जब पैदा हुआ तब रोगग्रहादिककी पीडा विवाह न हुआ परस्त्रीगामी यहभी दुःख विद्या न पढा मूर्ख रहा यहभी दुःख धन न पैदा करके घरका धन खोया यहभी दुःख चोरी कर कारागारमें गया यह दुःख मर गया यहभी महान दुःख इस लिये जो ज्ञानी हैं वे पुत्रके अर्थ उपाय नहीं करते उत्पन्न हुआ तो विशेष मोह नहीं करते पुनः प्रमाण ।

ज्ञानचिंतामणौ ।

श्लोक–सूनुर्मयायं परिपूज्य देवता लब्धः प्रयत्नेन च वर्धितोऽधुना ।
मामेवमूढः परिशिक्षितः स्त्रिया द्वेष्टीत्यहो भाग्यविपर्ययो हि मे॥

भावार्थ–जब पुत्र न था तब नानाप्रकारसें देवता पूजे जब पुत्र हुआ तब द्रव्य लुटाया और पढाय गुनसिखाय बडा कर दिया जब विवाह हुआ स्त्री आई कमाने लगे तब आधा घर तक बँटाय अलग हो रहे कोई हितकी बात कहो तो बदले लडने लगै और माता पिताको कटु वाक्य कहैं सपूत हुआ तो कुशल नहीं कुपूत हुआ तौ कुशल नहीं–" दोहा–जिमि माठा अपने गुनन, डारत दूधविगार । मियादास त्यों कुपुत सुत, डारत कुलै उजार ॥ " और भी पुराणोंसे धुंधकारी कंस दुर्योधन आदिकी करनी विदितहै इस लिये पुत्रमेंभी प्रीति कम होनी चाहिये ।

धनके दोष वायुपुराणमें ।

श्लोक–अर्थानामर्जने क्लेशस्तथैव परिपालने ।
नष्टे दुःखं व्यये दुःखं धिगर्थान् क्लेशकारिणः ॥

भावार्थ–धन जब न पैदा हुआ तब देश विदेश नानाप्रकारके क्लेश सहि पैदा किया फिर ताकी रक्षामें दुःख चोरोंसे भय शत्रुसे भय जो नाश हुआ तो जन्मपर्यंत चिंता दुःखसे व्याप्त पुनः ।

पंचदशी ।

श्लोक–अनेकयत्नैः समुपार्ज्य सर्वतः सदातिरक्षाक्षतिदुःखदं धनम् ।
व्ययं कुकार्येषु करोम्यहो पदं स्वकं स्वकीयेन करेण हन्यते ॥

भाषार्थ–प्रथमतो धनकी प्राप्तिमें पराधीनता पुनः रक्षा फिर कुकर्मद्वारा नष्ट होजाना सो आपही पैदा कर और आपही नाशकर पछतावे हैं सो तीन दुःख धनमें कहेहै तिसका प्रमाण वेदांतमुक्तावली "प्राप्तोर्थो दुःखाय संरक्षणाय विनाशनाय" इति इस प्रकारसे जो कहो कि विना धन शरीरका निर्वाह कैसे होगा इस लिये कहते हैं कि भोजनादिका देनेवाला परमेश्वर सब जगह है इसमें प्रमाण ।

विचारप्रदीपिकामें ।

श्लोक–जले स्थले योपि च शैलमस्तके सदैव पुष्णाति जगच्चराचरम् ॥
स मे न किं दास्यति विश्वपालकोशनं किमर्थं तु गतोस्मि दीनताम् ॥

भाषार्थ–हे शिष्य! देख जो परमात्मा विश्वका पालनहार है सो तेरे को भी पालताहै देख समुद्रके भीतर जो जीव हैं और जो बनमें हैं तथा पर्वतपर हैं वा ग्राममें हैं चित याने प्राणधारी मनुष्यसे चींटीपर्यंत अचितवृक्ष जे पर्वत की चोटी परहैं उन्हेंभी पालन करते हैं अंतरिक्षमें देवयोनी तिन्हें अमृतद्वारा पोषण करते हैं फिर तूतो मनुष्यहै वृथा सोचता है प्रमाण ।

पांडवगीतामें ।

श्लोक–भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वंति वैष्णवाः ।
योसौ विश्वंभरो देवः स भक्तान्किमुपेक्षते ॥

भाषार्थ–हे वैष्णव ! तू वृथा चिंता करताहै इनते विश्वका पालन कौन करताहै सो तेरा भी पालन करेगा तू भोजन आच्छादनकी चिंता मत कर और ज्ञानका संपादन कर जिससे वासना नाश हो देख यह मनुष्यका तन अतिकठिनतासे प्राप्त होता है अति दुर्लभहै ।

बृहन्नारदीये ।

श्लोक–लब्ध्वापि देवेप्सित मानुषं वपुर्नीतं समस्तं गृहकृत्यकल्पनैः ॥
चिंतामणिं हस्तगतं विहाय वै क्रीतं मया काचदलं कुबुद्धिना ॥

भाषार्थ—जिस मनुष्यदेहकी देवता भी इच्छा करते हैं उसे प्राप्त हो भगवत्के दर्शन होते हैं सोई चिंतामणिवत् है इसको काचरूपी विषयसे बदलता है यह अज्ञानता त्याग ज्ञानका संपादन कर यह नर तन दुर्लभ है "दुर्लभो मानुषो देहो देहिनां क्षणभंगुरः" इत्यादि अर्थ इसप्रमाण से भी सिद्धहै कि मनुष्यका देह दुर्लभहै और अनित्यहै एक क्षण आधी घडीमें नाश हो जाता है सो अनेकयोनियोंमें भ्रमते २ पश्चात् मनुष्यका तन मिलताहै तहां गर्भनिवाससे क्लेश भोगताहै ॥ ९

अथर्वणि गर्भोपनिषदि ।

श्लोक—यद्गर्भोपनिषद्वेद्यं गर्भस्य स्वात्मबोधकम् ।
शरीरापह्नवात्सिद्धं स्वमात्रं कलये हरिम् ॥
पञ्चात्मकं पञ्चसु वर्तमानं षडाश्रयं षड्गुणयोगयुक्तम् ।
तं सप्तधातुं त्रिमलं द्वियोनिं चतुर्विधाहारमयं शरीरम् ॥

भवति पंचात्मकः कस्मात् पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशमित्यस्मिन् पंचात्मके शरीरे का पृथिवी का आपः किं तेजः को वायुः किमाकाशमित्यस्मिन्पंचात्मके शरीरे तत्र यत्कठिनं सा पृथिवी यद् द्रवं ता आपः यदुष्णं तत्तेजः यत्सञ्चरति स वायुः यत्सुषिरं तदाकाशमित्युच्यते तत्र पृथिवीधारणे आपः पिंडीकरणे तेजः प्रकाशने वायुर्व्यूहने आकाशमवकाशप्रदाने पृथक् श्रोत्रे शब्दोपलब्धौ त्वक् स्पर्शे चक्षुषी रूपे जिह्वा रसने नासिका घ्राणे उपस्थ आनंदने अपानमुत्सर्गे बुद्ध्याबुध्यति मनसा संकल्पयति वाचा वदति । षडाश्रयमिति कस्मात् । मधुराम्ललवणतिक्तकटुकषायरसान् विन्दतीति । षड्जऋषभगांधारमध्यमपंचमधैवतनिषादाश्चेतीष्टानिष्टशब्दसंज्ञाः प्रणिधानाद्दशविधा भवन्ति ॥ १ ॥ शुक्लो रक्तः कृष्णो धूम्रः पीतः कपिलः पांडुर इति । सप्तधातुकमिति

कस्माद् यदा देवदत्तस्य द्रव्यादिविषया जायन्ते । परस्परं सौम्यगुणत्वात् । षड्विधो रसो रसाच्छोणितं शोणितान्मांसं मांसान्मेदो मेदसः स्नायवः स्नायुभ्योऽस्थीनि अस्थिभ्यो मज्जा मज्जातः शुक्रं शुक्रशोणितसंयोगादावर्तते गर्भो हृदि व्यवस्थां नयति हृदयेऽन्तराग्निः अग्निस्थाने पित्तं पित्तस्थाने वायुः वायुतो हृदयं प्राजापत्यात्क्रमात् ॥ २ ॥ ऋतुकाले सम्प्रयोगादेकरात्रोषितं कललं भवति । सप्तरात्रोषितं बुद्बुदं भवति । अर्धमासाभ्यंतरे पिण्डो भवति । मासाभ्यंतरे कठिनो भवति । मासद्वयेन शिरः संपद्यते । मासत्रयेण पादप्रदेशो भवति । अथ चतुर्थे मासे गुल्फजठरकटिप्रदेशा भवंति । पंचमे मासे पृष्ठवंशो भवति षष्ठे मासे मुखनासिकाक्षिश्रोत्राणि भवंति । सप्तमे मासे जीवेन संयुक्तो भवति । अष्टमे मासे सर्वलक्षणसम्पूर्णो भवति । पितू रेतोऽतिरेकात्पुरुषः । मातू रेतोऽतिरेकात्स्त्री उभयोर्बीजतुल्यत्वान्नपुंसको भवति । व्याकुलितमनसोऽन्धाः खञ्जाः कुब्जा वामना भवंति । अन्योऽन्यवायुपरिपीडितशुक्रद्वैविध्यात्तनु स्यात्ततो युग्माः प्रजायन्ते । पंचात्मकः समर्थः पंचात्मिका चेतसा बुद्धिर्गंधरसादि ज्ञानाक्षराक्षरमोङ्कारं चिन्तयतीति तदेतदेकाक्षरं ज्ञात्वाऽष्टौ प्रकृतयः षोडश विकाराः शरीरे तस्यैव देहिनः अथ मात्राशितपीतनाडीसूत्रगतेन प्राण आप्याय्यते । अथ नवमे मासि सर्वलक्षणज्ञान करणसम्पूर्णो भवति । पूर्वजातिं स्मरति शुभाशुभं च कर्म विन्दति ॥ ३ ॥ पूर्वयोनिसहस्राणि दृष्ट्वा चैव ततो मया ॥ आहारा विविधा भुक्ताः पीता नानाविधाः स्तनाः ॥ जातश्चैव मृतश्चैव जन्म चैव पुनः पुनः ॥ यन्मया परिजनस्यार्थे कृतं कर्म शुभाशुभम् ॥ एकाकी तेन दह्येहं गतास्ते फलभोगिनः ॥

अहो दुःखोदधौ मग्नो न पश्यामि प्रतिक्रियाम् ॥ यदि योन्याः प्रमुच्येहं तंप्रपद्ये महेश्वरम् । अशुभक्षयकर्तारं फलमुक्तिप्रदायकम् ॥ इति गर्भोपनिषत्सारांशः ॥

भाषार्थ–हे शिष्य ! अब तुझको गर्भ उपनिषद् कहताहूं जिस गर्भकी उत्पत्ति सुने वैराग्यद्वारा आत्मबोध होता है । आत्मबोधसे परमात्माकी प्राप्ति होती है । पंचभूतोंसे शरीरकी उत्पत्ति होतीहै वह शरीर स्थूल होताहै पृथ्वी आप् तेज वायु आकाश इनहीसे पांचों ज्ञानेंद्रिय होवीं हैं नाक, कान, नेत्र, जिह्वा और त्वचा इनकी उत्पत्ति सृष्टिकी उत्पत्तिमें आगे कहेंगे। इस शरीरका छः रसोंसे पोषण होताहै और चार प्रकारके भोजन हैं । चोष्य याने ऊखका चूसना लेह्य आम्रादिक चाटना भोज्य रोटी दाल भात इत्यादिका । चव्य चबेना चनादिक तिनमें छः प्रकारके रसहैं । मधुर मीठा अम्ल खट्टा लवण खारी तिक्त कटु कषाय इनको जठराग्नि पाचन करता है तिससे सात प्रकारकी धातु पैदा होती हैं शुक्लरक्तकृष्णधूम्रपीत कपिलपांडुरुधिरमेदलारकफशुक्रहाड इन सातोंका सार कामदेवहै सो पुरुष के हृदयमें स्त्रीके रज होती है जब स्त्री रजोधर्म याने रजस्वला हुई तब कामातुर होती है तब पतिके संग पाचवें रोज रमण करती है तब उसके गर्भमें जो वीर्य रहे वह एकरात्रिमें कलल बुद्बुद सात रोजमें पिंड पन्द्रह दिनमें पिंड पुरुषका पुष्ट मासमें दो मासमें शिर तीसरे मासमें दोनों पॉव चौथे मासमें गुल्फ कटि उदर ये तीन उत्पन्न होते हैं पँचयें मासमें पीठ होवैहै छठयें मासमें मुख नासिका नेत्र कान होवें । सप्तम मासमें चेतनता प्रगट होवै है । अष्टम मासमें सर्वलक्षणों करके सम्पूर्ण होवै है । नवें मासमें सर्वज्ञान करके दुःखसुखका अनुभव कर अपने पूर्वकर्मों का स्मरण करता है अत्यन्त वैराग्यको प्राप्त होता है कहता है कि हे ईश्वर! मैं अपने अनिष्ट कर्मका फल पाचुका हजारों योनियोंमें हजारों गर्भमें नाना क्लेश सहे हजारों

स्तनपान कर पुनः गर्भके दुःखमें प्राप्त हुआ जो गर्भमें जीव क्लेश पाता है उसको कहे है ।

शारीरकभाष्ये ।

श्लोक–अधःशिरस्केन दुरन्तसंकटे मया यदम्बाजठरे विनिश्चितम् ॥
स्मरामि नाद्यापि तदुद्धताशयो मुरारिमाया खलु दुस्तरा यतः॥

भापार्थ–जब तू जठराग्निके दुखसे दुःखी था नीचाशिर कर तपता था मल मूत्र क्रिमियोंमें फँसा था तब तू ज्ञान कथता था कि हे नाथ ! अब दुष्कर्म न करूंगा सो कहेहैं ।

कूर्मपुराणे ।

श्लोक–करोमि दुष्कर्म सदा प्रयत्नतः फलं तु वांछामि सुखं सुकर्मणः॥
करंजमारोप्य तु केन भुज्यते फलं रसालस्य वतेयमज्ञता ॥

भापार्थ–जब यह गर्भमें था तब नाना प्रकारका ज्ञान कहता था कि मैंने प्रयत्न कर दुष्कर्म किये उन हीका फल ये भोग रहा हूँ हे नाथ! अब क्षमा करो जो उत्पत्ति हो मायाके झकोरे आलस्य मद विषय इनपर मत्तहो मुरारिका नाम भी भूला ।

ब्रह्माण्डपुराणे ।

श्लोक–कोहं कथं केन कुतः समुद्गतो यास्यामि चेतः क्व शरीरसंक्षये ।
किमस्ति चेहागमने प्रयोजनं वासोत्र मे स्यात्कतिवासराणि वाः॥

भापार्थ–जब तू गर्भके बाहर जन्म लेकर आया तब तू परमेश्वरका नामभी भूल गया और जन्म मरण गर्भवासकी तो बात कहा यह भी ख्याल नहीं कि कहांसे आयाहूं और कहां जाऊंगा काहेको प्रगट हुआ हूं इस मनुष्यतन धारनेका क्या प्रयोजन कबतक रहूंगा फिर किस योनिमें और कहाँ जाऊंगा कहाँ तौ कहताथा कि अब जो मनुष्यतन पाऊँ तो परमेश्वरका गुणानुवाद मुखसे गाऊँ श्रवणसे सुनों सो तौ भूल गया तू उस संसारवृक्षकी मायाठंढीछाया पाय मोहनीदमें अचेतहै सो तू इस वृक्षके गुण सुन फिर इसमें प्रीति कर।

शंकराचार्योक्तलक्ष्मीनरसिंहस्तोत्रे।

श्लोक—संसारवृक्षमघबीजमनंतकर्मशाखाशतं करणपत्रमनंगपुष्पम्॥
आरुह्य दुःखफलतः पतितो दयालुर्लक्ष्मीनृसिंह मम देहि करावलंबम्॥

भापार्थ—हे शिष्य! संसाररूपीवृक्ष ताकी उत्पत्ति पाप बीज, अनंतकर्म सोई शाखा, इच्छा पत्र, कामदेव फूल, तामें जन्ममरणरूपी दुःख फल, ताके आसरे याने मायाकी छायामें कबतक ठहरेगा ताते ज्ञानद्वारा इनसे बच।

विचारदीपिकायां—शिष्यवाक्यम्।

श्लोक—इदं जगच्चित्रचरित्रचित्रितं विनिर्मितं केन कथं कुतस्तथा॥
मृषाऽमृषा वापि ततो विलक्षणं भवेद्यथाऽनादि किमादिमान्मुने॥

भापार्थ—हे गुरुजी महाराज! अब यह कृपा कर समुझायके कहो कि यह जगत् (संसार) चमत्कारी चित्रवत् है जैसे कागजपरके चित्रकी कोई नित्यता नहीं ऐसे इसकी भी नहीं जिस्में तीन लोक चौदह भुवन सप्तद्वीप नौ खंड हैं जिनमें मनुष्य पक्षी पशु राक्षस देव किन्नर इत्यादि रहते है ऐसे संसारको किसने रचा किस हेतु से रचा यह आदि है या अनादि है इसका नियंता है या नही सो कहो।

गुरुवाक्यमृग्वेदे ऐतरेयोपनिषदि।

श्लोक—आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीन्नान्यत् किंचन
मिषत् स ईक्षत लोकान्नुसृजा॥ इति

भापार्थ—हे शिष्य! पहिले एक परमात्माही एक केवल था फिर उसकी इच्छा हुई कि मैं बहुत होऊं तिसके प्रमाणमें।

श्रुति "एकोहं बहु स्याम्" इति

भा०—तब उसकी ऐसी उच्छा होतेही माया प्रगट भई वह माया जगतका मूलकारण है प्रमाण।

कृष्णयजुर्वेदकी श्वेताश्वतरोपनिषद्में।

श्लोक—मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्।

भापार्थ–यह माया सर्वभूत जगतकी उत्पत्तिके हेतु है इसको साख्यवादी प्रकृति कहते हैं इसका अधिष्ठाता परमात्मा है तहां प्रमाण ।

गीतायां श्रीकृष्णवाक्यम् ।

श्लोक–प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः ।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् ॥

भापार्थ–हे अर्जुन! मैं अपनी इच्छासे माया प्रगट करता हूं उस मायाका मैं प्रेरक हूँ यह सृष्टि कल्प कल्पमें उत्पन्न करता हूं इसका कारण मेरे विना दूसरा कौन है अर्थात् इसमें अन्यका कोई प्रयोजन नहीं ।

शिष्यवाक्यंब्रह्मांडपुराणे ।

श्लोक–स्वकीयमुद्दिश्य किलेतरस्य वा प्रयोजनं किं नु विना प्रयोजनम्॥
विनिर्मितं वै जगदेतदीश्वरो वदैतदज्ञानतमोनभोमणे ॥

भाषार्थ–हे गुरुजी! अज्ञानतमके नाशनवारे सूर्य्यवत् आप यह कहो कि जो आपने कहा कि जगत्का ईश्वरने निर्माण मायाद्वारा किया अपने प्रयोजनके अर्थ या औरके प्रयोजनके अर्थ जो कहो कि भगवत्का कुछ प्रयोजन नहीं तो बिना प्रयोजन यह बात संभवे नहीं ।

गुरुवाक्य ।

श्रुति "आप्तकामोस्म्यस्पृहः" ।

भापार्थ–ईश्वर आप्तकाम याने उसे कोई कामना नहीं इसी कथनपर पुनः प्रमाण ।

गीतायां श्रीकृष्णवाक्यम् ।

श्लोक–न मां कर्माणि लिंपंति न मे कर्मफले स्पृहा । इत्यादि

भापार्थ–हे अर्जुन मेरेमें जगत्की उत्पत्ति नाशका सुख दुःख नहीं क्यों कि उसके फलकी इच्छा नहीं मैं निःस्पृह हूं ।

शिष्यवाक्यंसांख्यदर्शने ।

सूत्र "प्रयोजनमनुद्दिश्य मंदोपि न प्रवर्तते"

भापार्थ—हे गुरुजी महाराज ! जो तुमने श्रुति और गीताके कई प्रमाण कहे कि भगवत्का कुछ प्रयोजन सृष्टिके रचनेमें नही । तो विना प्रयोजन कोई पुरुष किसी कार्यका आरम्भ नहीं करता तो वे तो परमेश्वर हैं यह समुझायकर कहो ।

गुरुवाक्यं ब्रह्मांडपुराणे ।

श्लोक—सदाप्तकामस्य तु नात्महेतवे न चेतरस्यापि न चाप्यहेतुका ॥
जगत्क्रिया क्रीडनमेव केवलं विभोर्वदन्तीह तु वेदवादिनः ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! ईश्वर परिपूर्णहैं उनके कोई कामना नहीं ईश्वर अकामभी हैं परन्तु यह सृष्टिलीला उनके क्रीडाकरनेके अर्थ है । दृष्टांत जैसे राजा अपने खेलने याने कौतुकके अर्थ विचित्र बाग उनमें महालय अर्थात् बडे मकान पर्वतोंपर बनवाते हैं । ऐसे भगवत्की इच्छा लीला विहारकी होती है तब जगत्को इच्छासे प्रगट करता है उसमें नाना लीलाएँ करे फिर निजस्वरूपपर लक्ष्य कर शांत होजाता है कि जैसे पहिले सत्यरूप था तहां प्रमाण ।

सामवेदे छान्दोग्योपनिषदि ।

श्लोक—"सदेव सौम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयम् ।"

भापार्थ—देखो उपनिषदमें भी कहाहै कि एक पहले ब्रह्मही अद्वितीय इसलिये परमात्मासेही जगत् उत्पन्न हुआहै वह जगत्की उत्पत्ति सुनो ।

श्रीमद्भागवते तृतीये स्कं० ।

श्लोक—महत्तत्त्वाद्विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्य्यसंभवात् ।
क्रियाशक्तिरहंकारस्त्रिविधः समपद्यत ॥

भापार्थ—भगवत्की कृपावीर्यसे महतत्त्व सो ता शक्तिसे अहंकार तीन प्रकारका है सो कहेहैं ।

श्लोक—वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्च यतो भवः ।
मनसश्चेन्द्रियाणां च भूतानां महतामपि ॥

भापार्थ—सो अहंकार तीन प्रकारकाहै वैकारिक तैजस तामस तिनसे मन इंद्रिय पंच महाभूत पृथ्वी, आप, तेज, वायु, आकाश ये उत्पन्न भये सो कहे हैं ।

श्लोक—सहस्रशिरसं साक्षाद्यमनंतं प्रचक्षते ।
संकर्पणाख्यं पुरुषं भूतेन्द्रियमनोमयम् ॥

भापार्थ—सो अहंकार मूर्तिमान् संकर्पण नाम धारणकरे दूसरा प्रथममूर्ति हजारशिरवाले शेषभगवान् सो अहंकारके छ रूप हैं याने गुण तिनको सुनो ।

श्लोक—कर्तृत्वं करणत्वं च कार्य्यत्वं चेति लक्षणम् ।
शांतघोरविमूढत्वमिति वा स्यादहंकृतेः ॥

भापार्थ—अहंकारके छः लक्षण सो सुबोधकर्तृत्व, करणत्व, कार्यत्व, शांतत्व, घोरत्व, विमूढत्व, ये अहंकारमें छः प्रकारके सो पूर्वमें तीन प्रकार कहे सो तिनके पृथक् लक्षण सुनो ।

वैकारिकलक्षण ।

श्लोक—वैकारिकाद्विकुर्वाणान्मनस्तत्त्वमजायत ।
यत्संकल्पविकल्पाभ्यां वर्तते कामसंभवः ॥

भापार्थ—यह अहंकार जब वैकारिकसे विकारको प्राप्त हुआ तब तासे मन तत्त्व पैदा होता है जिस मनसे संकल्प विकल्प सब कामना पैदा होती है। अब तैजसके लक्षण सुनो ।

तैजसलक्षण ।

श्लोक—तैजसात्तुविकुर्वाणाद्बुद्धितत्त्वमभूत्सति ।
द्रव्यस्फुरणविज्ञानमिन्द्रियाणामनुग्रहः ॥

भापार्थ—तैजस जब विकारकूं प्राप्त होता है तब बुद्धितत्त्व होता भया द्रव्यस्फुरण विज्ञान इंद्रियोंकी सहायता तथा सत्यासत्यका निश्चय ये बुद्धिके गुण हैं तहां कहैहैं कि बुद्धि इतनेंको साधे संशय मिथ्याज्ञानका निश्चय स्मृति निद्रा दूसरे क्रियाज्ञानके भागसे तैजस इंद्रिय होय क्रियाकी शक्ति प्राणोंको विज्ञानशक्ति ये बुद्धिकी चेष्टा हैं ।

तामसलक्षण ।

श्लोक–तामसाच्च विकुर्वाणाद्भगवद्वीर्य्यचोदितात् ।
शब्दमात्रमभूत्तस्मान्नभः श्रोत्रं च शब्दगम् ॥

भावार्थ–भगवत्के वीर्य्यसे प्रेरित तामस अहंकार विकारको प्राप्त हुवा उससे शब्दमात्र होता भया ताका रूप नाम याने आकाश तासे विज्ञानइन्द्रियश्रोत्र कान शब्दसे हुये ।

आकाशलक्षण ।

श्लोक–अर्थाश्रयत्वं शब्दस्य द्रष्टुर्लिंगत्वमेव च ।
तन्मात्रत्वं च नभसो लक्षणं कवयो विदुः ॥

भावार्थ–शब्दके अर्थको जाननों देखबेवारेको चिह्न मात्रको ज्ञानं ताकी मात्रा जाननों ये आकाशलक्षण हैं ।

आकाशवृत्तिलक्षण ।

श्लोक–भूतानां छिद्रदातृत्वं बहिरंतरमेव च ।
प्राणेंद्रियात्मधिष्ण्यत्वं नभसो वृत्तिलक्षणम् ॥

भावार्थ–जब जीवमात्रमें आकाशछिद्र बाहरभीतरता जामें पाई जाय प्राणेंद्रिय आत्मा इनते इनमें स्थान रखनो ये आकाशके लक्षण हैं ।

श्लोक–नभसः शब्दतन्मात्रात्कालगत्या विकुर्वतः ।
स्पर्शोऽभवत्ततो वायुस्त्वक्स्पर्शस्य च संग्रहः ॥

भावार्थ–शब्दमात्रावाले आकाशके विकारी होते उससे स्पर्श गुणवाला वायु भया जासे त्वचा याने (खाल) भई जासे स्पर्शका ज्ञान होता है वायुगुण सुनो ।

वायुलक्षण ।

श्लोक–मृदुत्वं कठिनत्वं च शैत्यमुष्णत्वमेव च ।
एतत्स्पर्शस्य स्पर्शत्वं तन्मात्रत्वं नभस्वतः ॥

भावार्थ–कोमल कठिनतायुक्त शीतलता ग्रीष्मता स्पर्शगुण ये वायुपवनके तन्मात्राके लक्षणहैं ।

श्लोक–चालनं व्यूहनं प्राप्तिर्नेतृत्वं द्रव्यशब्दयोः ।
सर्वेन्द्रियाणामात्मत्वं वायोः कर्माभिलक्षणम् ॥

भावार्थ–द्रव्यके शब्दसे चालन मिलन प्राप्ति लेजाना ये आत्मवायुके लक्षण हैं इन्हींको प्राण भी कहतेहैं ।

श्लोक–वायोश्च स्पर्शतन्मात्राद्रूपं दैवेरितादभूत् ।
समुत्थितं ततस्तेजश्चक्षूरूपोपलंभनम् ॥

भावार्थ–स्पर्शगुणवाली वायुसे दैवप्रेरित रूप भया उससे तेज भया सो चक्षुओं (नेत्रों) में बसे जासे स्वरूप लक्षित होवैहे ।

रूपलक्षण ।

श्लोक–द्रव्याकृतित्वं गुणता व्यक्तिसंस्थात्वमेव च ।
तेजस्त्वं तेजसः साध्वि रूपमात्रस्य वृत्तयः ॥

भावार्थ–किसी वस्तुकी आकृतिबनाना तथा द्रव्य गौण रीतिसे प्रतीत होना पदार्थकी रचना परिणाम प्रतीत होना तेजका आशय धारनेवाला रूप लक्षण है ।

तेजलक्षण ।

श्लोक–द्योतनं पचनं पानमदनं हिममर्दनम् ।
तेजसो वृत्तयस्त्वेताः शोषणं क्षुत्तृडेव च ॥

भावार्थ–प्रकाश वाचाशक्ति पाचन अर्थात् भोजनका शीतका नाश क्षुधा तृष्णा शोषण याने सुखावना यथा गीलेवस्त्र सुखावना ये तेजलक्षण हैं ।

श्लोक–रूपमात्राद्विकुर्वाणात्तेजसो दैवचोदितात् ।
रसमात्रमभूत्तस्मादंभो जिह्वा रसग्रहः ॥

भावार्थ–रूपगुणवाला तेज दैवप्रेरित जब विकारी भया उससे तन्मात्रा भई जासे जल भया तासे रसग्रहणवाली जिह्वा भई ।

रसनाजिह्वालक्षण ।

श्लोक–कषायो मधुरस्तिक्तः कट्वम्ल इति नैकधा ।
भौतिकानां विकारेण रस एको विभिद्यते ॥

भापार्थ–कपाय मधुर तिक्त कटु अम्ल ये अनेक विकार भौतिकसे एकरसके हैं ये रसनागुणहैं याने जीभके गुणहैं ।

जलके लक्षण ।

श्लोक–क्लेदनं पिंडनं तृप्तिः प्राणाप्यायनोंदनम् ।
तापापनोदो भूयस्त्वमंभसो वृत्तयस्त्विमाः ॥

भापार्थ–गीलापन गोलाबंधना तृप्ति जीवन प्यासमिटावना कोमल करना ताप दूरकरना जल विकार पसीनाद्वारा निकालना (श्रुति) "आपोमयः प्राणः" । इति । ता जलसे गंधवाली पृथ्वी भई तासे घ्राण (नासिकेंद्रिय)

श्लोक–रसमात्राद्विकुर्वाणादंभसो दैवचोदितात् ।
गन्धमात्रमभूत्तस्मात्पृथ्वी घ्राणस्तु गंधगः ॥

भापार्थ–रसगुणवाला दैवप्रेरित जल जब विकारको प्राप्त भया तासे पृथ्वी भई जासे गंधमात्र तासे विज्ञान घ्राण इंद्रिय (नाक) भई जासे गंध इत्यादिकका भान होवै है ।

श्लोक–करंभपूतिसौरभ्यशांतात्युग्रादिभिः पृथक् ॥
द्रव्यावयववैपम्या द्गंधएको विभिद्यते। इति ।

भापार्थ–मिलीगंध सुगंध शांत उग्रआदि द्रव्यके अवयवोंके विपमता पृथक् एकगंधको प्राप्त होतीहै ।

श्लोक–भावनं ब्रह्मणः स्थानं धारणं तद्विशेपणम् ।
सर्वसत्त्वगुणोद्भेदः पृथवीवृत्तिलक्षणम् ॥

भापार्थ–प्रतिमादिक भगवद्रूपमें ब्रह्मभावना स्थानधारण सर्वजीवमात्रके गुणके भेद करना ये पृथ्वीके लक्षणहैं ।

श्लोक–नभोगुणविशेपोऽर्थो यस्य तच्छ्रोत्रमुच्यते ।
वायोर्गुणविशेपोऽर्थो यस्य तत्स्पर्शनं विदुः ॥

भापार्थ–आकाशका असाधारण गुण शब्द जिसका विषय श्रोत्र (कान) इंद्रिय कहलातीहै वायुके असाधारण गुण स्पर्श त्वचा(चर्म)इंन्द्रिय कहलातीहै।

श्लोक–तेजोगुणविशेषोऽर्थो यस्य तच्चक्षुरुच्यते ।
नभोगुणविशेषोर्थो यस्य तद्रसनं विदुः ॥

भाषार्थ–तेज जाको असाधारण गुण सो गुणरूप जाके विषय वह चक्षु नेत्र इंद्रिय कहाती है जलका असाधारण गुण रस जिसका विषय वह रसना जीभ इंद्रिय कहाती है खट्टा मीठा आदि ये रसके विभेद है ।

श्लोक–भूमेर्गुणविशेषोऽर्थो यस्य स घ्राण उच्यते ।
परस्य दृश्यते धर्मो ह्यपरस्मिन्समन्वयात् ॥
अतो विशेषो भावानां भूमावेवोपलक्ष्यते ॥

भाषार्थ–पृथ्वीका असाधारण गुण गंध जिसका विषय घ्राण (नाक) इंद्रिय पूर्वपदार्थोंका पिछलेसे सम्बंध होनेसे आकाशादिकधर्म अगले पदार्थोंमें दीखतेहैं उस ब्रह्मके तेज अंश आकाशसे वायुसे अग्निसे जल तासे पृथ्वी भई ताको हे शिष्य! पंचीकरणद्वारा मै कहता हूं आकाशवायुसे तेज तेजआकाश वायुसे अग्नि अग्निसे जल आकाश,वायु,अग्नि,जल इनसे पृथ्वी भई आकाशका गुण शब्द वायुमें दोगुण चंचल स्पर्श तेजका गुणरूप रसनागुणस्वाद यथा खट्टा मीठा पथ्वीगुण गन्ध तिनते जो ज्ञानेंद्रिय यथा नाक कान जीभ चर्म तिनके गुण विषय सुनो ज्ञानेंद्रियोंके विषय इस लिये आकाश आदिकोंके शब्द आदि सम्पूर्ण गुण पृथ्वीमेंही दीख पडते हैं ।

श्लोक--चक्षुषा गृह्यते रूपं गंधो घ्राणेन गृह्यते ।
रसो रसनया स्पर्शस्त्वचा संगृह्यते परम् ॥

भाषार्थ–चक्षु (नेत्र) इन्द्रियका ग्राह्य रूप तेजमे घ्राण (नाक) इंद्रियका ग्राह्य गन्ध है सो तत्त्वसे है । रसना (जीभ) इद्रियका ग्राह्य रस जलतत्त्वसेंहै त्वचा चर्म इन्द्रियका ग्राह्य स्पर्श शीत उष्णका ज्ञानवायुतत्त्वसे उत्पत्तिहै श्रोत्र कान इन्द्रियका ग्राह्य शब्द भली बुरी बात सुनना आकाशतत्त्वसे है ।इति।

या प्रकार संसार उत्पन्न भया अब जैसे संसार जौन जिसमें लय होता है सो सुनो पुनः माया परमात्मामें लय ताको एकश्लोकद्वारा कहै कि पुनः परमात्मा सर्वज्ञमें लीन होवे हैं ।

श्लोक—पृथ्वी जले संनिमग्ना जलं मग्नं च तेजासि।
लीनं वायौ तथा तेजो व्योम्नि वातो लयं ययौ ॥

भापार्थ—पृथ्वी जलमें जल अग्निमें अग्नि वायुमें वायु आकाशमें आकाश अविद्या याने मायामें सो माया भगवत्की इच्छामें सो हे पुरुष! जो तू कहता हैं कि, मेरा मैं सो इनमें याने ऊपर कहेभये इनमें तू कौन है यह जो विचारे सोई ज्ञानंका रूप शुद्ध सत्त्वस्वरूप है।

श्लोक—यः सर्वगः सर्वविदक्षरः प्रभुर्मायाधिपस्तंतुरिवोर्णनाभितः ॥
तस्मादनिर्वाच्यमिदं प्रजायते वेगात्मना चेदमनाद्युदाहृतम् ॥

भापार्थ—हे शिष्य!जो तूने प्रश्नकिया कि यह जगत् किसने उत्पन्न किया सत्य है या मिथ्या ताका प्रतिपादन ऊपर कह आये यह माया जगत्को ईश्वरकी इच्छासे प्रगट करती भई तासे जगत्में परमात्मा बाहर भीतर व्याप्त है

श्रुति "आकाशवत्सर्वगतश्चनित्यः" इति।

अर्थ—आकाशवत् सर्वजगत्में परमात्मा व्याप्त है तथा सर्वजगत्का उपादान कारण है नित्यहै यह जगत् हस्तामलकवत् ज्ञानपरिपूर्ण पुनः सो श्रुति प्रति पादन करै हैं।

श्रुति "यः सर्वज्ञः सर्वविद्यस्य ज्ञानमयं तपः "। इति।

अर्थ—जो परमात्मा सर्वज्ञ सबको जानवाहै याने ब्रह्मासे चींटीपर्यंत सामान्यविशेपका नियंता सो परमात्मा जगत्का कारणहै हे शिष्य ! यह तौ जगत् उत्पत्ति और इसका कारण परमात्माही एक अंवतरा कहना कि जगत् सत्य है या मिथ्या है या तिसका मल माया सत् है या असत् है।

श्रुति "तस्मादनिर्वाच्यमिदं प्रजायते"। इति।

अर्थ—हे शिष्य! तिस परमात्मासे यह जगत् अनिर्वचनीय अर्थात् प्रत्यक्ष प्रतीत होनेसे मिथ्याभी नहीं कहा जाता और ज्ञान कालमें अभावसे सत्यता भी नहीं कही जासकती याने अनिर्वचनीय सोई विद्यारण्यस्वामी कहे हैं।

वेदांतग्रंथपंचदशी।

श्लोक-युक्तिदृष्टया त्वनिर्वाच्यं न सदासीदिति श्रुतेः।
नासदासीद्विभातत्वान्नो सदासीच्च बाधनात् ॥

भावार्थ-युक्तिदृष्टिकरिके तौ यह जगत् अनिर्वचनीय सिद्धहोवै है तहां ताको श्रुति प्रतिपादन करैहै।

श्रुति-"नासदासीन्नो सदासीत्"। इति।

अर्थ-श्रुति भी कहती है यह जगतउत्पत्ति प्रथम असत्त नहीं थी और सत्का भी कथन नहीं संभवै क्यों कि, देखते देखते नाश होवै है तासे अनिर्वचनीयमें पुनः प्रमाण इति।

त्रिपादभूत्युपनिषादे।

श्लोक-तुच्छा निर्वचनीया च वास्तवी चेति सा त्रिधा।
ज्ञेया माया त्रिभिर्बोधैः श्रौतयुक्तिकलौकिकैः ॥

भावार्थ-यह जगतरूप माया तीन प्रकारकी है लौकिक दृष्टिसे सत्यप्रतीत ज्ञानदृष्टिसे अनिर्वचनीय विज्ञानविवेकसे मिथ्या जैसे रज्जुमें सर्पकी भ्रांति पुनः प्रमाण-

वेदांततत्त्वे।

श्लोक-जलपूरेष्वसंख्येषु शरावेषु यथा भवेत्।
एकस्य भात्यसंख्यत्वं तद्भेदोऽत्र न दृश्यते ॥
उपाधिषु शरावेषु या संख्या वर्तते परा।
सा संख्या भवति यथा रवौ चात्मनि सा तथा ॥

भावार्थ-जैसे एक पात्रमें जलपूर्ण कर तिसमें दृष्टिके भेदसे दो सूर्य्य प्रतीत होतेहैं ऐसे ही जलपात्रके अभावते शुद्धदृष्टिसे एक सूर्य्य प्रतीत होवै है अज्ञानताके नाशते केवल एक परमात्मा ही सर्वत्र दृष्टि आता है अब देहाभिमान अज्ञानताकी निवृत्ति कहे हैं। हे शिष्य तू यह विचारकर देख कि यह स्थूल अनित्य नाशवान् सो पंचभूतसे याने आकाश वायु तेज जल पृथ्वी इत्यादिसे पैदा तामें अहं(मैं)कर कहताहै सो तू इनमें कौन है यह भी नाशवान्

है पुनः इंद्रिय जो पांच ज्ञानेंद्रिय यथा नाक कान आंख जीभ चर्म पाच कर्म इंद्रिय यथा हाथ इनसे लेना देना पांवोंसे चलना गुदासे मलका त्याग लिंगसे पुत्रोत्पादन मूत्रत्याग वाक्से बोलना ये सब जड हैं इनका कारण पंचमहाभूत अनित्यहैं तो जिसका कारण अनित्य तो उत्पत्ति ताकी कब सत्य प्रतीत होवे इसका विषय पूर्वमें सृष्टि उत्पत्तिमें कहआये हैं जो कहो प्राण १ अपान २ उदान ३ समान ४ व्यान ५ नाग ६ कूर्म ७ कृकल ८ देवदत्त ९ धनंजय १० ये दशप्रकारके वायु शरीरविषे स्थित सो जड इनका विषय खाना पीना निद्रा सो भी पंचमहाभूतके रजो अंशसे होते हैं ताका प्रमाण—

यजुर्वेदे कठोपनिषदि।

श्लोक—न णेनापानेन मर्त्यो जीवति कश्चन।
इतरेण हि जीवंति यस्मिन्नेतावुपाश्रितौ। इति॥

भाषार्थ—इसका भी तात्पर्य्य ऊपर कहे भये ही की, तरह समझो यह जो कहआये सो मृतक पुरुष होता तब ये प्राण इन्द्रिय चेतनता नहीं पासकते तातें ये सर्वका कारण पंचभूत सो तीनगुणसे उत्पत्ति तासे इनका प्रेरक परमात्मा इनतें जदाहै सो ताका प्रमाण सुन ।

गीतायाम्।

श्लोक—त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।

अर्थ—सत्त्व रजस्तम इति याने सत्त्वगुण रजोगुण और तमोगुण इन तीनोंसे हे अर्जुन ! मैं न्याराहूँ इत्यादि अब जो तू कहे कि मन चित्त बुद्धि ये ही सब देहके व्यापार कर्ता हैं यह अन्तःकरणकी वृत्ति चार प्रकारकी है मन चित्त बुद्धि अहंकार ये भी तत्त्वोंमें हैं यह स्वतः जब इन इंद्रियोंका प्रेरक इनसे जुदा है वही अन्तर्यामी है उसकी प्राप्तिसे कल्याण होताहै तहां प्रमाण।

यजुःकठोपनिषदि ।

श्लोक–इन्द्रियाणाम्पृथग्भावमुदयास्तमयौ चयात् ।
पृथगुत्पद्यमानानां मत्वा धीरो न शोचति ॥
इन्द्रियेभ्यः परं मनो मनसः सत्त्वमुत्तमम् ।
सत्त्वादधि महानात्मा महतोऽव्यक्तमुत्तमम् ॥
अव्यक्तात्तु परः पुरुषो व्यापको ऽलिंगएव च ।
यज्ज्ञात्वा मुच्यते जन्तुरमृतत्वं च गच्छति ॥

भाषार्थ–हे शिष्य ! देख इन सबका प्रेरक इन्द्रियोंसे पृथक् है इंद्रियोंते परे (दूर) मन है मनते परे बुद्धिहै सो पुरुष बुद्धिसे परे सो अव्यक्त पुरुषते परपुरुष न्यारा जाके जाननेते जन्ममरणादिक ऐसे दुःखसे छूटते हैं सो यह विचारके इस शरीरको भी अनित्य जाने इस्से चित्त उपराम कर अन्तर्यामीका प्रथमआराधन योगाभ्यासद्वारा दृष्टिगोचर कर पुनः परमात्माकी प्राप्ति तौ बनी हे सो अन्तर्यामी तेरे हृदयमें है प्रमाण।

श्रुति–अंगुष्ठमात्रः पुरुषो मध्यआत्मनि तिष्ठति । इति । पुनः ।

यजुर्वेदे कठोपनिषदि ।

श्लोक–अंगुष्ठमात्रः पुरुषोन्तरात्मा सदा जनानां हृदये सन्निविष्टः।तंस्वाच्छरीरात्प्रवृहेन्मुञ्जादिवेषीकां धैर्य्येण।तं विद्याच्छुक्रममृतं तं विद्याच्छुक्रममृतमिति।मृत्युप्रोक्तान्नचिकेतोऽथलब्ध्वा विद्यामेतां योगविधिश्च कृत्स्नम्। ब्रह्मप्राप्तोविरजोऽभूद्विमृत्युरन्योऽअप्येवंयो विदध्यात्ममेव ।

भाषार्थ–ऊपर कही भईश्रुति तथा उपनिषदमें भी प्रतिपादन कि अंगुष्ठमात्र पुरुषरूप अंतर्यामी परमात्मा अंतःकरणमें विराजताहै परंतु ज्ञानेन्द्रियचक्षुद्वारा नहीं दृष्टि आता सो मन शुद्ध योगद्वारा जानाजाताहै सो धारण तत्वज्ञानगुरु, द्वारा उपदेश ताकी निश्चयकर ताको मनन गुने निदिध्यासन याने ताके सारको सतअसत्का विचार असत् मायोपाधि त्यागै ।

श्रुतौ।

श्लोक—उत्तिष्ठतजाग्रतप्राप्यवरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गम्यंथस्तत्कवयो वदंति॥

भापार्थ—जो धारना नहीं केवल शास्त्र पढा और सुना तो विना धारण बोधके छुराकी धारपरका चलना ज्ञानीको जगत्में ऐसा ज्ञानीही कहतेहैं।

श्लोक—ज्ञानं निःश्रेयसार्थाय पुरुपस्यात्मदर्शनम्।
यदाहुर्वर्णये तत्ते हृदयग्रंथिभेदनम्॥

भापार्थ—विज्ञानद्वारा तत्त्ववेत्ता पुरुपकोही अंतर्यामीका दर्शन होता है परंतु जब विवेक कर हृदयमें मोहग्रंथि भेदन करे वह मोहनाश ज्ञानसेही होता है।

आत्मपुराणं।

श्लोक—अनादिरात्मा पुरुपो निर्गुणः प्रकृतेः परः।
प्रत्यग्धामा स्वयंज्योतिर्विश्वं येन समन्वितम्॥

भापार्थ—यह आत्मपुरुप अनादिप्रकृति (माया) ते परेहै पूजनीय स्वयं प्रकाश याने वह अपनेको आप प्रकाशता यथा काचादिकमें सूर्य्यके प्रकाशते प्रकाशित सो सूर्य्यभी उसीसे प्रकाशितहै विश्वमें व्याप्त है।

श्लोक—स एप प्रकृतिं सूक्ष्मां दैवीं गुणमयीं विभुः।
यदृच्छयैवोपगतामभ्यपद्यत लीलया॥

भापार्थ—जो यह प्रभु सूक्ष्मरूप व्यापकप्रकृतलीला विपयहै तासे यह माया ते परमात्मा भिन्न है अविद्यासे परमात्मा मायामय भासताहै।

श्लोक—स सर्वधीवृत्त्यनुभूतसर्व आत्मा यथा स्वप्नजनेक्षितैकः॥
तं सत्यमानंदनिधिं भजेत नान्यत्र सज्जेद्यत आत्मपातः॥

भापार्थ—स्वअवस्थाके अधिष्ठाता द्वारा भगवतस्वरूपमें लयहोनेजावे-बीचमें संसारप्रपंचमें फँसताहै सो चित्तनिरोधकर अनुभवकर जासे संसारछूटता है जैसे स्वप्नका दुःख जागे विना नहीं हटता तैसे अज्ञानतानाश विना सचिदा-नंदकी प्राप्ति नहीं।

श्लोक–यथा कः कल्पकः स्वप्ने नानाविधितयेप्यते ।
जागरेपि तथा एक्यैस्तथैव वहुधा जगत् ॥

भापार्थ–जैसे स्वप्नमें नाना कल्पन सुख दुःखका अनुभव परन्तु जाग्रत्में तिन सुखदुःखका अभाव होताहै तैसे ज्ञानप्राप्तिसे अविद्याका नाश और परमसुखकी प्राप्ति होतीहै ।

पञ्चदशी ।

श्लोक–तद्वदेवमिदं विश्वं विवृतं परमात्मनि ।
रज्जुज्ञानाद्यथा सर्पो मिथ्यारूपो निवर्तते ॥
आत्मज्ञानं तथा याति मिथ्याभूतमिदं जगत् ।
रौप्यभ्रांतिरियं याति शुक्तिज्ञानाद्यथा खलु ॥

भापार्थ–जवतक तत्वज्ञान नही तवतक सत् असत्का विचार नहीं होता । जैसे अंधेरेमें रस्सीपरी तो तिसमें सर्पकी भ्रांति दीपकद्वारा निवृत्त हो तिसका मिथ्यापना नष्ट होता है । जैसे शुक्ति (सीपी) में चांदीकी भ्रांति तैसेही जवतक विज्ञान नही तवतक मायामें जगत् । जव ज्ञान हुआ तव परमात्ममय जगत् दीखेगा सो वस्तुका निश्चय ज्ञानसे होता है सो कहै हैं ।

वेदांतमंजूपा ।

श्लोक–यथा दोपवशाच्छुक्लः पीतो भवति नान्यथा ।
अज्ञानदोपादात्मापि जगद्भवति दुस्तरम् ॥
दोपनाशे यथा शुक्लो गृह्यते रोगिणा स्वयम् ।
शुक्लज्ञाने तथाज्ञाननाशादात्मा तथा कृतः ॥

भापार्थ–हे शिप्य । यह विपयादिकसे अन्तःकरणकी वृत्ति मलीनता से ज्ञान ढका है और अज्ञानतारोगप्रवल सो तावत् आत्मस्वरूपका लक्ष्य वा परमात्माकी प्राप्ति कदापि [illegible] जव पुरुपके [illegible] पीला (कँवर) रोग होताहै तासे पुरुप जि[illegible] तो [illegible] दीखताहै सो जव नेत्ररोग निवृत्त [illegible] यथा [illegible] तैसे

अन्तःशुद्धहुआ तो परत्वज्ञान शुद्ध हुआ तो परमात्माका स्वरूपभी लक्ष्य होताहै सो अन्तः शुद्धि वेदांतका श्रवण गुरुमुखद्वारा ताके अर्थका स्मरण यही मननहै पश्चात् ताको एकातमें विचारना सोई निदिध्यासन फिरि विवेकद्वारा सत् असतका लक्ष्य निश्चय एकांतमें परमात्मा श्रीनित्य-विहारी राधावल्लभकी स्वरूपसौंदर्य्यतामें मनका लय होजाना सो ज्ञानहै शिष्य ये ऊपर कहे भये परत्वज्ञानको जो पुरुष गुरुद्वारा समझेगा सो मायाके जालमें न फँसैगा सो ज्ञानप्रकरण तुमसे कहा अब जो इच्छा हो ताके विषे प्रश्न करो इति !

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मज श्र० र० प्रियादासशुक्लप्रणीतश्रीशास्त्रसारसिद्धांतमणौ ज्ञानप्रकरण सम्पूर्णम् ॥ ९ ॥ श्रीराधामाधवार्पणमस्तु ।

अथ भक्तिप्रकरण ।

शिष्यवाक्य ।

हे—गुरुजी महाराज ! यह तो आपने ज्ञान कहा तासे परमात्माके स्वरूपवेदादि शास्त्र अवलोकन तथा गुरुमुख द्वारा सुन निश्चयकर कहा अब कृपाकर यह कहिये कि वह कौन धर्महै जासे भगवत् श्रीनित्यविहारीजीमें प्रीति अहर्निशि हो मनस्थिर चित्तका लय देहाध्यासाय देहकी भी सुध न रहै क्षुधा पिपासा-काभी भास न हो । इति ।

गुरुवाक्य ।

श्लोक—वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्य्ययः ।
तत्रापि द्विविधो धर्मः प्रवृत्तोथ निवृत्तिकः ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! देखो वेदमें दोप्रकारके धर्म कहेहैं एकतो निवृत्ति जिससे भगवत्प्राप्ति दूसरा प्रवृत्ति यथा यज्ञादिक जिनके करनेसे स्वर्ग इंद्रलोक का वास सो अनित्यहै गीतामें भगवान श्रीकृष्ण महाराजने श्रीमुख से कहाहै कि"क्षीणेपुण्ये मर्त्यलोकंविशंति अर्थ जब पुरुषकी पुण्यक्षीण होजाताहै तब देवतालोक तिरस्कारकर निकासदेते हैं तब प्राणी मर्त्यलोकमें जन्म लेता है

और सुखदुःखका अनुभव किया करता जबतक परमात्माकी प्राप्ति नहीं तबतक इनते नहीं निवृत्ति होती ऐसे प्रवृत्तिमार्ग कहा अब निवृत्तिमार्ग सुनो।

श्लोक-अर्थानुरागेणः पुंसःप्रवृत्तौ धर्म उच्यते ।
अर्थानर्थदृशः पुंसो भक्तस्य च हरौ तथा ॥

भाषार्थ-प्रवृत्तिधर्म ऊपर कहिआये तदनुसार समझो और निवृत्तिधर्म भगवत्की भक्ति जासे जन्म मरण छूटजावे सोभी दोप्रकारकी है एक स्वार्थ दूसरी परार्थ जो अर्थ अनर्थदृष्टिकर त्यागै सो प्रेमलक्षणाहै स्वार्थसामान्य तिनके धारणकरनेवाले यथा विभीषण सुग्रीव अर्जुन ध्रुव द्रौपदी निरपेक्षमें महादेव नारद प्रह्लाद पराशर व्यास शुकदेव और प्रेमलक्षणाके अधिकारीकी सीमा व्रजगोपीनपै है तथा ग्वालबाल सो आगे नौप्रकारकी भक्ति निरूपणमें कहैगे निरपेक्षभक्तिमें मोक्षकी भी चाह नहीं सो पद्मपुराणमें कहाहै ।

श्लोक-भुक्तिमुक्तिस्पृहा यावत्पिशाची हृदि वर्तते ।

अर्थ-भुक्ति मुक्ति ये दोनों प्रेमलक्षणा भक्तिके बाधकहैं जबतक इनमें प्रीति रहैगी तबतक चित्तनिरोध न होगा विना चित्तनिरोधके भगवत् सौख्य लक्ष्य नही होता । इति ।

भक्तिचिंतामणौ ।

श्लोक-ज्ञानतः सुलभा मुक्तिर्भुक्तिर्यज्ञादिपुण्यतः ।
सेयं साधनसाहस्रैर्हरिभक्तिः सुदुर्लभा ॥

भाषार्थ-ज्ञानद्वारा ह्वैके कैवल्यमुक्ति सुलभहै भुक्ति कहे ऐश्वर्य्य यज्ञद्वारा सुलभ औरहू नानातरहके साधनहैं संसार वा स्वर्गके सुखदेनेवाले परंतु भगवद्भक्तिकी प्राप्तिविना भगवत्कृपा कठिनहै ।

नारदोक्तभक्तिसूत्र ।

सूत्र-ॐ अथातो भक्तिं व्याख्यास्यामः ।

अर्थ-नारदजी व्यासजीके प्रति भक्तिकी व्याख्या करतेहैं ।

सूत्र-ॐ सकामास्मै परमप्रेमरूपा ॥

अर्थ—सो भक्ति परमेश्वरके विषय परमप्रेमरूपहै वशीकरण है याने प्रेमलक्षणा भक्तिसे भगवत् प्राप्त होताहै।

सूत्र—अमृतस्वरूपा च।

अर्थ—सो भक्ति अतमृतत्ववहै याने जन्ममरणके कारण तीनताप "आध्यात्मिक" "आधिभौतिक" "आधिदैविकं" इन रोगोंके नाश करनेको भक्ति अमृतवतहै। इति।

सूत्र—ॐ यं लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवत्यमृतो भवति तृप्तो भवति

भापार्थ—यह वह भक्ति अमृतहै जासे भगवान् वश होतेहैं जाको पाय पुरुष जीवनमुक्त हो निर्भय विचरतेहैं।

सूत्र—यत्प्राप्यनकिंचिद्वाञ्छतिनशोचतिनद्वेष्टिनरमतेनोत्साही भवति। इति।

भापार्थ—जिस भक्तिको पायकर पुरुष किसी वस्तुकी चाहना नहीं करता न शोक न मोह न किसीसे वैरभाव काहेतें कि कार्य्य कारण विना नही संभवै।

सूत्र—यज्ज्ञानान्मत्तो भवति स्तब्धो भवत्यात्मारामो भवति। इति।

भापार्थ—जिस भक्तिको पाय मनुष्य मत्त होजाताहै देहका अनुसंधान भूल जाताहै सर्वत्र भगवान् ही दृष्टि आताहै।

सूत्र—जडोन्मत्तपिशाचवत्।

निशम्य कर्माणि गुणानतुल्यान्वीर्य्याणि लीलातनुभिः कृतानि। यदातिहर्षोत्पुलकाश्रुगद्गदः प्रोत्कंठ उद्गायति रौति नृत्यति। यदा ग्रहग्रस्त इव क्वचिद्धसत्याक्रंदते ध्यायति वंदते जनम्। तदा पुमान्मुक्त समस्तबंधनस्तद्भावभावानुकृताशयाकृतिः। निर्दग्धबीजानुशयो महीयसा भक्तिप्रयोगेण समेत्यधोक्षजम्। इति।

भावार्थ–जब भक्तिमें मत्त होताहै पुरुष तब लज्जा स्त्रीको त्याग परम वैराग्यवान् होताहै कभी गाताहै कभी, हँसताहै कभी रोताहै कबहूं विह्वलहो श्रीराधे कहके आंसू बहाता मार्गत्याग अपमार्गमें चलताहै यह परा भक्तिहै जिस्से उन्मत्त सा अनुराग याने प्रेमलक्षणा भक्ति कहते इसीको तुर्य्य परमहंस मोक्ष कहतेहैं ।

सूत्र–सा न कामाय मनोनिरोधरूपात् इति ।

भावार्थ–यह भक्ति कामनाके निवृत्त्यर्थ है नकि कामनाके अर्थ इससे चित्तानुरोध होताहै जासे परमात्माकी प्राप्ति विना एकाग्रमनके कार्यसिद्धि नहीं होती सामान्यमें दृष्टांत बैल चाहै हल जोतो चाहै गाडीमें लगावो बैल वही तैसेही मन वही चाहै भगवद्भक्तिमें लगावो चाहै विषयमें लगावो ताको प्रमाण वल्लभाचार्य्यने अपने भक्तिसर्वस्ववचनामृतमें कहाहै इति ।

श्लोक–अहं निरुद्धो रोधेन निरोधपदवीं गतः ।
निरुद्धानां तु रोधाय निरोधान्वर्णया मि ते ॥
हरिणा ये विनिर्मुक्तास्ते मग्ना भवसागरे ।
ये निरुद्धास्त एवात्र मोदमायांत्यहर्निशम् ॥

भावार्थ–श्रीआचार्य्यजी कहतेहैं कि रोधसे निवृत्त निरोधकी पदवी पर हूं याने सबतरफते चित्त खींचकर केवल आपके पदमें लगाहै सो यह निरोध विना भगवत्कृपा नहीं होता जापै वे कृपा करतेहैं ताको चित्त स्थिर सर्वकाल रहे सोई ताको पुनः कहै हैं ।

श्लोक–क्लिश्यमानाञ्जनान्दृष्ट्वा कृपायुक्तो यदा भवेत् ।
तदा सर्वसदानंदहृदिस्थं निर्गतं बहिः ॥
सर्वानन्दमयस्यापि कृपानन्दसुदुर्लभः ।
हृद्गतः स्वगुणाञ्छ्रुत्वा पूर्णः प्लावयते जनान् ॥
तस्मात्सर्वं परित्यज्य निरोधः सर्वदो गुणः ।
सदानंदपरैर्गेया सच्चिदानन्दता स्वतः ॥

भापार्थ—जब तुम चित्त एकाग्र कर उसमें लगावोगे उसके दर्शनविना तुम्हें व्याकुलता होगी तब वह दशा देखी तुम्हें सच्चिदानंदमूर्ति बाहेर भीतर सब जगह लक्ष्य आवेगा जबतक उसकी कृपा नहीं तबतक यह आनन्द दूरहै जब कृपा करेगा तब अपने गुण तुम्हारे हृदयमें स्थित कराय तुमसे गँवाय आप सुनेगा तासे एक भगवद्दर्शन गहो ।

सूत्र—निरोधस्तु लोकवेदव्यापारन्यासः ।

भापार्थ—जब लोकके प्रपंच मिथ्याभापण कुसंगका त्याग क्रोधका त्याग अब वेदव्यापार रहा ताको तात्पर्य याने नानाप्रकारके कर्म फलार्थ तिनसे चित्त उपराम तब अन्यउपाय रहित केवल श्रीविहारीजीमें चित्त लगाना ॥

गीतायाम् ।

श्लोक—अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

भापार्थ—देखो श्रीकृष्णमहाराज कहतेहैं कि हे अर्जुन । जो पुरुप मेरेको अनन्यभावसे चिंतवन करताहै उसे मैं सदा सुलभ हूं जो मेरा चिंतवन करता है तिसके सदाही समीपहूं ।

पुनः गीतायाम् ।

श्लोक—अनन्याश्चिन्तयंतो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेपां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

भापार्थ—हे अर्जुन जो पुरुप अनन्यता याने एक मेराही चितवन करताहै मेरे व्यतिरिक्त कुछ नहीं जाने यथा पतिव्रता स्त्री जबसे पाणिग्रहण याने विवाह हो जाताहै तबते एक पतिमें स्नेह और पतिके कुलधर्म करती तब मातापिताके कुलके धर्म परित्याग कर केवल पतिकुलके कर्म करतीहै तैसे जो मेरी शरण आया उसे लोकवेदव्यापार (कर्म) से क्या प्रयोजन काहेते मेरी प्राप्ति तीनगुणोंसे भिन्न ताको प्रमाण सुनो ।

गीतायाम्।

श्लोक-त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्त्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान्॥

भाषार्थ--हे अर्जुन वेद तो तीनगुण (रजोगुण तमोगुण सत्त्वगुण) युक्त है सो वेदमें इनके अनुकूल कर्म धर्म सो इनते में भिन्न हूं और ऊपरके कहेभये कर्म कबतक मानेजाते हैं।

श्लोक-यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥

भाषार्थ-हे अर्जुन जबतक तेरे हृदयमें अर्थकी चाह याने स्वर्गादिविषय भोगकी इच्छा है तबतक वेदके कहे हुए कर्मका तुमपै जोरहै जब तुम्हारी कामना नहीं तो तुमपै किसीका जोर नहीं जैसे उन्मत्त याने दीवाना आदमी कभी बिगारमें उसे कोईभी नहीं पकरता न कोई काम करताहै पुनः।

श्लोक-कर्म्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोस्त्वकर्मणि॥

भाषार्थ-जबतक कामनाकी तरंग नाश नहीं होती तबतक अनन्यता भक्ति नहीं अचल होती विना अनन्यताके गति नहीं (शंका) वेदादिकमार्गके कहेहुए कर्म छोडे पतितहोनेका डर है सोई सूत्रमें।

सूत्र-कर्मत्यागपातित्यां शंकयः।

भाषार्थ-यह जो कर्मकर छोडने सिद्धिके पहिले और न सिद्धिहोनेते इधरसे भी गया और वस्तुकी प्राप्तिभी न हुई यह शंका तहां कहैहैं भगवत्की प्राप्तिके अर्थ भक्तिमें तत्पर तो उसे उत्तमगति प्राप्त होगी कैसा भी हो तौ भक्ति सेही वह पुरुष तरजाताहै प्रमाण सुनो।

गीतायाम्।

श्लोक-अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मंतव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

भापार्थ—श्रीकृष्णमहाराज कहतेहैं कि हे अर्जुन ! एकतो दुराचारी तामें महादुराचारी भी होगा परंतु एक अनन्यभावते मेरेमें मन अर्पणकर अहर्निश मेरे गुणानुवाद गाना सुननेमें चित्त जाका लीन ताको देहादिके किये कर्म उसे बंधन नहीं करसक्ते केवल मेरेमें प्रीति चाहिये यावत् कामनाकी उत्पत्ति भोग ये स्थूलशरीरके धर्म सो स्थूलशरीर नाशवान् है सूक्ष्म निर्विकार है ।

सूत्र—नारदस्ततदर्पिताखिलाचारस्तद्विस्मरणे परमव्याकुलतेति ।

भापार्थ—नारदमुनिजी कहतेहैं जेते आचार विचार विधि निपेध हैं सो सब श्रीनित्यविहारीके प्रेममें विस्मरणकर मत्त हो उनका गुणानुवाद गावो सो प्रमाण ।

सूत्र—यथा व्रजगोपिकानां प्रेम ।

भापार्थ—जैसे व्रजगोपिका प्रेम कि जिनने लोक वेदमर्यादा समुद्रसे विनाश्रम प्रेमजहाजद्वारा पार भई ।

भागवते दशमे

श्लोक—न पारयेऽहं निरवद्यसंयुजां स्वसाधुकृत्यं विबुधायुषापि वः।
या माभजन्दुर्जरगेहशृंखलाः संवृश्च्य तद्वः प्रतियातु साधुना॥

भापार्थ—श्रीलालजी महाराज गोपिनते कहतेहैं कि हे—गोपियो ! हम ब्रह्माकी आयु हजार धारणकर तुम्हारी सेवा करैं तौ भी तुम्हारे प्रेमके एक क्षणकी बराबर हमारी सेवा नहीं यासे हम तुम्हारे ऋणी सदा रहैंगे वह कैसा प्रेम उन व्रजगोपियोंका सो कहैहैं ।

श्लोक—गोप्यः कृष्णे वनं याते तमनुद्रुतचेतसः ।
कृष्णलीलाः प्रगायन्त्यो निन्युर्दुःखेन वासरान् ॥

भापार्थ—जब श्रीकृष्ण महाराज गाईं चरावने जाते तब गोपी अपना मन उनके साथ करदेतीं और आप उनका चरित्र गाय दिवस वितातीं पुनः जब रहसविपे अंतर्धान भयेहैं तभी उनकी लीला गाय वृक्षोंसे पूंछती फिरीं

तहां महात्मा नंददासजीकी वाक्यसे "कोहजडचेतन्य कछु न जानतविरही जन" तो कहौ इनतें अधिक प्रेम और कौनमें कहाजाय पुनः ।

श्लोक--पुनः पुलिनमागत्य कालिंद्याः कृष्णभावनाः ।
समवेता जगुः कृष्णं तदागमनकांक्षिताः ॥

भापार्थ--बन बन ढूंढ़कर श्रीयमुनाजीपै आय व्याकुल दशामें वही कृष्णलीलाद्वारा तादृशभावना करनेलगीं कि कृष्ण मिलें तो ताहीमें यह प्रेम देख प्रगट भये सो ऐसा प्रभाव प्रेमभक्तिका कि जाके धारणते गोपीनकी बडाई श्रीकृष्णने उद्धवसों करी सो कहैहैं ।

भागवते एकादशे ।

श्लोक–रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफल्किना मय्यनुरक्तचित्ताः।
विगाढभावेन न मे वियोगतीव्राधयोन्यं ददृशुः सुखाय ॥

भापार्थ– हे उद्धव ! जब हम बलदेवजीके संग मथुराजीको चलेथे तब मेरे वियोगसे उनकी कौन दशा भई हो यह हम नहीं कहसकते कोहैतें कि जब हम ब्रजमें थे तबकी उनकी यह दशाथी सो सुनो हम कहैहैं।

श्लोक–तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृंदावनगोचरेण ।
क्षणार्धवत्ताः पुनरंग तासां हीना मया कल्पसमा बभूवुः॥

भापार्थ–जब हम प्रातःकाल गाईं ले ग्वालवालोंके साथ चराने वनको जातेथे तब सब द्वारेन तथा अटारीनते हमें देखतथीं फिर जब साम होती तो चकोरवत् लगी रहतीं हमारेबिना उन्हें एक क्षण कल्पसम बीतता था ।

श्लोक–तानाविदन्मय्यनुषंगबद्धधियः स्वमात्मानमदस्तथेदम् ।
यथा समाधौ मुनयोब्धितोये नद्यःप्रविष्टा इव नामरूपे ॥

भापार्थ–जैसे योगी मुनिलोग आत्मअनुभव करनेवाले बुद्धिका लय समाधिमें तत्पर हो स्वरूपनाम भिन्न नहीं जानते यही दशा उद्धव गोपिनकी थी यही दशा देख पितामह ब्रह्माजीने उनके चरणरजकी वंदनाकी है गोहरणमें पश्चात् ताको सुनो ।

श्लोक—षष्टिवर्षसहस्राणि तपस्तप्तं मया पुरा॥नंदगोपव्रजस्त्रीणां पादरेणूपलब्धये॥ अहो भाग्यमहो भाग्यं नंदगोपव्रजौकसाम् । यन्मित्रं परमानंदं पूर्णं ब्रह्म सनातनम् ॥

भाषार्थ—श्रीब्रह्माजी कहतेहैं कि मैंने छह हजार वर्ष पूर्वमें महाकठिन तप किया तब हमें ब्रजगोपिनकी चरनरज मिली धन्यहे२ श्रीनंदरायजी महाराजको जाके गृहमें पुराणपुरुषोत्तम सच्चिदानंदमूर्ति बालक्रीडा करते जो हमें स्वप्नमें भी नहीं ध्यानमें आया सो आज गोपिनके पदरजके प्रभावते सो श्यामसुंदरमूर्ति देखि हम कृतार्थ हुए ऐसे श्रीकृष्णमहाराज गोपिनका वैभव उद्धवसे कह ब्रजमें भेजनेके समयमें श्रीलालजी उनके प्रेमकी दशा वर्णन करैहैं ।

श्लोक—ता मन्मनस्का मत्प्राणा मदर्थे त्यक्तदैहिकाः ।
ये त्यक्तलोकधर्माश्च मदर्थे तान्बिभर्म्यहम् ॥
मयि ताः प्रेयसां प्रेष्ठे दूरस्थे गोकुलस्त्रियः ।
स्मरंत्योंगविमुह्यन्ति विरहौत्कंठ्यविह्वलाः ॥
धारयन्त्यतिकृच्छ्रेण प्रायः प्राणान्कथंचन ।
प्रत्यागमनसंदेशैर्बल्लव्यो मे मदात्मिकाः ॥

भाषार्थ—हे उद्धव ! उन ब्रजगोपिनने मेरेमें चित्त लगाया है मैं ही उनका प्राण हूँ मेरे प्रेममें उन्होंने देहके व्यवहार छोडदिये जो पुरुष मेरेमें प्रेम करते हैं उनके लोक वेद धर्म छूटजाते हैं उन्हें अंगीकार करताहूँ जब गोपियां हमें स्मरणकरतीं तब विरहकी उत्कंठासे शरीरकी सुध नही रहती बडी कठिनतासे वे प्राणधारण करैहैं । मेरा संदेश सुननेकी इच्छासेही धीरतासे दिवस बितातीहैं सो तुम जब वहां जाय देखोगे उनका अविचलप्रेम तब जानोंगे मेरे कथनते उनका प्रेम बहुतहै सो हे शिष्य ! भगवतवाक्य सुन उद्धव ब्रजमें जाय उन ब्रजगोपिनका प्रेम देख और अनुराग,निजमुखप्रशंसा उनकी करी है ताको तुम सावधान हो सुनो ।

श्लोक–अहो यूयं स्म पूर्णार्था भवत्यो लोकपूजिताः ।
वासुदेवे भगवति यासामित्यर्पितं मनः ॥
दानव्रततपोहोमजपस्वाध्यायसंयमैः ।
श्रेयोभिर्विविधैश्चान्यैः कृष्णे भक्तिर्हि साध्यते ॥
भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा ।
भक्तिः प्रवर्तिता दिष्ट्या मुनीनामपि दुर्लभा ॥
दिष्ट्या पुत्रान्पतीन्देहान्स्वजनान्भवनानि च ।
हित्वा वृणीत यूयं यत्कृष्णाख्यं पुरुषं परम् ॥
सर्वात्मभावोधिकृतो भवतीनामधोक्षजे ।
विरहेण महाभागा महान्मेऽनुग्रहः कृतः ॥

भाषार्थ–हे शिष्य ! उद्धव जी कहतेहैं धन्यहैं२ गोपियो तुम्हारा अविचल प्रेम काहेते पराभक्ति वासुदेवकी तुमने धारन करी मन भगवतअर्पणकर जो दान,व्रत तप संयम स्वाध्याय (वेदपाठ) करके भी नहीं मिलती सो भक्ति तुम्हारे संग फिरैहै देखो संसार संबन्धी पुत्र कन्या पिता भ्राता इनते मन अलग कर एकाग्रकर श्रीकृष्णमूर्तिका अहर्निश ध्यान जो तुम गोपिका मोपै अनुग्रह करो जामें मेरे उरमें भी भक्ति हो जो कहोकि तुम तो श्री कृष्णके समीपी हो तौ कहाभया ताको दृष्टांत सुनों हम कहैहैं ।

श्लोक–नायं श्रियोंग उ नितांतरतेः प्रसादः
स्वर्योपितां नलिनगंधरुचां कुतोन्याः ॥
रासोत्सवेऽस्य भुजदंडगृहीतकंठ
लब्धाशिषां यं उदगाद्व्रजवल्लवीनाम् ॥

भाषार्थ–उद्धवजी व्रजगोपिनसें कहैहैं कि कहा भयो हम श्रीकृष्ण महाराजके समीपी हैं यथा कमल सरोवरमें होय परंतु ताके निकट गज रहै ताके सुवासगुणको सो गज नही जानें ताको रसास्वादी भँवर ही होयहै सो ऐसी तुमहो भक्ति प्रेमकी सीमाहो यह कह गोपिनको प्रणाम कर व्रजसे

चल श्रीकृष्ण महाराजके समीप आय दंडवत् कर सब कुशल नंदादिव्रज-वासिनकी कह गोपिनके प्रेमकी प्रशंसाकी और गद्गद हो नेत्रोंसे जलप्रवाह वहरहे और फिर भगवत्से प्रार्थनाकी कि हेप्रभो ! मोपै कृपा करौ मैं आपको सखा जानताथा यह नही समझता था कि आप परब्रह्महो यह बोध गोपिनके चरनरजसे हुआ सो मेरी प्रार्थना सुनो ।

श्लोक—आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां
वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम् ॥
या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा
भेजुर्मुकुंदपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम् ॥
या वै श्रियार्चितमजादिभिराप्तकामै-
र्योगेश्वैररपि यदात्मनि रासगोष्ठ्याम् ॥
कृष्णस्य तद्भगवतश्चरणारविंदं
न्यस्तं स्तनेषु विजहुः परिरभ्य तापम् ॥

भाषार्थ—उद्धवजी भगवतसे कहेहैं कि हे प्रभो यदि आप प्रसन्न हो तौ मेरी आशाको पूर्ण कीजिये सो का ताको कहै है कि श्रीवृन्दावनमें गुल्म लता (छोटीबूटी) करो काहेतैं कि जब व्रजगोपी निकसैंगी तब उनके पदकी रज हमारे ऊपर परैगी सो हम कृतकृत्य होंगे यदि मोपै हे मुकुन्द प्रसन्नहो यह गतिको हमें भेजो जो कहो गोपिनके पदरजमें कहा सो मैं कहनेको समर्थहूं उनकी प्रेमार्द्रता आपने रहसमें देखा होगा कि जिस चित्त-निरोधके अर्थ योगीगुफानमें निवास करतेहै सो चित्तनिरोध विनाश्रम प्रेम द्वारा गोपिन किया । "श्रीवल्लभसंप्रदायाधिष्ठ महाप्रभुजी अपने संन्यासनिर्णय-ग्रन्थमें अपनी संप्रदायकी आचार्यमाना ।"

श्लोक—यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले ।
गोपिकानां च यद्दुःखं तदेव स्यान्मम कचित् ॥
गोकुले गोपिकानां च सर्वेषां व्रजवासिनाम् ।

.यत्सुखं समभूत्तन्मे भगवान्किं विधास्यति ॥
उद्धवागमने जात उत्सवः सुमहान्यथा ।
वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित् ॥

भापार्थ–देखो श्रीमहाप्रभु कहेहैं कि चित्तकानिरोध यह कि श्रीकृष्णके दर्शन विन अनुक्षण व्याकुलता रहती न कि संसारतो बातकी देहकी भी सुध नहीं केवल गोपिनको नहीं ब्रजवासिनमात्र नंद यशोदा वा अन्य गोपग्वालनको वो अपने सुखशरीरको आहुतिकर कृष्णावियोगानल (अग्नि) में जरा रेहेहैं केवल ध्यानसे आधार वह चित्तनिरोधदशा संन्यासिनको भी दुर्लभहै

सूत्र–नतत्रापिमाहात्म्यज्ञानविस्मृत्यपवादः ।

भापार्थ–यहां महत्वज्ञानविस्मृतिका अपवाद नहीं जहां महत्वज्ञान वहां प्रेम नहीं परंतु ब्रजगोपिनमें दोनों थे महत्वज्ञानवती थीं प्रेमकी सीमा (हद्द) थीं ज्ञानविना स्वरूप लक्ष्य नहीं सो गोपी भगवत्के अंग अंगके ध्यानमें मग्न थी इससे गोपीजनमें प्रेम और ज्ञान दोनोंथे ।

श्लोक–अस्त्वेप मेतदुपदेशपदे त्वयीशे प्रेष्ठे भवांस्तनुभृतां किल वंधुरात्मा ॥व्यक्तं भवान्व्रजभयार्तिहरोभिजातो॥पुनः "न खलु गोपिकानंदनो भवानखिलदेहिनामंतरात्मदृक्" । इत्यादि

भापार्थ–यह तो गोपीजनोंकी वाक्य ऊपर केहभयेसे सिद्धहुआ कि गोपी महाज्ञाननिष्ठ थीं जहां ज्ञान नहीं वहां प्रीति जारवत् याने व्यभिचारवाली स्त्रीवत् यहां गोपीजनतो अविचलप्रेमभक्ति एक मुहूर्त भगवन्मूर्तिके ध्यानविना नहीं विताती यहीको ध्यानयोग कहें ।

सूत्र–सा तु कर्मज्ञानयोगेभ्योप्यधिकतरा ।

भापार्थ–याने यह भक्ति कर्म ज्ञान योगसे अधिक है कोइ कहताहे कि भक्तिका फल ज्ञान यह उनका कहना केवल अज्ञानता और भी गीताके विरुद्ध होताहे प्रमाण ।

गीतायाम् ।

श्लोक—तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योपि मतोधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥

भाषार्थ—तपसे कर्मसे ज्ञानसे योगी श्रेष्ठहै तासे हे अर्जुन तू भी योगी हो यह्व उपदेशदे भक्तिका प्रतिपादन करते ।

गीतायाम् ।

श्लोक—योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनांतरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ।

भाषार्थ—योगद्वारा मेरेको अंतरात्माद्वारा चिंतवन करते परंतु जो गति मेरेभक्तनको प्राप्त याने मेरेको मेरी भक्ति करनेवालेही पाते ऐसा मेरा मतहै । पुनः—

भागवते ए०

श्लोक—मुक्तिं ददाति कर्हिचित्स्म न भक्तियोगम् । इत्यादि ।

पुनः ।

श्लोक—न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाधायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ।
भक्त्याहमेकया ग्राह्यः शुद्धया प्रियसत्तम ॥
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा स्वपाकानपि संभवात् ॥

भाषार्थ—जो तू उद्धव मेरेसे मुक्ति चहै तो मेरी भक्ति न कर जो गति ज्ञानीको न सांख्यको न योगीको मिले सो गति भक्तिद्वारा मिलती है मेरी भक्तिमें न वर्णाश्रमका विचार न ज्ञानकी सहायताका प्रयोजन है ।

श्लोक—केवलेन हि भावेन गोप्यो गावः खगा मृगाः ।
येऽन्यमूढधियो नागाः सिद्धा मामीयुरंजसा ॥
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः शूद्रो वा यदि चेतरः ।
विष्णुभक्तिसमायुक्तो ज्ञेयः सर्वोत्तमोत्तमः ॥

भापार्थ–भला गोपी तो ज्ञानवतीभी थीं और मूढ नाग खग मृग इनकी भी गति भई और ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यतो हैं ही नहीं भक्तिसे शूद्र वाल्मीक श्वपच इत्यादि भी तरगये ।

श्लोक–बलिर्विभीषणो भीष्मः कपिलो नारदोर्ज्जुनः ।
प्रह्लादो जनको व्यासो ह्यम्बरीषः पृथुस्तथा ॥
विश्वक्सेनो ध्रुवोक्रूरः सनकाद्याः शुकादयः ।
वासुदेवप्रसादान्नं सर्वे गृह्णन्तु वैष्णवाः ॥

भापार्थ–यह ऊपरके कहेभये भक्त सब मेरी भक्ति कर वैष्णवी पदवी ग्रहणकर मायार्णवपार हुए इसमें ज्ञानी राजाजनक था बलि दानीथा अर्थभक्त अर्जुन थे निरपेक्ष नारदादि थे सो सब परमगतिको प्राप्तहैं जो कहो ज्ञानी तो सुनो और भक्तोंके लक्षण ।

भक्तिप्रकाश ।

श्लोक–व्याधस्याचरणं ध्रुवस्य च वयो विद्या गजेंद्रस्य का
कुब्जायाः किमु नामरूपमधिकं किं तत्सुदाम्नो धनम् ॥
का जातिर्विदुरस्य यादवपतेरुग्रस्य किं पौरुषं
भक्त्या तुष्यति केवलं न तु गुणैर्भक्तिप्रियो माधवः ॥

भापार्थ--व्याधका आचरन कौन शुद्धथा गजेंद्र कौन विद्या पढाथा कुब्जाके कौन रूपथा सुदामाके कौन धनथा विदुर कौन कुलीनथा और उग्रसेन कौन पराक्रमीथे सो यह कहो कि भगवतगुण देख रीझते सो इनमें भक्तिको छोड और कौन गुण था? ।

भागवते ए०

श्लोक–अकिंचनस्य दांतस्य शान्तस्य समचेतसः ।
मया संतुष्टमनसः सर्वाः सुखमया दिशः ॥
आज्ञायैवं गुणान्दोषान्मयादिष्टानपि स्वकान् ।
धर्मान्संत्यज्य यः सर्वान्मां भजेत स मत्परः ॥

तस्मात्त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनाः प्रतिचोदनाः ।
प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च ।
मामेकं शरणं व्यक्तमात्मानं सर्वदेहिनाम् ॥
याहि सर्वात्मभावेन मया स्या ह्यकुतोभयः ।
भक्त्याहमेकया गृह्यः शुद्ध्यात्मयियासताम् ॥
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकमपिसंभवात् ।
धर्मसत्यदयोपेता विद्यया तपसान्विताः ॥
मद्भक्त्यपेतमात्मानं न सम्यक्प्रपुनंति हि ।

भापार्थ—हे-उद्धव अंकिचन (दरिद्री) हो या जितेंद्रिय या शान्तहो परंतु इन दोनोमें जो मेरी भक्ति करता वो हमें प्रियहै अज्ञानी हो चहो गुणवानहो परंतु मेरेमें प्रीतिहो चाहे धर्मकोभी न जानताहो तोभी डरनहीं प्रवृत्तिमार्ग चाहै निवृत्तिमार्ग जितने आत्मा समर्पणकी हमें याने मेरी शरन आया उसे कोई बाधा नहीं करता ।

गीतायाम् ।

श्लोक—सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

भापार्थ—हे अर्जुन तू विधिनिषेध जे धर्म तिन्हें छोड हमें भज याने हमारी शरण ले तौ तेरे तीनप्रकारके कर्मोंका भोग मैं नाश करदेवोंगा संचित आगामी कर्तृत्व सो वात्सल्यगुणद्वारानिवृत्त यथा गाई अपने बचेको चाट पोंछ साफ करदेतीहै तैसे मैं कृपादृष्टिसे तेरे पाप दूर करूंगा मेरा अवतार केवल भक्तके अर्थ है न कि कोई कामनाके अर्थ ।

नारदीये ।

श्लोक—अनुग्रहाय भक्तानां मानुषं देहमाश्रितः ।
भजामि तादृशीं क्रीडां यां श्रुत्वा तत्परो भवेत् ॥

भापार्थ—याने भक्तनके ऊपर अनुग्रह मैं मानुष देह धारन करताहूं जैसी भावना कर मुझे भजताहै तैसेही रूप क्रीडा कर दर्शन देताहूं प्रसन्न रखताहूं

श्लोक–अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विजः ।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयोभक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥

भावार्थ–हे अर्जुन ! हम एक केवल भक्तके अधीन परतंत्रहैं नही तो हम स्वतंत्रहैं साधु मेरे हृदयमें हैं अत्यंतप्रिय मेरे वे हैं हम उन्हें प्रिय यथा मनुष्यको प्राण ।

श्लोक–नाहमात्मानमाशासे मद्भक्तैः साधुभिर्विना ।
श्रियं चात्यंतिकीं ब्रह्मन्येषां गतिरहं परम् ॥

भावार्थ–मुझे भक्तोंकी भलाईकी इच्छा रहतीहै न कि अपनी,बडे धनकी कुछ इच्छा नहीं रहती जो कि अपना रक्षक हमहींको जानते हैं उनकी चिन्ता हमको रहती है ।

भागवते ।

श्लोक–न देवो विद्यते काष्ठे पाषाणे नच मृन्मये ।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद्भावो हि कारणम् ॥

भावार्थ–न पाखानमें न काठमें न मट्टीमें न चित्रमें परन्तु शुकदेवजी कहो कि जो जिसमें भावना करता उसको उसीमें सिद्ध करताहूं तात्पर्य्य भाविकके भाववश ।

गीतायाम् ।

श्लोक–देवान्भावयतानेन ते देवा भावयंतु वः ।
परस्परं भावयंतः श्रेयःपरमवाप्स्यथ ॥

भावार्थ–तुम इंद्रादिकदेवतोंको प्रसन्न यज्ञद्वारा करते हो तौ ठीक वेभी प्रसन्न ही हैं अर्जुन हमारे प्रास्यर्थ आशीर्वाद देंगे इससे जैसी तुह्मारी भावना है वैसी ही सिद्ध होगी परंतु मेरेको भक्त जन प्राप्त है ।

भक्तिचिंतामणौ ।

श्लोक–नाहं वसामि वैकुंठे योगिनां हृदये न च ।
मद्भक्ता यत्र गायंति तत्र तिष्ठामि नारद ॥

भावार्थ--हे नारदजी! न मैं वैकुंठमें न योगिनके हृदयमें केवल वहीं रहताहूं जहां मेरे भक्तजन मेरा गुणानुवाद परमाह्लादसे गाते हैं तहां हम सुनते हैं सोई बात रामानुजसंप्रदायके कूरेशमुनिने कहा है ।

अतिमानुषग्रंथ ।

श्लोक-येत्वत्प्रियंतादिहपुण्यमपुण्यमन्यन्नान्यत्तयोर्भवतिलक्षणमत्रजातु। धूर्तायितं तवहियत्किलरासगोष्ठ्यांतत्कीर्तनं परमपावनमामनंति ॥

भावार्थ—कूरेशजी कहैहैं कि हे भगवन्! न कोई पापहै न कोई पुण्य जो तुम्हे प्रिय सोई पुण्य यहां हमारा कोई बल न जापका न मंत्रका काहेते कि संसारमें दो कर्म निषिद्ध चोरी जारी सो आपने माखन चुरायो गोपिनसे विहार हास्य कियो ताके भये कीर्तनप्रबंध श्रीमद्भागवतादि तिन्हे सुनके या गायके अनेक पामर तररहेहै धन्यहै प्रभु भगवद्भक्तिमें जातिपांतिका भी कोई प्रयोजन नही ।

भारद्वाजसंहितायाम् ।

श्लोक—न जातिभेदं न कुलं न लिंगं न गुणक्रियाः ।
न देशकालौ न विधिं सांख्ययोगौ ह्यपेक्षते ॥
ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्राः स्त्रियोऽथो अन्त्यजास्तथा ।
सर्व एव प्रपद्येरन्सर्वधातारमच्युतम् ॥

भावार्थ—भगवद्भक्तिमें जातिभेदका कुछ प्रयोजन नहीं न देशकाल न विधि निषेध सांख्य धर्म न योगका बल यहां भक्ति स्वतःसिद्ध जब प्रेमका उदय अन्तःकरणमें हुआ तब देहका भास भूलजाता तब ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इनमें कोई भी हो भगवद्भक्ति करे ऐसे वाक्य भगवान् कहैहैं हमें भक्त प्रिय हैं ।

गीतायाम् ।

श्लोक-मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते ।
स गुणान्समतीत्यैतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

भापार्थ–हे अर्जुन ! हमें व्यभिचार करता हुआ पुरुष हमारी प्रेमलक्षणा भक्तिमें मस्तहै अनन्यभावते तो ये गुण श्रेष्ठ हीरा कीचडसे भी उठाया जाताहै । दृष्टांत-कैसा भी कुमार्गी पुत्र हो परंतु द्रव्य पैदा कर पिताको देताहै तो पिता उसके गुणको देखता अवगुणको नहीं ।

भागवते द्वादशे ।

श्लोक–संसारसिंधुमतिदुस्तरमुत्तितीर्पोः पुंसोभवेद्विविधदुःखदवा-
दितस्य ॥ नान्यः प्लवो भगवतः पुरुषोत्तमस्य लीलाकथार-
सनिषेवणमंतरेण ॥

भापार्थ–शुकदेवजी कहैहैं कि हे राजन् ! यह संसार समुद्रहै यासे तरनेको और कोई उपाय नहीं केवल भगवत्की भक्ति ताकी लीला गावे या सुने सुनके मग्नहो ये रहस्य है याको कर्मादि नहीं जाने सवतेधीर्य्यतः ? "अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परांगतिम्" इत्यादि गीतासे भी सिद्ध है यह प्रेमभक्ति आर्द्रताहै ।

भागवते द्वितीये ।

श्लोक-अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन भजेत पुरुषं परम् ॥

भापार्थ–जब पुरुष भगवत्की भक्तिमें आर्द्रतासे प्राप्त होजाताहै तो स्वतएव अकाम यानें कामनारहित होजाताहै उसे कोई की सहायता नहीं । चाहने परती जैसे चतुर्मासाकी नदियोंमें नाव स्वतएव वेगसे जाती उसे बल्लीकी कोई जरूरत नहीं ।

शांडिल्यसंहितायाम् ।

श्लोक–न च भक्तिसमं पुण्यं न च भक्तिसमं व्रतम् ।
न च भक्तिसमं ध्यानं न च भक्तिसमं श्रुतम ॥

भापार्थ–न भक्ति सम पुण्यहै न तपहै न योगहै न व्रतहै भक्ति एक ऐसी चीजहै जासे स्वतएव वैराग्यरूप भक्तिका भगवत्का नाम याने श्रीराधे श्याम सबका मूलहै नामसंकीर्तन और भगवत्का नाम परमगतिहै ।

बृहन्नारदीये ।

श्लोक—न नामसदृशं ज्ञानं न नामसदृशं व्रतम् ।
न नामसदृशं ध्यानं न नामसदृशं फलम् ॥ १ ॥
न नामसदृशं कर्म न नामसदृशं तपः ।
न नामसदृशः शंभुर्न नामसदृशो यमः ॥ २ ॥
न नामसदृशी मुक्तिर्न नामसदृशः प्रभुः ।
ये गृह्णंति हरेर्नाम त एवाजिततद्गुणाः ॥

भाषार्थ—न नामसदृश ज्ञानहै न ध्यानहै न नामसदृश कोई धर्महै न नामसदृश कोई कर्महै जो नाम लेताहै उसकी प्रशंसा क्या करें फिर नामका माहात्म्य गुण शिवजीने जानाहै कौन नाम वासुदेव ।

भागवते प्रथम०अ० ।

श्लोक—वासुदेवपरा वेदा वासुदेवपरा मखाः ।
वासुदेवपरा योगा वासुदेवपराः क्रियाः ॥
वासुदेवपरं ज्ञानं वासुदेवपरं तपः ।
वासुदेवपरो धर्मो वासुदेवपरा गतिः ॥

भाषार्थ—शुकदेवजी कहैहैं कि वेद वासुदेवपर हैं और वासुदेवही पर यज्ञ और योग है वही मूर्ति सर्व क्रिया ज्ञान तप भी है वासुदेवसम कोई धर्म नही वासुदेवके प्राप्ति विना गति नहीं सो वासुदेव सबमें व्याप्तहै ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक—वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम् ।
सर्वांतरनिवासी च वासुदेव नमोस्तु ते ॥

भाषार्थ—वासुदेव यह नाम जिसका सोई प्रभु चित् अचित् वासकरता जैसे काष्ठमें अग्नि पुष्पमें सुगंध तिलमें तेल दूधमें माखन या प्रकारसों अखिल लोकमें व्याप्तहै ऐसे वासुदेवकी भक्ति मर्यादारहै सो भक्ति भगवत्को प्रियहै ।

गीतायाम् ।

श्लोक–सर्वगुह्यतमं भूयः शृणु मे परमं वचः ।
इष्टोसि मे दृढमतिस्ततो वक्ष्यामि ते हितम् ॥

भाषार्थ–हे तात एक गुह्यबात सुनो मेरा परमवचन मेरा इष्टकरनवालेको कोई पदार्थ दुर्लभ नहीं और उसे कुछ कर्तव्य नहीं न उसे कर्म कुछ करसके न वेदका भय ।

श्लोक–नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया ।
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥

भाषार्थ–हे अर्जुन मै न वेद करके न तप न दान न यज्ञ करके ऐसा देखनेको प्राप्त सो मैं अपने भक्तकी भक्तिके अधीनकेवल उसकी रीझन से मेरा अवतार और मैं स्वतंत्रहूं ।

श्लोक–भक्त्यात्वनन्यया लभ्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च त्वनन्य प्रवेष्टुं च परंतप ॥

भाषार्थ–एक भक्ति मेरी अनन्यतासे धारण करो जिससे वही परंतप है और वही हमें वश करेगा फिर उससे दोनों लोकोंमें कमती क्याहै भक्तका दोनों लोकमें याने नित्यलोक विरजापार और अनित्य मृत्युलोकमें संसारमें पैदा और नाश सो कहे हैं ।

श्लोक–कौंतेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ।

भाषार्थ–कौन ऐसाहै मेरी भक्ति कर फेरि संसारमें जन्मले मरणहो सो नहीं हमारे भक्तका कभी नाश नहीं ।

श्लोक–तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ॥

भाषार्थ–तिन अपने भक्तोंका मरणरूप संसारसागरसे पार करनेवाला मैं हूं ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक–महति निलये ब्रह्मन्ब्रह्मांडस्तु जलप्लुतः ।
न तत्र नाशो मद्भक्त सर्वेषां च विशिष्यते ॥

भापार्थ—महत्तत्त्वोंका नाश होजाता यावत्ब्रह्मांड ये सब नाश होजातेहैं जलके द्वारा सो जलवायुके द्वारा इनका कारण ब्रह्माभी नाश होजाताहै परन्तु भगवान्‌कहैंहैं कि मेरी शरण आये मेरे भक्तका कभी नाश नहींहै।

श्लोक—"यदि वातादिदोषेण मद्भक्तो मां च विस्मरेत्।
तर्हि स्मराम्यहं भक्तं स याति परमां गतिम्॥"

गीतायाम्।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥
यंयं वापिस्मरन्भावं त्यजत्यंते कलेवरम्।
तन्तमेवैतिकौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥

भापार्थ—हेशिष्य! भगवत् कहैहैं कि हे अर्जुन!यदि मेरा भक्त अन्तकालमें वातादि याने सन्निपातरोगमें हमें भूलजावे तौ मैं नहीं भूलता और उसे परागति याने अपना नित्य वृन्दावन प्रकृति परे तहांका वास अपने निकट रखताहूं अन्तकालमें मुझे जैसा स्मरण वही भावसे उसे मुक्त करताहूँ भक्तके मैं संग सदा रहताहूं प्रमाण।

वाराहपुराणे।

श्लोक—मद्भक्ता यत्र गच्छंति तत्र गच्छामि पार्थिव।
भक्तानामनुगच्छंति मुक्तयः श्रुतिभिः सह॥

भापार्थ—मेरा भक्त जहां जहां जाता तहां तहां मैं वाके पीछे फिरूं हूं मेरा मन भक्तके साथमें मैं भक्तके अधीन हूं मेरा भक्त मेरा प्राण मैं भक्तों का सर्वस्व हों पुनः।

बृहन्नारदीये।

श्लोक—भक्तसंगे भ्रमत्येव च्छायेव सततं हरिः।
चक्रेण रक्षते भक्तान्भक्त्या भक्तजनप्रियः॥

भापार्थ–भक्तके संग हरि ऐसे रहते जैसे देहीकी छांई यथा बालकके पीछे माता या प्रकार चक्रको लिये हरिसंग रहते भक्त भगवत्को प्रिय है परंतु निष्कपटी हो ।

स्कन्दपुराणे ।

श्लोक–वासुदेवे भगवति भक्तियोगः प्रयोजितः ।
जनयत्याशु वैराग्यं ज्ञानं च यदहैतुकम् ॥

भापार्थ–जो वासुदेव परमात्माकी भक्ति करताहै उसे ज्ञान स्वत एव पैदा होताहै और वैराग्यकी तो मूर्ति ही होजाताहै काहेतें परमात्माकी भक्ति निष्कामहै तो वैराग्य है ही याते जिसे ज्ञान वैराग्य चाहिये सो भक्तिमें ढूंढो प्रमाण ।

श्लोक–वासुदेवे भगवति भक्तिमुद्वहतां नृणाम् ।
ज्ञानवैराग्यवीर्येण नेह कश्चिद्व्यपाश्रयः ॥

भापार्थ–जो पुरुप वासुदेवकी भक्ति करताहै वह महान् श्रेष्ठहै धर्मज्ञहै काहेतें जब स्नेह मेरेमें भया तो ज्ञानवैराग्य तो ताके दोनों अंग होचुके ।

नारदगीतायाम् ।

श्लोक–अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः ।
तीव्रेण भक्तियोगेन भजेत पुरुषं परम् ॥

भापार्थ–जो पुरुप अकाम करके भजताहै वह पुरुप अन्तमें श्रेष्ठ मोक्ष याने परमपुरुप श्रीकृष्णचंद्र प्रमाण (श्रीकृष्णः प्रकृतेः परः) तिनको प्राप्त होताहै ।

गीतायाम् ।

श्लोक–ज्ञानवैराग्ययुक्तेन भक्तियोगेन योगिनः ।
क्षेमाय पादमूलं मे प्रविशंत्यकुतोभयम् ॥

भापार्थ–जो पुरुप ज्ञानवैराग्य युक्त और तीव्र भक्तिद्वारा मेरे चरणकी शरण आया उसे फिर जन्ममरणके दुःखसे प्रयोजन क्या जो मेरेको भजताहै मैं उसको भजताहूं तहां सामान्य विशेषको कहैहैं ।

श्लोक—विषयान्ध्यायतश्चित्तं विषयेषु विषज्जते ।
मामनुस्मरतश्चित्तं मय्येव प्रविलीयते ॥

भावार्थ—जो पुरुष विषय वासनाद्वारा भजताहै सो विषययुक्तस्वरूप इंद्रादिकलोकोंको प्राप्त होता है जो परम पुरुष जान एकाग्रचित्तसे भजताहै वो जीवन्मुक्त होताहै ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक—प्रतिमामंत्रतीर्थेषु भेषजे वैष्णवे गुरौ ।
यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी ॥

भावार्थ—जो पुरुष प्रतिमा याने मूर्ति उन्हें पाषाण या धातुकी जानताहै और मंत्रको अक्षर तीर्थ यथा यमुनाजी इन्हें जल जाने वैष्णव वा गुरु तिन्हें मनुष्यकरके जानते हैं उन्हें जैसी भावना तैसी फलतीहै जो हरिको जैसे माने ताको प्रभु तैसे जाने प्रमाण ।

गये तब "जाके रही भावना जैसी प्रभुमूरति तिन देखी तैसी" इत्यादि यह वाक्य तुलसीकृतरामायणका है पुनः।

नारदपुराणे ।

श्लोक–एकैकसंबंधबलेन सर्वं वहंति भारं नरलोकमध्ये ।
त्वं मामकी चास्ति नवप्रकारैःप्रसीदस्वामिन्कृपया बलेन॥

भापार्थ–इस श्लोकमें नवप्रकारका भगवत्से संबंधहै संसारमें तौ एकैक प्रकार यथा एकपुरुपको स्त्री पति, पुत्र पिता,कहता । भ्राता,भाई,पिता,माता, पुत्र, ऐसे वो एकहै संबंध ऐसी नवप्रकारकी भक्तिहै जो जैसे भजे ।

भागवते ।

श्लोक–श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम् ।
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ॥

भापार्थ–श्रवण कीर्तन स्मरण चरणसेवा अर्चन (पूजा) वंदना दास्य आत्मनिवेदन यह नवप्रकारकी भक्तिहै सो एक एकके अधिकारी सुनो ।

श्रवणमें राजा परीक्षित्।

श्लोक–नैपातिदुःसहा क्षुन्मां त्यक्तोदमपि बाधते ।
पिबंतं त्वन्मुखांभोजच्युतं हरिकथामृतम् ॥

भापार्थ–जो कोई पुरुप भगवत्का यश अमृतवत्श्रवण (कान)द्वारा पान करता याने सुनता हैजिसकी मति शुद्ध होकर जन्ममरणके दुःखसे छूट जाताहै राजा परीक्षित श्रवणके अधिकारी भयेहैं जिन्होंने एकाग्रचित्तकर श्रीमद्भागवत सुनाहै ।

कीर्तनमें नारदजी ।

श्लोक–
कृतेयद्ध्यायतो विष्णुंत्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्य्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥

भापार्थ–जो शरण आया उसे हरिजी कहैहैं कि कृतयुगमें ध्यान त्रेतामें यज्ञ द्वापरमें पूजा ताहै में उसको भजताहूं जो श्रीकृष्णयश गावे और आप तौ अहर्निश गातेहैं

स्मरणभक्तिमें प्रह्लाद ।

श्लोक—गोकोटिदानंग्रहणेषुकाशीप्रयागगंगायुतकल्पवासः ॥
यज्ज्ञायते मेरुसुवर्णदानं गोविंदनामस्मरणेनतुल्यम् ॥

भावार्थ—कोटि गोदान करे ग्रहणमें काशीस्थान एकहजार वर्ष कल्प वास प्रयागमें करे और जो सुवर्णाचलको दान करै सो सब एकगोविंदके नामस्मरणके बराबर नही है सो ताके अधिकारी प्रह्लादजी भये नामका प्रताप प्रमाण ।

श्लोक—कृष्णकृष्णेतिकृष्णेति यो मां स्मरति नित्यशः ।
जलं भित्त्वा यथा पद्मं नरकादुद्धराम्यहम् ॥ १ ॥
हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम् ॥
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥

पुनः—मृषागिरस्तह्यसतीरसत्कथा न कथ्यते यद्भगवानधोक्षजः ॥
तदेव सत्यं तदुहैव मंगलं तदेव पुण्यं भगवद्गुणोदयम् ॥

भावार्थ—देखो भगवत्का नाम सर्वोपरि विनाश्रम चलते फिरते जो लेताहै उसे संसार बाधा नही करता । जैसे पुरैन जलमें परउस्में नहीं व्यापता नामके प्रतापसे गजग्राहसे बचा नामके प्रतापसे अजामिल तरा नामके प्रतापसे द्रौपदीकी लज्जा रही प्रमाण ।

श्लोक—शंखचक्रगदापाणे द्वारकानिलयाच्युत ।
गोविंद पुंडरीकाक्ष रक्ष मां शरणागताम् ॥

भावार्थ—देखो द्रौपदीजी नाम ले पुकारी हे गोविंद ! हे द्वारकानाथ ! हे शंखचक्रके धारण करनेवाले! भक्तरक्षक! हम शरणमें हैं इतनेते चीर बढाहै ।

पादसेवनमें श्रीलक्ष्मीजी ।

श्लोक—कदा पुनः शंखरथांगकल्पकध्वजारविंदांकुशवज्रलक्षणम् ।
त्रिविक्रम त्वच्चरणांबुजद्वयं मदीयमूर्द्धानमलं करिष्यति ॥

भापार्थ-देखो कैसेहैं चरणारविंद भगवत्के जिन्हें श्रीलक्ष्मीजी सेवन करें हैं सो कहेहैं कि जिनमें ये चिह्नहैं शंख चक्र कल्पवृक्ष ध्वजा कमल अंकुश वज्र ऐसे अद्भुत कोमल भक्तजनोंको अभय देनेहारे हैं ।

अर्चनमें पृथु ।

भगवतको अपने हाथसे राजा पृथु पूजे मंदिरबनवाय श्रीमूर्तिविराजमान कर अष्टयाम समय २ षट् ऋतुमें अनेकप्रकारके पदार्थ अपने हाथसे बनाइ भोग धरते और लाडलडाते फिर नृत्य कर रिझाते ।

वंदनामें अक्रूरजी ।

विख्यात यदुवंशमें श्रेष्ठ ज्ञानाधिक जिन्हें श्रीकृष्ण भगवानने मणिके समयमें काशीसे बुलाय बहुमान कियाहै ।

दासभक्ति ।

दासभक्तिके अधिकारी बहुतहैं जैसे युधिष्ठिर ध्रुव हनूमानजी और बहुत परंतु दास्यघटित श्रीहनूमान्जीपै होयहैं अनेकप्रकारसे श्रीमद्वाल्मीकीयरामायणमें प्रसिद्ध है इनके चरित्र ।

लंकाकांडे ।

श्लोक–दासोहं कोशलेंद्रस्य रामस्याक्लिष्टकर्मणः ।
हनूमाञ्शत्रुसैन्यानां निहंता मारुतात्मजः ॥

भापार्थ–जब लंकामें श्रीजनकनंदनीजीके खोजमें गयेहैं तब रावणसे ऊपर वाला श्लोक कहाहै और निरपेक्ष दासहैं और भी विदुरजीकी वाक्य ।

श्लोक–वासुदेवस्य ये भक्ताश्शान्तास्तद्गतमानसाः ।
तेषां दासस्य दासोहं भवेयं जन्मजन्मनि ॥

पुनः–तव दास्यसुखैकसंगिनां भवनेषु क्रिमिकीटजन्मनाम् ।
इतरावसथेषु मास्मभूदपि मे जन्म चतुर्मुखात्मनः ॥

भापार्थ–ऊपरके कहे श्लोकनका आशयदास्य तौ प्रतीतहै । हे विदुरजी! वा यामुनमुनि और युधिष्ठिरतो दासभावमें हैं ।

सखाभावग्वालवाल ।

योंतौ सखा अर्जुन उद्धव हैं परंतु सखानके भेदहैं एक तो नर्मसखा यथा अर्जुन जैसे मित्र प्रियसखा उद्धव जिनसे गुप्तबात भी कहैहैं हरि अर्जुनके सखा प्रमाण ।

श्लोक—सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हेकृष्ण हेयादव हेसखेति ।

भापार्थ—श्रीकृष्णवाक्यसे भी प्रमाण है कि अर्जुन सखा थे ।

श्लोक—नर्माण्युदाररुचिरस्मितशोभितानि ।
हे पार्थ हेऽर्जुन सखे कुरुनंदनेति ॥
संजल्पितानि नरदेव हृदिस्पृशानि ।
स्मर्तुर्लुठन्ति हृदयं मम माधवस्य ॥

भापार्थ—ऊपरके श्लोकका आशय श्रीकृष्ण महाराज भी अर्जुनको हेसखे कुरुनन्दन कहाहै अब उद्धवजीको सखाभाव कहे सो अतिप्रिय एकांती सखा हैं ।

श्लोक—वृष्णीनां प्रवरो मन्त्री कृष्णस्य दयितः सखा । इति ।

पुनः—शय्यासनाटनस्थानस्नानक्रीडाशनादिषु ॥
कथं त्वां प्रियमात्मानं वयं भक्तास्त्यजेमहि ॥

भापार्थ—देखो भक्तिका प्रभाव उद्धवजी सखा प्रिय सब जगह श्रीकृष्णके संग रहेहैं क्या एकांतकी कहीं भी मनाही नहीं परमप्रियहै सोई वाक्य ठाकुरजीने निजमुख ते कहाहै ।

श्लोक—नोद्धवोण्वपि मन्न्यूनो यद्गुणैर्नार्दितः प्रभुः । इति ।

पुनः—न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शंकरः ।
न च संकर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान् ॥

भापार्थ—अब ये ऊपर कह आये सो तौ सखाहैं ही परंतु सखाभाववदित ग्वालवालनपै है सो प्रमाण ।

ब्रह्मपुराणे ।

श्लोक–श्रीदामा नाम गोपालो रामकेशवयोः सखा ।
सुबलस्तोककृष्णाद्या गोपाः प्रेम्णेदमब्रुवन् ॥

भाषार्थ–ऊपर कहेभये क्या तो आठहैं कोईका मत कि सोरह हजार कोई एकहजार "कृष्णस्य ह्ययुतं सखयः" परंतु मुख्य आठ ये तिनके नाम सुनो सुबल श्रीदाम तोप कृष्ण मंगल कुमुद अर्जुन गोविंद ये अष्ट सखा परमरूप उपासक गोपिनवत्थे सो रूप दोप्रकारका एक वात्सल्यतारूप (बालक) जिसमें श्रीनंदराय यशोदाजी तथा ग्वालबाल किशोररूपकी आसक्त श्रीव्रजगोपी थी अहर्निश अनुक्षण व्रजचंद्रके रूपमें चकोरवत् ताकती थीं संसारके कार्यकरती थीं परंतु लालजीके रूपके ध्यानमें देहानुसंधान रहता भागवतमें कथाहै कि एक गोपीके पतिने उसे रोकी कोठेमें बंदकरी परंतु उसने सूक्ष्मरूपसे निकस भगवतद्दर्शन किये उसके पति और अन्यगोपिनको वही स्थूल शरीर दिखाई दिया पतिगृहमें आय कोठरीमें न पाय लजाय भगवत्प्रेम जान गोपीको दंडवत् किया सोई व्रजमें दोधार प्रेमकी एकतो श्रीनंदग्राम दूसरी श्रीवर्षानेमें श्रीवृषभानजी महाराज श्रीकीरतिरानी महारानीके अष्टसखिनसहित श्रीराधिका महाराणी खेलती थीं ।

श्लोक–गोपेंद्रवंशवृषभानुमहीपनाम यस्य गृहे प्रकटकापि निकुंजदेवी । राधेति नाम फलवाञ्छितकल्पवृक्षो तस्यांबुजन्मपदरेणुमहं स्मरामि ॥

भाषार्थ–जैसे नंदयशोदाके श्रीलालजी अष्टसखनसहित खेलते तैसेही श्री वृषभानुजी श्रीकीरतिजूके यहां अष्टसखिनसहित श्रीराधाजीने वात्सल्य बाललीला करी सो अष्टसखी ये ललिता चंपकलता विशाखा चित्रलेखा तुंगभद्रा इंदुलेखा रंगदेवी सुदेवी सो ये श्रीलाडिलीजीकी परमप्रियसखी यूथेश्वरी थीं योंतो सोलहसहस्र परिचर्यामें थीं सो प्रेमकी हदतो व्रजवासिनमेंहै और योंतो भगवत्के अनेकभक्तहैं यथा सुदामा ।

भागवते दशमे।

श्लोक—कृष्णस्यासीत्सखा कश्चिद्ब्राह्मणो ब्रह्मवित्तमः ॥ १ ॥
ननु ब्रह्मन्भगवतः सखा साक्षाच्छ्रियः पतेः ॥

भापार्थ—सो कहे कि देखो श्रीकृष्ण रुक्मिणी ताके पति सो सुदामाको देख करुणानिधि कैसे मिले कैसो सत्कार कियो सो कहेहैं कौनविधिसों मिले

श्लोक—तं विलोक्याच्युतो दूरात्प्रियापर्यंकमास्थितः ।
सहसोत्थाय चाभ्येत्य दोर्भ्यां प्रत्यग्रहीन्मुदा ॥
सख्युः प्रियस्य विप्रर्षेरंगसंगातिनिर्वृतः ।
प्रीतो व्यमुंचदब्बिन्दून्नेत्राभ्यां पुष्करेक्षणः ॥
अथोपवेश्य पर्यंके स्वयं सख्युः समर्हणम् ।
उपहृत्यावनिज्यास्य पादौ पादावनेजनीः ॥
अग्रहीच्छिरसा राजन्भगवाँल्लोकपावनः ॥
कुचैलं मलिनं क्षामं द्विजं धमनिसंततम् ।
देवी पर्यचरच्छैव्या चामरव्यजनेन वै ॥
योसौ त्रिलोकगुरुणा श्रीनिवासेन संभृतः ।
पर्यंकस्थां श्रियं हित्वा परिष्वक्तोऽग्रजो यथा ॥

भापार्थ—शुकदेवजी कहेहैं कि हे राजन्! श्रीकृष्ण पर्यंक (सेज)में विराजे रुक्मिणी गोड दावतीथीं ताही समय सुदामा पहुंचे सो तिन्हें देख दीनबंधु उठ छातीसों लगाय दिव्यसिंहासनपै बैठाय परातमें अपनेहाथसों पगधोय नानाप्रकारसे सेवाकर भोजनकराए सुन्दर पर्यंकपै परमथके जान आप गोड दाबे और पूंछी कि भावीने हमे कुछ दियो है तब लज्जा कर तंदुलदिये सो लै आप मुखमें दो फंका लगाये जहां तीसराका विचार करा कि रुक्मिणीने हाथपकड कहा कि बस अखंड धन ऐश्वर्य दे विश्वकर्माद्वारा सुदामानामकी पुरी इंद्रलोकसम रचायदी तबतक सुदामा द्वारकामेंही था हरिसे बिदा हो अपने यहां आय धन ऐश्वर्य देख भगवत्कृपा जान सुदामा महाज्ञानी था

नाशवान् वस्तु देख उसको अतिहर्ष न हुआ अब विचार करो कि सुदामा दरिद्रीमलिन परन्तु केवल भगवद्भक्त्या इससे हरिरीझ विधिवत् संमानदिया ।

आत्मनिवेदन ।

हे शिष्य ! आत्मनिवेदनमें राजा बलिको कहेहैं । यह तो नवप्रकारकी भक्ति शुक देवमहाराजने श्रीभागवतमें कही अब दसवीं भक्ति पररूपासक्तिहीमें अतिविरं हक्लान्तता सो केवल व्रजगोपीनमें पाई गई और नव भक्ति तौ इसके अन्तरंगहैं और भक्त तौ एक २ के अधिकारी गोपिनमें सब पाईजायँ ? बात उनके कथनमे प्रतीत पंचाध्यायी भ्रमरगीत गोपीगीत इत्यादिसे सिद्धहै।

" तन्मयतासक्तिः कृष्णोहम् इत्यादि । हमीं कृष्णहैं तन्मय अभेद यही आत्मनिवेदन पुनः " क्षणं युगशतमिव " अर्थ-एकक्षण सौयुग बराबर बीत-ताथा उनके प्रेमकी को कहै श्रीमहाप्रभु अपने यहांकी आचार्य गोपी मानेहैं

"गोपिकाः प्रोक्ता गुरवः साधने मताः" । इत्यादि ।

अर्थ गोपिनको गुरुकरके माना याने प्रेम लक्षणाभक्ति इन्हींकी कृपा इनकी वंदनासे प्राप्तहै अब भगवद्भक्तिका प्रताप· अनेकग्रंथनमें है ताको । शिष्य ! तू चित्त एकाग्रकर सुन ।

वाराहपुराणे ।

श्लोक–शृण्वतां स्वकथाः कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः ।
हृद्यंतःस्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम् ॥

भावार्थ–जो भक्तजन भगवत्कथा सुनते या गावे तिनके अंतःकरणमें भगवत् मूर्तिका आविर्भाव होताहै ।

भविष्यपुराणे ।

श्लोक–हरिभक्तिर्महादिव्या सर्वमुक्त्यादिसिद्धये ।
भुक्तयश्चाद्भुतास्तस्याश्चेटिकास्तदनुव्रताः ॥

भावार्थ–व्यासजी कहैहैं कि हरि जे परमात्मा तिनकी भक्तिमे भुक्ति रहे यहांका सुख स्वर्गादिसुख मिलता मुक्तिमें परा गति पुरुषको प्राप्त होतीहै ।

भागवते ।

श्लोक-तत्सर्वं भक्तियोगेन मद्भक्तो लभतेंजसा ।
स्वर्गापवर्गौं स कथं लब्ध्वा मद्धाम वांछति ॥

भाषार्थ-हे उद्धव ! मेरे भक्तनको स्वर्गकी बात कहा मेरा धाम तिनको सुलभहै और मेरा मिलना सुलभ है मेरे भक्त कैसे होयँ कैसा प्रेमका स्वरूपहै सो सुनो ।

श्लोकः-अथासक्तस्तथाभावस्ततःप्रेमाभ्युदंचति ।
साधकानामिदं प्रेमप्रादुर्भावो यथा क्रमात् ॥

पुनः-वाग्गद्गदा द्रवते यस्य चित्तं हसत्यभीक्ष्णं
रुदति क्वचिच्च॥ विलज्जउद्गायति नृत्यते च
मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति ।

भाषार्थ-जब जिज्ञासु भक्तिमें आसक्त होताहै तब ताके विषय प्रेम प्रगट होताहै तब ताकी दशा सुनो. भगवत्चरित्र गावे कबहूं गद्गद होय कबहूं रोमांच हो आवें यह जीवन्मुक्त दशा तुरीय अवस्था वेदांती कहतेहैं जिसमें देहाध्यासादिक विस्मृत होयँ ।

श्लोक-स वै मनः कृष्णपदारविंदयोर्वचांसि वैकुंठगुणानुवर्णने ।
करौ हरेर्मंदिरमार्जनादिषु श्रुती चकाराच्युतसत्कथोदये ॥

पुनः-मुकुंदलिंगालयदर्शने दृशौ तद्भृत्यगात्रस्पर्शेंगसंगमम् ।
घ्राणंच तत्पादसरोजसौरभे श्रीमत्तुलस्या रसना तदर्प्यते ॥

भाषार्थ-जब यह मन श्रीकृष्णके पादारविंदमें लगताहै तब यह वाक्य करके श्रीकृष्णके गुण गाता हाथसे भगवत्मंदिरमें झाडू देता है श्रुति भी कहैहै कि जापै भगवत्कृपा होय ताकी ऐसी बुद्धि होय पुनः कहे किसी महानुभावकी वाक्य है ॥

श्लोक-पादौ हरेः क्षेत्रपदानुसर्पणे शिरो हृषीकेशपदाभिवंदने ।
कामं च दास्ये नतु कामकाम्यया यथोत्तमश्लोकगुणाश्रया रतिः ॥

भापार्थ-पाँयनसों भगवतक्षेत्र जैसे श्रीव्रजयात्रा करे माथसे श्रीजीकी चरणरजवंदन करै शरीरसे भगवतदासनकी सेवा करे मुखसे हरिगुण गावे

पुनः-धन्योहं कृतकृत्योहं पुण्योऽहं पुरुषोत्तम ।
अद्य मे सफलं जन्म जीवितं सफलं च मे ॥

पुनः-मुक्तानामपि सिद्धानां नारायणपरायणः ।
सुदुर्लभः प्रशांतात्मा कोटिष्वपि महामुने ॥

भापार्थ-इत्यादि वाक्यसे सिद्ध हुआ कि भगवद्भक्तिके समान और कोई उपाय परागतिको नहीं सो कैसीहै भक्ति ताको कहै है ।

गीतायाम् ।

श्लोक-जन्मांतरसहस्रेषु तपोध्यानशमादिभिः ।
नराणां क्षीणपापानां कृष्णे भक्तिः प्रजायते ॥

भापार्थ-अनेक जन्म तप ध्यान समाधि करके जब पुरुपके पाप क्षीण होयँ तब पुरुप श्रीकृष्णभक्त होता है सो गीतामें भी कहा "अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो याति परां गतिम्" अनेकजन्मोंके शुभकर्मोंकी सहायतासे श्रीकृष्ण भक्तिप्राप्तिद्वारा परा गति नित्यानंद श्रीगोलोक मिले है।

ब्रह्मसंहितायाम् ।

श्लोक-ब्रह्मानंदरसादनंतगुणतो रम्यो रसो वैष्णव
स्तस्मात्कोटिगुणोज्ज्वलश्च मधुरी श्रीगोकुलेंद्रो रसः ॥
यच्चानंतचमत्कृतिप्रतिसुपां सद्वल्लवीनां परः
श्रीराधापदमद्ममेव परमं सर्वस्वभूतं मम ॥

भापार्थ-सो हे शिष्य ! ब्रह्मानंदगुण श्रीवैष्णव लूटतेहैं कोई किसी देवताका आराधन करताहै परंतु सो तौ श्रीगोकुलमें जो नंदगृहमें प्रगट वर्पानेमें श्रीराधामहारानी इनकी भक्तिते ब्रह्मानंद नित्यानंद सुख मिलताहै ।

जामें सब अवतारनके मूलव्यूह क्षीरसागरनिवासी तिनहूके मूल श्रीकृष्ण भगवान् तामें प्रमाण ।

नारदपुराणे ।

श्लोक–वैकुंठेतिपरेलोकेश्रियासार्द्धंजगत्पतिः ।
आस्तेविष्णुरचिंत्यात्माभक्तैर्भागवतैस्सह ॥
एपनारायणःश्रीमान्क्षीरार्णवनिकेतनः ।
नागपर्यंकमुत्सृज्यह्यागतोमथुरांपुरीम् ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! जेते अवतार भगवत्केहैं ते क्षीरसागरनिवासी सो शेपजी पर शयन व्यह कहातेहैं तिनतेहीहैं सो तिनकी उत्पत्ति सुनो । वैकुंठसे भी परे दूर वह लोक जहांको मुक्त अनन्य भक्तजन प्राप्त होते सोई गोलोकमें मथुरापुरीमें श्रीनित्यविहारीजी विराजते तिनके अंशते विष्णुनारायण अनेक ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति करैहैं ।

भागवते ।

श्लोक–एते चांशकलाः पुंसः कृष्णस्तु भगवान्स्वयम् ।
इंद्रादिव्याकुल लोके मृडयंतियुगेयुगे ॥

भापार्थ–सो और जेते अवतार होतेहैं सो व्यूह याने क्षीरसागरनिवासी भगवानते और परमपुरुप सच्चिदानंद श्रीगोलोकनाथ स्वयं श्रीकृष्णनंदनंदन और वसुदेवनंदनका अवतार वैकुंठनाथसे है प्रमाण ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक–सात्त्वतां स्थानमूर्द्धन्यं विष्णोरत्यंतवल्लभम् ।
नित्यं वृन्दावनं नाम ब्रह्मांडोपरि संस्थितम् ॥
पूर्णब्रह्म सुखैश्वर्य्यं नित्यमानंदमव्ययम् ।
वैकुण्ठादितदंशाशस्स्वयंवृन्दावनं भुवि ॥
गोलोकैश्वर्य्ययत्किंचिद्गोलोकेतत्प्रतिष्ठितम् ।
वैकुण्ठादिवैभवंतद्द्वारकायांप्रकाशयेत ॥

तद्ब्रह्मपरमैश्वर्य्यंनित्यंवृन्दावनाश्रयम् ।
कृष्णधामपरंतेपांवनमध्येविशेपतः ॥

भापार्थ-देख पद्मपुराणमें महादेवजी कहे हैं कि हे पार्वति ! सबते परे ऊंचा विरजापार स्वयंप्रकाश जहा सूर्य्य नहीं जहां कोई काल नहीं ऐसा श्रीगोलोक ताके मध्यमें नित्य वृन्दावन ताकी अपेक्षा विष्णुभी करेहैं सो वृन्दावनको किंचित् अंश वैकुंठ ताकी लीला द्वारकाजीमें वसुदेवनंदनसे है । और व्रजगोकुलमें गोलोककी लीला स्वयं कृष्ण नित्य वृन्दावन विहारीहैं सोई श्रीनन्दरायके गृहमें बाललीला और वृन्दावनमें किशोरलीला करी तामें प्रमाण भी सुनो ।

सनकादिसंहितायाम् ।

श्लोक-कृष्णोऽन्यो यदि संभूतो यस्तु गोपेंद्रनंदनः ।
वृन्दावनं परित्यज्य पादमेकं न गच्छति ॥

भापार्थ-श्रीकृष्णवसुदेवनंदन भी परन्तु स्वयं कृष्ण सच्चिदानंद श्रीनंदरायके गृहमें प्रगटे सो कृष्ण श्रीराधिका महारानीका संग तथा वृन्दावनके बाहर एक पग भी नहीं धरते इस श्लोकका आशय उसपर है जो लोग वसुदेवनंदन और नन्दनन्दन एकै जानते भगवान् व्रजछोड कहीं बाहर जाते नहीं ताका प्रमाण ।

ब्रह्मसंहितायाम् ।

श्लोक-निरपेक्षं मुनिं शांतं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यंघ्रिरेणुभिः ॥

भापार्थ-श्रीकृष्णमहाराज कहेहैंकि न हमें कोई इच्छा न कोई वैरी हमारा हमारा तौ स्वरूप सच्चिदानंदमूर्ति है समदर्शी और सर्वकाल व्रजमें रहताहूं ।

स्कन्दपुराणे ।

श्लोक-प्रेम्णा सत्कृत्य चाक्रूरं सर्वेषामविजानताम् ।
स्वदेहस्थं पृथक्कृत्य विष्णुं प्रोवाच माधवः ।

द्विभुजो मुरलीहस्तो निवीतो वनमालया ॥
मयूरपिच्छसन्नद्धः सद्रत्नमुकुटावृतः ।
पीतांबरधरो मीनाकारकुंडलसंयुतः ॥
मथुरां त्वं समागच्छ बलेनाक्रूरकेण च ।
कंसादीनसुरान्हत्वा संविवाह्य नृपात्मजाः ॥
भुवो भारं समाहृत्य यदुभिः स्वालयं व्रज ।
इति विष्णुसमाज्ञाय श्रीकृष्णो राधया सह ॥

भाषार्थ—जब अक्रूरजी श्रीकृष्णको गोकुलते मथुराको ले चले तब मार्गमें आपतो श्रीयमुनाजी स्नान करने लगे और यहां श्रीनन्दनंदन अपनेते वसुदेवनंदनको जो स्वरूप जो वसुदेवजी पहुँचाय आये थे सो अंशस्वरूप अलग कर आप बोले कि हे विष्णु! तुम चारभुजा छिपायके दो भुजा करो और मोरपंखका मुकुट और वनमाल पीतांबर धारणकर मुरली ले संगमें बलदेवजी और अक्रूरजीको ले मथुराजाय कंसको मार राजाओंकी कन्या विवाह यंदिशकाट भूमिका भार उतार तुम्हारे परिकर जो यदुवंशी तिन्हे ले तुम्हारा जो वैकुंठ ताको चलेजाना । व्यासजी कहेहैं कि याप्रकार श्रीनंदनंदन वसुदेव नंदनको मथुरा पठाय आप श्रीजीसहित श्रीवृन्दावनमें विहारकरने लगे। इति हेशिष्य! देख सोई बात श्रीराधावल्लभसंप्रदायके आचार्यवर्य श्रीगोस्वामी रसिकेंदुने श्रीहितहरिवंशजी अपने ग्रंथ । राधासुधानिधिमें कहाहै सो सुनो ।

श्रीराधासुधानिधौ ।

श्लोक—दृष्ट्वा क्वापि च केशवो व्रजवधूमादाय कांचिद्गतः ।
सर्वा एव विमोहिताः सखि वयं सोऽन्वेषणीयो यदि ॥
द्वौ द्वौ गच्छतमित्युदीर्य सहसा राधां गृहीत्वा करे ।
गोपीवेषधरो निकुंजभवनं प्राप्तो हरिः पातु वः ॥

नारदपुराणे ।

श्लोक—जानामि नैव गतिमस्य श्रुतिः पुराण-
ब्रह्मेश्वरादय इहासत वन्दने हि ॥ इत्यादि ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! ऊपरके कहे श्लोकका तात्पर्य सुन अब तू शास्त्रके झगरेमें न पर काहेते नारदजी अपने भ्रातन सनकादिनसों कही कि जा बातको श्रुति पुराण नही जानसकते यह रहस्यहै ब्रह्मा इंद्र महादेव ये भी वाकी मायामें भ्रमैहैं ब्रह्माका चारित्र वत्सहरणमें जानो इंद्र गोवर्धन जब पूजा गया महादेव रहस्यमे गोपीवन परीक्षाको गयेहैं इनकी यह दशा यह रहस्य तो महात्मा अनन्य भगवत्के कृपापात्र जानैहैं कैसे जो ताको प्रमाण एक दृष्टांतद्वारा समझो· दृष्टांत (जैसे राजाके निज महलका चारित्र याने रनवासका दीवान मंत्री तथा अन्यकर्मचारी या उनकी कचेहरिनमें कागजातमें नहीं लिखा रहता वहांका हाल वहांकी किंकरी याने लौंडीनसे मिलताहै)तैसे गोलोकनाथका चारित्र कोई एक रसिक महात्माओंसे वहांका रहस्य भेद मिलताहै शिष्य–हे गुरुजी महाराज। आपने कृष्णपरत्व और भगवद्भक्तिका गुण कहा अब कृपा कर श्रीराधिका महारानीजीका स्वरूप कहिये नित्यहै या अवतार रहस्य् यथा रुक्मिणी. सो यह समझायके कहो जामें श्रीजीके चरणमें अचल प्रीति हो गुरु बोले शिष्य ! तू मन एकाग्र कर श्रीराधिकामहारानी श्रीकृष्णजी दोनों एकस्वरूपहैं सोई बात महादेवजी कहेहैं ।

गोपालसहस्रनाममें ।

श्लोक–तस्माज्ज्योतिरभूद्वेधा राधामाधवरूपकम् ।

भापार्थ–इत्यादि वाक्योंसे सिद्धहै कि एक ज्योति मूर्ति दो भई सोई राधामाधवरूप भये तहां महात्माका वाक्यहै "दोहा–राधामाधव एकरस, एकदेह एकश्वास । युगुलरूप तन द्वै प्रगट, लीलाहित सुखरास॥" पुनः संमोहनतंत्रमें कहाहै । "राधैवाराध्यते मया" भगवत् कहैहैं याने मेरे करके आराध्य (पूजित) राधाही है सो ताको वेदने प्रतिपादन किया अज्ञानी निंदक नास्तिकलोग कहैहैं कि वेदमें कहाँ प्रमानहै श्रीराधिकाजीका परत्व यह उपासनाके ग्रंथनमें है यह उनका कथन मिथ्याहै कि केवल उपासनाके ग्रंथोंमें है ।

ऋग्वेद आश्वलायनीयशाखायाम् ।

"राधानायतेगीर्वांहोवरिजस्यपते विभूतिरस्त्वनृतः" पुनः "राधायांमाधवोदेवोमाधवेनवराधिका विभ्राजतेजनस्यत्रिस्त्रशिपेयंवः" पुनः—

यजुर्वेदे माध्यंदिनीयशाखायाम् ।

"ॐश्वात्रासवुत्रान्तुरेराधोगुरुतांअमृतस्यपत्नितादेवींदेवन्त्रीमयज्ञानयातैसौमस्यांविवती"

यजुर्वेदे आपस्तम्बशाखायाम् ।

"स्वयमेवसमासमाराधानकरोतियतःस्वयमेवमाधवोतस्मातलोकेवेदेश्रीराधागीयतेस्वाधीनतयाएकरूपंद्विधाविधायरमयांचकारतस्माद्राधाकृष्णरूपमैक्यंसवर्तः" इत्यादि पुनः

ऋग्वेदे मूलानंदशाखायाम् ।

"सएकराधासस्तूयमानावदःश्रीराधाकायूतरसिकानंदपशुःशकलशृंगारमयंतत्तहाटककांत्यायुतंवर्हापीडवनमालायूथंनटनाटयुतंकर्णपोतकोमकरिसोभायतेकेपूरकंकणाच्छुद्रघंटिकयाकनकयुतंयःपराविराजते" इत्यादि

आदिपुराणे ।

श्लोक—रहोविहारे वृषभानुपुत्री सुकीर्तिगर्भाद्भुतरत्नमस्ति ।
कृष्णस्यतत्प्राणसमानभूमि महीतलेनोकथितुं क्षमोहम् ॥

वाराहपुराणे ।

श्लोक—राधेति रुचिरं नाम ब्रूतेनित्यं किशोरकः ।
अनेकतापात्परित्तोरक्षतादेविराधिके ॥

ब्रह्मांडपुराणे ।

श्लोक—शृणु गुह्यतमं तात नारायणमुखाच्छुतम् ।
सर्वेश्च पूजिता देवी राधा वृन्दावने वने ॥

बृहन्नारदीये ।

श्लोक–वाराणस्यां विशालाक्षी विमला पुरुषोत्तमे ।
रुक्मिणी द्वारकायां तु राधा वृन्दावने वने ॥

श्लोक–यो ब्रह्मरुद्रशुकनारदभीष्ममुख्यै
रालक्षितो न सहसा पुरुषस्य तस्य ॥
सद्योवशीकरणचूर्णमनंतशक्तिं
तं राधिकाचरणरेणुमहंस्मरामि ॥

पुनः–धर्मोद्यर्थचतुष्टयंविनयतलोकितवृथांवार्तयः ।
सैकांतेश्वरभक्तियोगपदवींत्वारोपितामूर्धनि ॥

पुनः–यावृन्दावासिनीत्रिकाचनधनाश्वर्य्यकिशोरीमणिः ।
तत्कैंकर्य्यरसामृतादिपरमाचित्तेन मेरोचते? ॥

नारदपुराणे ।

श्लोक–सर्वलक्ष्मीस्वरूपा च राधिका परदेवता ।

गोपालसहस्रनाम ।

श्लोक–गौरतेजो विना यस्तु श्यामतेजः समर्चयेत् ।
जपेद्वा ध्यायते वापि स भवेत्पातकी शिवे ॥

भावार्थ–हे शिष्य ! देखो हम श्रुति शास्त्र पुराणके प्रमाण मानैं कि जो मूर्ख नास्तिक कहतेहैं कि भागवतमें श्रीराधिकाजीका नाम नहीं तो कहो हम न माने यहमूर्खता वही व्यासजीने भागवत औरब्रह्मवैवर्त कृष्णखण्डमें कहा औरहू पुराणोंमें भागवतमें है "अनयाराधितो नूनम्" इत्यादि उसका तात्पर्य्य यह कि श्रीशुकदेवजीने राजा परीक्षितकी भावना औरथी माताभाव और स्वर्गकी इच्छाथी उनकी रहस्यमें प्रीति न थी इससे शुकदेवजीने गुप्त रक्खाहै । सो हे शिष्य ! यह श्रीलाडिलीलालका परत्व हमने वर्णन किया ताको भावना अधिकारी अनाधिकारी समझ महात्मा उपदेश देतेहैं जिज्ञासुका परम-धर्म भक्तिहै ।

ब्रह्मवैवर्ते ।

श्लोक–यथाहि स्कंधशाखानां तरोर्मूलनिषेचनम् ।
तथैवाराधनं विष्णोःसर्वेषामात्मनश्च हि ॥

भाषार्थ–जैसे वृक्ष लगावे और ताके मूल (जड) में पानी जो डारे तो सब वृक्ष हरा रहताहै तैसे ही जो विष्णुभगवान्को पूजताहै उससे स्वतएव सब देवता प्रसन्न होतेहैं ।

मत्स्यपुराणे ।

श्लोक–कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति यः प्रयाति ब्रुवन्नरः ।
सयाति परमं धाम सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥

भाषार्थ–यह संसारमें जो पुरुष कृष्ण कृष्ण स्मरण करताहै वह अन्तमें शुद्धचैतन्य हो परमधाम गोलोकको जाताहै ।

भागवते ।

श्लोक–कृतादिषु प्रजा राजन् कलाविच्छंति संभवम् ।
कलौ खलु भविष्यंति नारायणपरायणाः ॥

श्लोक–घोरे कलियुगे प्राप्ते सर्वधर्मविवर्जिते ।
वासुदेवपरो भक्तोलभेतार्थं न संशयः ॥

पुनः–भगवानेव भूतानां सर्वत्र कृपया हरिः ।
रक्षणाय च लोकानां भक्तिरूपेण नारद ॥

पुनः–भक्तानने वसेद्ब्रह्मा शिरस्येव वसाम्यहम् ।
कण्ठेच शंकरो देवः पदे गन्धर्वकिन्नराः ॥

नारदगीतायाम् ।

श्लोक–वरमेकं वृणेथापि पूर्णकामाभिवृण्वतः ।
भगवत्युत्तमां भक्तिं तत्परेषु तथा त्वयि ॥

ब्रह्मवैवर्ते ।

श्लोक–सर्वपापप्रशमनंपुण्यमात्यंतिकंदया ।
गोविंदस्मरणं नृणां पदकादास्यपारणम् ॥

पुनः--प्राप्तग्रासेकृतेनादेकृष्णेतडतिश्रष्टके ।
लोपितो भक्तिप्रतापासिकथसिकथनादितः१ ॥

भगवद्वाक्यम् ।

श्लोक–पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति ।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥

पुनः--यस्यास्ति भक्तिर्भगवत्यकिंचनासर्वैर्गुणास्तत्रसमासतेऽसुराः ।
हरावभक्तस्यकुतोमहद्गुणा मनोरथेनशतधावति बहिः१ ॥

भगवद्भक्तके लक्षण ।

श्लोक–वैष्णवानां त्रयं कर्म दया जीवेषु नारद ।
श्रीगोविंदे परा भक्तिस्तदीयानां समर्चनम् ॥

भावार्थ–हे शिष्य ! देवभक्ति लक्षण कहआये अब दो श्लोकों करके भगवद्भक्तनकी रहनि सुनो वैष्णवोंको तीन वस्तु चाहिये सर्वजीवोंपर दया गोविंदकी भक्ति सन्तनकी पूजा ।

श्लोक–मैलअभिमानार्थातिर्विधामहत्वंचरूपकोवनमेव ।
यत्नेनपरित्यज्यपंचतेभक्तकंटकैः१ ॥

भावार्थ–हे शिष्य ! भक्तजन ये पंच कंटक इनते बचे रहेहैं एकतो अन्तरबाहर शुद्धहै महत्त्व नहीं रूपका गर्व नहीं अभिमान नहीं जातिका गर्व विद्याका गर्व इनते संतमहात्मा हमेशादूर रहतेहैं सो हे शिष्य ! यह भक्ति प्रकरण तुमते कहा अब और तुमसे योगविषय कहताहूं सावधानहो सुनना ।

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मज अ० र० प्रियादासशुक्लकृते श्रीशास्त्रसारसिद्धांतमणौ भक्तिप्रकरणं सम्पूर्णम् ॥ १ ॥ श्रीराधामाधवार्पितमस्तु ॥

योगप्रकरण ।

गुरु–हेशिष्य । देखो भक्तिवस्तुमें प्रीतिका स्वरूपहै और ज्ञानवस्तुमें निश्चय विश्वास कराता (दृष्टांत) जैसे किसीने कहा कि मथुराजीमें एक सोनेका मंदिर बनाहै उसमें एकपुरुष और एक स्त्री सुंदर है यह सुनके उसमेंकोनिश्चय होना सोज्ञानका स्वरूप सुनके उसमें प्रीति होना और मिलनेकी उत्कंठा सोई भक्तिका स्वरूप है परंतु सुननेसे और प्रीतिसे प्राप्ति न होगी सोई बात श्रुात "तद्दर्शनाभ्युपायो योगः" अर्थ जिसका चरित्र सुन प्रीति होतो तासे मिलना चाहिये इत्यादि वहांके मार्गपर चले और संसारसम्बंधते प्रीति तोडे सो बात विना योगाभ्यासके दुर्लभहै विना योगके चित्त एकांत नहीं विना एकाग्र मन कार्यकी सिद्धि नहीं ।

पातंजल योगदर्शन ।

सूत्र–योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः ।

भाषार्थ–हे शिष्य ! तू अब सावधान हो सुन योगशब्दका तात्पर्य चित्तको अनुरोध याने एकाग्र करना यावत् चित्त चलायमानहै तबतक कार्य सिद्ध नहीं होता ।

भारतके मोक्षपर्वमें ।

श्लोक–मातुरंकगतो बालो ग्रहीतुं चंद्रमिच्छति ।
यथा योगं तथा योगी संत्यागेन विना बुधाः ॥

भाषार्थ–हे शिष्य! यावत् चित्त विषयमें फसा तावत् धारणा नहीं यथा माताकी गोदमें बैठाहुआ बालक चंद्रमा पकरनेको हाथ फैलावताहै सो मिथ्याहै।

योगवासिष्ठमें ।

श्लोक–संगीहि बाध्यते लोके निःसंगः सुखमश्नुते ।
तस्मात्संगः परित्याज्यः सर्वदा सुखमिच्छता ॥

भाषार्थ–हे शिष्य । देखो जापुरुषको योगमार्गमें प्रवेशहोनेकी इच्छाहो सो प्रथम कुसंग याने विषयोंका संग त्यागै जबतक कुसंग न त्यागैगा तावत्

एकाग्र मन न होगा विना एकाग्रमन योगसिद्धि नहीं सोई बात श्रीगोस्वामि हितहरिवंशजीने अपने भाषाके ग्रंथमें कही है "यह जु एक चित बहु ठौर करि कहु कौने सुखपायो द्वै तुरंगपै चढि कौनसे जातहै धायो" इत्यादि ।

गीतायाम् ६ अध्याये ।

श्लोक–तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेंद्रियाक्रियः ।
उपविश्यासने युंज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥

भाषार्थ--हे अर्जुन ! जिस पुरुषने मन एकाग्र करलिया और इंद्रियोंके दमन द्वारा अंतःजाका शुद्धहै वोही योगी परमगतिको जाता नहीं वह कि जिसका अंतसमय चित्त चलायमान नानासंकल्पविकल्पयुक्त हो ताकी वही दशा जैसे आंधी डाकूरमें परा पथिक मारामारा फिरताहै ।

श्लोक–यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते ।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥

भाषार्थ–जब मन केवल आत्माकाही अनुभव कर बाह्यवृत्ति छोडि सब कामोंसे उपरामवृत्ति करे ऐसा कहतेहै तब योगका अधिकारी होगा ताको प्रमाण ।

श्लोक–यथा दीपो निवातस्थो नेंगते सोपमा स्मृता ।
योगिनो यतचित्तस्य युंजतो योगमात्मनः ॥

भाषार्थ–जैसे वायुकरके बचा हुआ दीपक प्रकाश करताहै तैसे विषयवासनासे बचा चित्त योगमें स्थिररहताहे ।

श्लोक-संकल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेंद्रियग्रामं विनियम्य समंततः ॥

भाषार्थ–जिस सुखके किंचितस्पर्शसे सर्व दुःख नष्ट होतेहैं ता सुखको अंतःकरण शुद्धविषयको त्याग चित्तको अनुरोध करना प्रथम ततपश्चात योगमें प्रवृत्त हो यह योगीको चाहिये ।

श्लोक—शनैःशनैरुपरमेद्बुद्ध्यांधृतिगृहीतया ।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिंतयेत् ।
यतो यतो निश्चलति मनश्चंचलमास्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥

भाषार्थ—पूर्वतर संस्कारसे मन आत्मनिष्ठ हुआ परंतु चंचलता नहीं छोडता तो ताको शनैः शनैः कर एकाग्र करे ।

श्लोक—ज्ञानं वदंतीह विमोक्षकारणं तज्जायते नैव विलोलचेतसि ॥
लौल्यं न योगेन विना प्रशाम्यति तस्मात्तदर्थं हि यतेत साधकः॥

भाषार्थ—हे शिष्य ! जो तुमने कहा कि मोक्षका कारण ब्रह्मज्ञान हमने उपनिषदोंमें सुना सो ठीक परंतु चित्तके एकाग्र विना केवल ज्ञानसे मुक्ति संभवै नहीं सो चित्तकी एकाग्रता सोई योगहै जैसे वस्त्रमें तागेका सूचीसे प्रवेश होता है प्रमाण ।

यजुर्वेदे कठोपनिषदि ।

"दृश्यते त्वग्र्यया बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः" इत्यादि

भाषार्थ—आत्मा सूक्ष्म ताको सूक्ष्मदर्शी महात्माजन सूक्ष्महीं दृष्टिसे देखतेहैं तामें सुरति सोई डोरा चित्त एकाग्र सो सूई आत्मावस्त्रमें प्रवेश करतेहैं यथा रेशमी वस्त्रमें महीन सूईं तागा काम देताहै कुछ सुतरीसूजा जिससे टाट सिया जावाहै सो काम नहीं देता सो ज्ञान और चित्त अनुरोध सो योगहै ।

गीतायाम् ।

श्लोक—सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥

भाषार्थ—जो पुरुष सर्वद्वार याने नेत्र कान नासिकादि इनके विषयोंसे रोक मनको हृदयमें निरुद्ध करके प्राणयोगबलसे मस्तकमें चढाताहै सो योगी. अंतकालमें ॐ स्मरण करता हुआ मेरेको प्राप्त होताहै प्रमाण ।

श्लोक–ॐमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥

भावार्थ–जो पुरुषका प्राण ॐ कहताहुआ शरीरको छोडताहै सो अर्चिरादिमार्गद्वारा मेरेको प्राप्त होताहै सो अर्चिरादिमार्ग अभ्यासकेअंतरहै पुनः

गीतायाम्।

श्लोक–प्रशांतमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम्।
उपैति शांतरजसं ब्रह्मभूतमकल्मपम्॥

भावार्थ–जो पूर्णरजोगुणादिकसे शून्य प्रसन्नअंतःकरण ऐसेही योगीनको योगसमाधिद्वारा परमसुखकी प्राप्तिहोतीहै ताते चित्तनिरोधसे ब्रह्मप्राप्ति होतीहै

श्लोक–युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मपः।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यंतं सुखमश्नुते॥

भावार्थ–जो योगी मनको जय करनेवालाहै उसके कल्मप जे पाप तिनसे छूट सहज ही योगबलसे नित्यानंदको प्राप्तहोताहै सो योग ही सिद्ध यदि कहो कि नित्यानंदमें प्राप्त ते का भया सो कहै हैं।

श्लोक–नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन॥

भावार्थ–ज्ञानमार्ग योगमार्ग दोनोंमें चलते चलते मेरेको प्राप्तहोते योगी ताते हे अर्जुन! तुम भी योगी हो "तपस्विभ्योऽधिको योगी" इत्यादि चांद्रायणादि तप करनेवालेसे योगाभ्यासी उत्तमहै सोई श्रीशंकराचार्यस्वामीजीने भी यही बात पुष्ट की।

योगतारावलीनाम ग्रंथमें।

श्लोक–सिद्धिं तथाविधमनोविलये समर्था श्रीशैलशृंगकुहरेषु
कदोपलभ्ये॥ गात्रं तथा वनलताः परिवेष्टयंति कर्णे
तथा विरचयंति खगाश्च नीडम्॥

भापार्थ–शैल कहे पर्वतकी कंदरानमें जो समाधि जासे मनविलय हो सा हमें कब प्राप्त होगी और जब मन विलय होगा तब देहानुसंधान न रहेगा तब शरीरपर मिट्टी जमा होगी तापे पक्षी बैठैंगे और जो लोग यह शंका कहे कि शंकरस्वामीने योगखंडन किया तो । शंकरदिग्विजयमें मंडनमिश्रके शास्त्रार्थमें आकाशमार्गद्वारा उसका रूपधर कामशास्त्रमें उनकी स्त्रीके प्रश्नका खण्डन किया और वेदांतमें व्यासमुख्य सो भी योगप्रतिपादनमें सनत्कुमार तथा मातंग ऋषि कहते हैं ।

योगचूडामणिमें ।

श्लोक–अग्निष्टोमादिकान्सर्वान्विहाय द्विजसत्तमः॥
योगाभ्यासरतः शांतः परं ब्रह्माधिगच्छति ।

भापार्थ--हे द्विजो ! तुम रातदिन अग्निहोत्रमें लगे रहते हो याते स्वर्गकी प्राप्ति अल्पसुख वालीहै विना परब्रह्मकी प्राप्ति कल्याण नहीं ताते योगाभ्यास करो जासे यही देहसे स्वर्गादिसुख तुच्छ दीखैहै गीतामें भी कहा है " सावैबलवती सर्वतः संयमेनोपशाम्याति " इत्यादि भापार्थ प्रारब्धकर्मकी वासना सबसे प्रबलहै सो भी जो समय योगी समाधिमें तत्पर ध्यानदशामें सब अपनाही शांत होतेहैं और योगीको सब सामर्थ्यहै चाहै अनेक शरीर धारण करे सो सौभरि ऋषिने पचास शरीर धारण कर राजाकी पचासौ कन्या व्याही सोई योगहीको बात भीष्मपितामहजीने पुष्टकिया ।

महाभारते मोक्षपर्वणि ।

श्लोक–आत्मनां च सहस्राणि बहूनिभरतर्षभ ।
योगः कुर्याद्बलं प्राप्य तैश्च सर्वैर्महींचरेत् ॥
प्राप्नुयाद्विषयान्कश्चिदकश्चिद्यस्तनपश्चरेत् ॥
संहरेच्च पुनस्तत्तत्सूर्यस्तेजोगुणानिव ।

भापार्थ–भीष्मपितामहजी कहैहैं कि हे युधिष्ठिर ! योगीको सब सामर्थ्य है योगी एकशरीरसे भोग करताहै और एकसे तप करता है जब इच्छा

होतीहै तब योगशरीरमें सब लयकर देताहै यथा सूर्य्य दिनभर प्रकाश करताहै और शामको सब किरन समेट लेता वैसे योगी ।

विष्णुधर्मनारदपंचरात्रमें ।

श्लोक–स्वदेहारंभकस्यापि कमणः संक्षयो वरः ।
यो योगः पृथिवीपालशृणु तस्यापि लक्षणम् ॥

भापार्थ–हे मुनियो! शरीरकी उत्पत्ति करता दुःखसुखका देनेहारा प्रारब्ध कर्महै ताको नाश नित्यलोकभगवतका प्राप्त सो योगसे प्राप्त ताको अन्यच विद्यारण्यस्वामी अद्वैतप्रतिपादनवेदांती अपने ग्रंथमें कतेहैं ।

पञ्चदशीमें ।

श्लोक–योगो मुख्यस्ततस्तेषां धीदर्पस्तेन नश्यति ॥ इत्यादि ।

भापार्थ–जिन मुमुक्षुनको चित्तचलायमान बुद्धि चंचलायमान तिनको योगाभ्यासद्वाराचित्तनिरोधकर ब्रह्मज्ञानद्वारा आत्मअनुभव करे ।

अथर्ववेदे योगशिखोपनिषदि ।

श्लोक–क्षणमेकमास्थाय क्रतुशतस्यापि फलमवाप्नोति ।

भापार्थ–जो योगी एकक्षणमात्र भी समाधिविषे स्थित परमात्माका चिंतवन करताहै सो सहस्रयज्ञका फल एक क्षणमें उसे प्राप्त होताहै सो ताके तरफ नहीं हेरता ।

अत्रिसंहितामे ।

श्लोक–योगात्संप्राप्यते ज्ञानं योगो धर्मस्य लक्षणम् ।
योगः परं तपो ज्ञेयस्तस्माद्युक्तः समभ्यसेत् ॥ १ ॥
न च तीव्रेण तपसा न स्वाध्यायैर्नचेज्यया ।
गतिं गंतुं द्विजाः शक्ता योगात्संप्राप्नुवंति याम् ॥

भापार्थ–योगकरके ज्ञानकी प्राप्ति होवे योगसे धर्म योगकी बराबर तप नहीं जो सबका सारभूत तप मनकी स्थिरता सो योगबलसे ही होगा तहां प्रमाण ।

याज्ञवल्क्यसंहितामें ।

श्लोक—यज्ञाचारदमाहिंसातपःस्वाध्यायकर्मणाम् ।
अयं तु परमो धर्मो यद्योगेनात्मदर्शनम् ॥

भापार्थ—आचार विचार इन्द्रियनका दमन तप वेदांतज्ञान वेदका पाठ सो आत्माका स्वरूप लक्ष्य और परमात्माकी प्राप्ति विना योग सम्भवै नही तहां प्रमाण ।

दक्षसंहितामें ।

श्लोक—स्वसंवेद्यं हि तद्ब्रह्म कुमारी स्त्री सुखं यथा ।
अयोगी नैव जानाति जात्यंधोहि घटं यथा ॥

भापार्थ—हे पुरुप ! जैसे यौवन अवस्था प्राप्तवाली स्त्री अपने पतिको पहिचानती है तैसे योगी योगद्वारा अनुभवकरता परमात्माको पहिचानताहै और योगमार्गमें नहीं प्रवेश जिसका उसको यथा कुमारी स्त्री पतिसुख नही जानतीहै न तामें प्रीति करती ।

सांख्यदर्शनमें ।

सूत्र—"नोपदेशश्रवणेऽपि कृतकृत्यता परामर्शादृते विरोचनवत्" ।

भापार्थ—विना योगाभ्यासके केवल सुनेते वा कहेते वा मनमें समझलियेते नहीं कार्यसिद्ध होवे जैसे कोई महात्मा कहीं रहैहै उसे सुनके तृप्त न होगा जब चलके उसके दर्शन करेगा तब आनंद होगा ।

श्रुति—"अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति" । इति ।

भापार्थ—तिस आत्माका तदाकार होना हर्पशोकका आविर्भाव होना धीरपुरुष यह सब योगद्वारा मानतेहैं ज्ञान भी मोक्षका कारण परंतु योग विना संभवे नहीं सो यतीका प्रमाण सुनो ।

कृष्णयजुर्वेदे श्वेताश्वतरोपनिषदमें ।

श्लोक—त्रिरुन्नतं स्थाप्य समं शरीरं हृदेन्द्रियाणि मनसासन्निवेश्य ।
ब्रह्मोडुपेन प्रतरेतविद्वान्स्रोतांसि सर्वाणि भयावहानि ॥ (इत्यादि)

भापार्थ--हे विद्वान् ! शिर ग्रीवा और कटि इन तीनोंका अवरोध (रोकै) शरीर हालै नहीं नेत्र कान इंद्रियोंके भयसमुद्रसे मननिग्रहनावपर चढ़ पार हो ।

स्कंदपुराणमे ।

श्लोक–आत्मज्ञानेन मुक्तिः स्यात्तच्च योगादृते नहि ।
स च योगश्चिरंकालमभ्यासादेव सिध्यति ॥

भापार्थ–यद्यपि आत्मज्ञानकरके मोक्ष है सो ज्ञान स्थिरता चित्तकी सो चित्तस्थिर योगाभ्यासते ।

कूर्मपुराणे ।

श्लोक--योगाग्निर्दहति क्षिप्रमशेषं पापपंजरम् ।
प्रसन्नं जायते ज्ञानं ज्ञानान्निर्वाणमृच्छति ॥

भापार्थ--योगरूपी अग्नि सर्व पाप भस्मकरैहै फिर अंतःकरण शुद्धभयेते आत्मज्ञान होताहै जासे परागति मुक्ति मिलतीहै सो कहे हैं ।

योगवाशिष्ठमे ।

श्लोक–दुःसहा राम संसारविषवेगा विषूचिका ।
योगगारुडमंत्रेण पावनेनोपशाम्यति ॥

भापार्थ--हे रामजी ! ये सांसारिक दुःख सो विषसर्प काटेका सा विषवत् क्लेशकारक ताको योगाभ्यास गारुडीके मंत्रसम जन्ममरणविषनाशक तहां कहे हैं ।

गरुडपुराणे ।

श्लोक--भवतापोपतप्तानां योगो हि परमौषधम् । इत्यादि ।

भापार्थ–संसारमें कामक्रोधादि अविद्यारूपी रोगको योगाभ्यास औषधिसे नाशहोयहै सो अब हे शिष्य ! ज्ञान और योगके विषयमें महादेव जीसे पार्वतीजीने प्रश्न कियाहै सो सुनो ।

योगबीजनामकग्रंथे ।

श्लोक–ज्ञानादेव हि मोक्षं च वदंति ज्ञानिनः सदा ।
न कथं सिद्धियोगेन योगः किं मोक्षदो भवेत् ॥

भापार्थ–हे ईश्वर! आप योगसे कहते है हमने ज्ञानद्वारा मोक्ष सुनी सोई बात श्रुतिमेंहे "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" अर्थ–तो आप कैसे कहतेहैं तहां महादेवजी कहैहै ।

श्लोक–ज्ञानेनैव हि मोक्षं च तेषां वाक्यं तु नान्यथा ।
सर्वे वदंति खड्गेन जयो भवति तर्हि किम् ॥
विना युद्धेन वीर्येण कथं जयमवाप्नुयात् ।
तथा योगेन रहितं ज्ञानं मोक्षाय नो भवेत् ॥

भापार्थ–हे गिरजे ! केवल ज्ञानसे मोक्ष ऐसा कहनेवाले मिथ्या कहते है जैसे खड्गसे शत्रुविजय युद्धमें सो ठीक केवल खड्गसे नहीं स्वर्गका धारण करनेवाला मनुष्य शत्रुपर चलाया तव जय तैसे कामादिक शत्रूनपै योगद्वारा ज्ञानखड्ग चलाया जाताहै । पुनः सोई बात महादेवजी कहैहैं सो सुनो ।

श्लोक–ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वा धर्मज्ञोपि जितेंद्रियः ।
विना योगेन देवोपि न मोक्षं लभते प्रिये ॥

भापार्थ–हे गिरजे! चाहे ज्ञानीहो चाहे विरक्तहो चाहे सर्वधर्मका जाननेवालाहो चाहे जितेंद्रियहो चाहे देवताहो परंतु विनायोग मोक्ष नहीं तहां पार्वतीजी कहैहैं कि हे नाथ ! जनकादिक नृपोंने कौन योगसाधन किया जो कैवल्यमोक्षको प्राप्त भये ऐसा नारदजीने कहाथा यह सुन महादेवजी पुनः कहैहैं प्रिये ! तुम्हारा कहना सत्यहै कि जनक ज्ञानद्वारा कैवल्यमोक्षको प्राप्त भये परंतु पूर्वमें ये योगी थे ताका प्रमाण ।

ब्रह्मांडपुराणे ।

श्लोक-जैगीषव्यो यथा विप्रो यथा चैवासितादयः ।
क्षत्रिया जनकाद्यास्तु तुलाधारादयो विशः ॥
धर्मव्याधास्तथा सप्त शूद्राःपैलवकादयः ।
मैत्रेयी सुलभा गार्गी शांडिली च तपस्विनी ॥
एते चान्ये च बहवो नीचयोनिगता अपि ।
ज्ञाननिष्ठां परां प्राप्ताः पूर्वाभ्यासात्तु योगतः ॥

भावार्थ-जैगीषव्य असितादि ब्राह्मण तथा जनकादिक क्षत्रिय तुलाधादि वैश्य तथा धर्मव्याध पैलवकादि शूद्र तथा मैत्रेयी सुलभा गार्गी शांडिली आदिक स्त्रियां सो ये सब पूर्वके योगीहैं जो कहो जन्म काहे लियो तो योग भ्रष्टभयेते तौभी श्रेष्ठ ही पुरुष ज्ञाननिष्ठ होतेहैं सो बात गीतामें भी कहीहै "शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोभिजायते" इत्यादि सो पुनः श्रीगीतामें कहाहै "अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना" अर्थ-जाका जाकार्यमें अभ्यास होताहै वो जन्मले उसीमें तत्पर होताहै जैसे सुनार आभूषण बनाताहै तो रात व्यतीतकर सोयके उठा तो फिर आभूषण बनाने लगताहै तैसे यो योगी जन्म भी लेवे तौ पूर्वयोगबलसे फिर उसीमें तत्पर होताहै और ज्ञान दोनोंसे सिद्ध होताहैं ।

यजुर्वेदे बृहदारण्योपनिषदि ।

श्लोक-तदेव सक्तः सह कर्मणैति लिंगं मनो यत्र निसक्तमस्य । इति

भावार्थ-अंतकालमें जिस वस्तुमें मन लगाहै उसी वासनासे जन्मले उसीका भोक्ता होवैहै सोई बात श्रीकृष्णजीने अर्जुनसे कही ताको सुनो ।

गीतायाम् ।

श्लोक-यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यंते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौंतेय सदा तद्भावभावितः ॥

भापार्थ—हे अर्जुन ! देहके अन्तकालविषे जिस पदार्थका स्मरण करता हुआ शरीर त्यागताहै वह जन्मले उसीको भोगता है सोई बात पुनः महादेवजी कहैहैं ।

योगबीजग्रन्थमें ।

श्लोक—पिपीलिका यदा लग्ना देहे ध्यानाद्विमुच्यते ।
असौ तु वृश्चिकैर्दष्टो देहांते वा कथं स्मरेत् ॥

भापार्थ—हे गिरजे ! चींटीके काटे ध्यानउचाटन होता फिर सो विच्छू मारे किसे होश रहता ताते जो योगाभ्यासी उन्हें वह बाधा नहीं होती वह इच्छासे शरीर छोडतेहैं और दिव्य पुरुपको प्राप्त होतेहै ।

महाभारते मोक्षपर्वणि ।

श्लोक—यथा चानिमिपाः स्थूला जालं भित्त्वा पुनर्जलम् ।
प्रविशंति तथायोगास्तत्पदं वीतकल्मपाः ॥
यथैव वागुरां छित्त्वा बलवंतो यथा मृगाः ।
प्राप्नुयुर्विमलं मार्गं विमुक्ताः सर्वबन्धनैः ॥
अबलाश्च मृगा राजन्वागुरासास्तथा परे ।
विनश्यंति न संदेहस्तद्वद्योगबलादृते ॥

भापार्थ—हे राजन् । यथा प्रबल मगर जालभेदन कर अपने स्थानको पहुंचताहै वा बलयुक्त मृग जालतोड निकस जाताहै तैसेही योगाभ्यासी पुरुप योगबलद्वारा प्रारब्धकर्मरूपी जाल तोड नित्यधाम सच्चिदानंदघनस्वरूपको प्राप्त होताहै ।

यजुर्वेदे कठोपनिषदि ।

श्लोक—शतं चैका च हृदयस्य नाड्यस्तासां मूर्धानमभिनिःसृतैकातयोर्ध्वमायन्नमृतत्वमेति विष्वङ् जन्या उत्क्रमणे भवंति इत्यादि ।

भापार्थ-हे शिष्य ! देखो एकसौ एक हृदयकी नाडी तिनमें सुपुम्णा प्रधान मस्तकमेंहै सो ताके द्वारा योगी ब्रह्मरंध्रभेदन कर परब्रह्मको प्राप्त होतेहैं जिन पुरुषनके मुखद्वारा प्राण निकसतेहैं वे मनुष्य इत्यादि योनियोंको प्राप्त होतेहैं ।

गीतायाम् ।

श्लोक-प्रयाणकाले मनसा चलेन भक्त्यां युक्तो योगवलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्॥

भापार्थ-हे अर्जुन ! जो पुरुष मरणकालविषे मेरीभक्तिसहित योगबलद्वारा मेरेमें सुरति लगाय शरीर छोडताहै सो मेरे धाममें मेरे नित्यानंदस्वरूपको प्राप्त होताहै । इति योगनिरूपणम् ।

हे गुरुजी महाराज! योग के प्रकारकाहै सो कृपाकर कहो गुरु-हे शिष्य ! मैं कहताहूं जो महादेवजीने कहाहै ।

योगबीजमें ।

श्लोक-हठो लयो मंत्रिकराजसंज्ञितौ चतुर्विधं योगमबालिशा
विदुः। ततोपि राजोपगताः परंगतास्तदर्थमेवेह यतेत कोविदः ॥

भापार्थ-हे गिरजे ! योग चारप्रकारका है सो सुनो हठयोग लययोग मंत्रयोग राजयोग तिनमें तिनके मैं पृथक्पृथक् लक्षण कहताहूँ प्रथम हठयोगनामक योग है ।

गोरखशतके ।

श्लोक-हकारः कीर्तितः सूर्य्यष्ठकारश्चंद्र उच्यते ।
सूर्य्याचन्द्रमसोर्योगाद्धठयोगो निगद्यते ॥

भापार्थ-हकार सूर्यका नाम ठकार चन्द्रका नाम सो दोनों वायुका भाव एक होना ताका नाम हठयोग है । हृदयमें सूर्य्यका निवास नासिकाके द्वादशअंगुल बाहर चन्द्रमाका निवास सो जब हृदय स्पर्श कर प्राणवायु

बाहेर चन्द्रमाका स्पर्श करे फिर भीतर जावा सो तासे ताको नाम हठयोग याने सूर्य्य चन्द्र दोनोंको मिलना सोई योग और योगशब्द भी मिलनेको कहैहै ।

योगवाशिष्ठेनिर्वाणप्रकरणे ।

श्लोक—द्वादशांगुलपर्यंते नासाग्रे संस्थितं विधुम् ।
हृदये भास्करं देवं यः पश्यति स पश्यति ॥

भापार्थ--नासिकाके बारह अंगुल बाहर चन्द्रमाका स्थान अन्तःकरणमें सूर्य्यका वास प्राणद्वारा दोनोंका मेल सो हठयोग यह बात मुद्रासे सिद्ध होवैहै मुद्रा बहुत हठयोगप्रदीपिका ग्रन्थमें हैं यहां ग्रन्थविस्तारभयसे नहीं लिखा प्रमाण ।

श्लोक—अंतर्लक्ष्यं बहिर्दृष्टिर्निमेषोन्मेषवर्जितः ।
सा भवेच्छांभवी मुद्रा सर्वतन्त्रेषु गोपिता ॥

भापार्थ—चित्तसे अन्तःकरण लक्ष्य अर्धनेत्रसे नासिकाका अग्रभाग देखना एकटकी ताको शांभवी मुद्रा कहतेहैं सो यह गुप्त बात गुरुद्वारा प्राप्तहै खेचरीआदि बहुत मुद्राएँ हैं । प्रथम षट्कर्मद्वारा अन्तःकरण साफ करले तब प्राणायामादि योगाभ्यास करे यह हठयोग सम्बन्धी स्वरकर्महै सो सुनो ।

हठयोगप्रदीपिकामें ।

श्लोक—धौतिर्वस्तिस्तथानेतिस्त्रोटकं नौलिकं तथा ।
कपालभातिश्चैतानि षट्कर्माणि प्रचक्षते ॥

भापार्थ—हे शिष्य ! अब षट्कर्म याने छः प्रकारके कर्म सुनो धौती, वस्ती, नेति, त्रोटक, नौली, कपालभाति सो या छः प्रकारके कर्महैं सो इनते शरीर नीरोग नाडी शुद्ध सो नाडी शुद्ध विना प्राणायाम संभवे नहीं ।

श्लोक—कर्मषट्कमिदं गोप्यं घटशोधनकारकम् ।
विचित्रगुणसंधानैः पूज्यते योगिपुंगवैः ॥

भापार्थ--ये छः प्रकारके कर्म बहुत गुप्त रखना विना अधिकारी बताना नहीं ये एकांतमे साधन किये जातेहैं इन विचित्रगुणोंको अनुसंधान योगीजन करतेहैं प्रशंसित और पूजित होवे हैं इनकरके योगाभ्यासका प्राणायाम प्रथम साधनहै ।

धौतीकर्म ।

श्लोक--चतुरंगुलविस्तारं हस्तपंचदशायतम् ।
गुरूपदिष्टमार्गेण सिक्तं वस्त्रं शनैर्ग्रसेत् ।

भापार्थ--धौतीकर्म प्रथमहै धौतीकर्म उसे कहतेहैं चार अंगुल चौडा पंद्रह हाथ लंबा उसे उष्णजलसे शुद्ध कर गुरुके बतायेके अनुसार धीरेधीरे अभ्याससे उसे निगल जाय परंतु चिकना व पतला वस्त्र होवे ।

श्लोक--पुनः प्रत्याहरेच्चैतदुदितं धौतिकर्म तत् ।
कासश्वासप्लीहकुष्टं कफरोगान्विहंति च ॥

भापार्थ--उस वस्त्रका छोर डाढोंसे दबाकर जो वस्त्र उदरके भीतरहै उसे गुरुयुक्तिसे उदर हलाय आंख बंदकर शनैः शनैः वस्त्र उदरसे काढ उष्णजलसे कुल्ले करे परंतु यह क्रिया जलाशयके तीर और एकांतमें साधै इससे कासादिकोंका नाशहोय है ।

बस्तिकर्म ।

श्लोक--बस्तिकर्मप्रभावेण प्रयांत्येव न संशयः ।
नाभिदघ्नजले पायुन्यस्तनालोत्कटासनः ॥

भापार्थ--नाभिमात्र जलमें खडाहो नदी या तालाब हो सो एक बांसकी नली चिकनी अंगुलभरका छेद हो जिसमें सो दो अंगुल गुदामें प्रवेशकर और चार अंगुल बाहेर सो प्रथम उस नलीद्वारा जल आकर्पण करे फिर शनैः शनैः छोडै इससे कृमि जलोदरादि उदररोग नाशहोते है और मलशुद्ध अपानवायु शुद्ध रहतीहै ।

नेतिकर्म ।

श्लोक–सूत्रं वितस्ति सुस्निग्धं नासानाले प्रवेशयेत् ।
मुखान्निर्गमयेच्चैषा नेतिः सिद्धैर्निगद्यते ॥

भाषार्थ–चिकना सूतका पक्का धागा मोटा कुछकर नासिकाद्वारा चढाय मुखसे निकासे इससे श्वास शुद्धरहै इससे प्राणायाममें कोई उपद्रव नहीं होता।

त्रौटककर्म ।

श्लोक–निरीक्षेन्निश्चलदृशा सूक्ष्मलक्ष्यं समाहितः ।
अश्रुसंपातपर्यंतमाचार्यैस्त्रोटकं स्मृतम् ।

भाषार्थ--अब त्रुटिकर्म कहतेहैं चित्त एकाग्र कर लघुपदार्थ यथा शालग्रामकी छोटी मूर्ति सामने धर एक टकदृष्टिसे उसे देखे जबतक नेत्रमें जल न भर आवे इससे दृष्टि शुद्ध औरहू गुप्त वस्तु लक्ष्य आवीहै ।

नौलिकर्म ।

श्लोक–अमंदावर्तवेगेन तुदन्सव्यापसव्यतः ।
नतांसो भ्रमयेदेषा नौली सिद्धैः प्रचक्ष्यते ॥

भाषार्थ–अब नौली वर्णन करते हैं पखौरे नवायके दहिने बायें तरफसे पुरुष जस्ता की सलाईको शिश्न इंद्रियमें चलाय साफ करताहै उससे मूत्रकच्छ्रका रोग नही और वज्रोली मुद्राको शुभ एककर्म और उसका सार ऊपर लिखा बस इतनेमें समझलेव ये सब हठयोगमें हैं ।

मंत्रयोगो योगबीजग्रंथे ।

श्लोक–हकारेण बहिर्याति सकारेण पुनर्विशेत ।
हंसहंसेति मंत्रोयं जीवो जपति सर्वदा ॥
गुरुवाक्यात्सुषुम्णायां विपरीतो भवेज्जपः ।
सोहंसोहमिति प्रातो मंत्रियोगः स उच्यते ॥

भाषार्थ–हे पार्वति।हकार यह बाहर गमन करैहै सकार भीतर प्रवेश करैहै हंस मंत्र जीव जपताहै इसका उलटानाम सो गुरुद्वारा जानना सुषुम्णाद्वारा उलटता है सो अब मंत्र सोहं है ताकी उत्पत्तिकी विधि सुनो इस अंगमें

छचक्रहैं तिन्हेपिचंडी और छे चक्र हैं वे ब्रह्मांडी सो गुप्तभेदहै उनका लक्षगुरुद्वारा है पहिले पिचंडीचक्र उनमें प्रवेशकरे सो चक्र देहमें कौन स्थानमें का नाम कौन देवता कितना जप सो सुनो ।

गरुडपुराणे ।

श्लोक–मूलाधारः स्वाधिष्ठानं मणिपूरकमेव च ।
अनाहतं विशुद्धाख्यमाज्ञा षट्चक्रमुच्यते ॥

भावार्थ–मूलाधार स्वाधिष्ठान मणिपूरकअनाहत विशुद्ध आज्ञाचक्र छ चक्र हैं अब स्थानसुनो ।

चक्रस्थान ।

श्लोक- मूलाधारे लिंगदेशे नाभ्यां हृदि च कंठके ।
भ्रुवोर्मध्ये ब्रह्मरन्ध्रे क्रमाच्चक्राणि चिंतयेत् ॥

भावार्थ–गुदामें लिंगस्थानमें नाभीमें हृदयमें कंठमें त्रिपुटी सिकाके मूल नभमंडल कपालमें ।

चक्रनके देवता ।

श्लोक–गणेशं च विधिं विष्णुं शिवं जीवं गुरुं ..
व्यापकं च परं ब्रह्म क्रमाच्चक्रेषु चिंतयेत

भावार्थ–गणेश ब्रह्मा विष्णु शिव जीवात्मा
अब विस्तारसे सुनो ।

मूल चक्र १ ।

श्लोक–मूलपद्मं यदा ध्यायेद्योगी
तदा तत्क्षणमात्रेण पापौघं

भावार्थ–मूलाधार चक्र गुदामें होताहै चार दलहैं समलाल सांसारिकसिद्धिसहित गणेशका वास ६०००

स्वाधिष्ठानचक्र २ ।

श्लोक–द्वितीयं तु सरोजं च लिंगमूले
बादिलान्तञ्च षड्वर्णं परिभास्वत्षड्दल

स्वाधिष्ठानमिदं तत्तु पंकजं शोणरूपकम् ।
बाणाख्या चात्र सिद्धिस्तु देवी यत्रास्ति राकिणी ॥

भाषार्थ–स्वाधिष्ठान नाम चक्र लिंगस्थानमें छ दलका बभमयरल ब्रह्म देवता सृष्टि उत्पत्ति ६००० अजपा जपहै ।

मणिपूरक चक्र ३ ।

श्लोक–तृतीयं पंकजं नाभौ मणिपूरकसंज्ञकम् ।
दशारं डादिफान्तार्णं शोभितं हेमवर्णकम् ॥
विष्ण्वाख्यो यत्र सिद्धोस्ति सर्वमंगलदायकः ।
देवी तत्र स्थिता लक्ष्मीर्देवः मरमधार्मिकः ॥

भाषार्थ–हे शिष्य! यह मणिपूरक नाम चक्र नाभिस्थान (तोंदी) में दसदलका कमल डढणतथदधनपफ ये अक्षर सो दलहैं नीलवर्ण रंग तामें चतुर्भुज विष्णु शेषशय्या पर लक्ष्मीसहित विराजते ६००० अजपाजप इनको अर्पणकरे ।

अनाहत चक्र ४ ।

श्लोक–हृदयेऽनाहतं नाम चतुर्थं पंकजं भवेत् ।
स्थानं च कादिठान्तार्णं द्वादशारसमन्वितम् ॥

भाषार्थ–यह अनाहतचक्र हृदयमें इसमें बारह दलहैं क ख ग घ ङ च छ ज झ ञ ट ठ सपेद रंग दक्षिण शिवमूर्तिका पार्वतीजीसहित बास है ६००० जप अजपा इनके अर्पण इसके भेदनसे लोकपरलोकदृष्टि ।

विशुद्ध चक्र ५ ।

श्लोक–कंठस्थानस्थितं पद्मं विशुद्धं नामपंचमम् ।
हेमाभं षोडशारं च षोडशस्वरसंयुतम् ॥

भाषार्थ–यह विशुद्धनाम चक्र कंठस्थानमें पांचवाँ है स्वर्णरंग षोडश दलका कमल अआ इई उऊ ऋॠ ऌॡ एऐ ओऔ अंअः जीवात्मा देवताका वास साकिनदेवी १००० अजपा इसके भेदनसे योगी स्थिति सर्वविद्यापारंगत आयुज्ञान समाधि सौवर्षतक साध सकताहै ।

आज्ञाचक्र ६ ।

श्लोक–आज्ञापद्मं भ्रुवोर्मध्ये हंसोपेतं द्विपत्रकम् ।
शुक्लाभं तन्महाकालः सिद्धो देव्यत्र हाकिनी ।

भावार्थ–हे शिष्य । यह आज्ञाचक्र त्रिकुटी याने दोनोंभौंह नासिकाके मूलमें होताहै तामें दो दल कमल हंसज्योतिस्वरूपका वास रक्तवर्ण १००० जप इसके भेदनते योगीको सब सिद्धियां गरेरता और मुक्तिका दरवाजा ये छ चक्र पिंडके इनके आगे छः ब्रह्मांडी सो गुरुद्वारा परंतु तिनमें प्रवेशका स्थान तालूके ऊपरहै उसे ब्रह्मरंध्र कहतेहैं उसे भेदनहीके अर्थ अनेक उपाय योगाभ्यास उसीपर समाप्त गुप्त रहस्य यहां लिखनेका कुछ काम नहीं यह केवल गुरुसे प्राप्त होवैहै प्रमाण ।

श्लोक–अत ऊर्द्ध्वं तालुमूले सहस्रारं सरोरुहम् ॥
अस्ति यत्र सुषुम्णाया मूलं सविवरं स्थितम् ।

भावार्थ–आज्ञापद्मके परे तालुके मूलमें नभमंडलमें सहस्रदल कमल शोभायमान उसी जगह ब्रह्मरंध्र(छेद)है तहां सुषुम्णा नाडी स्थितहै यह चक्र पहिला ब्रह्मांडी है सो ब्रह्मांडी चक्रके प्रतिबिंब पिंडीचक्रहै सो सद्गुरुसे भेद खुलताहै पढे सुने नहीं यह सिद्धि अभ्यासमे अब लययोग शब्दद्वारा सुनो जब ब्रह्मरंध्र भेदन कर योगी प्राणद्वारा सुषुम्णामें प्रवेश करताहै तब नाद याने शब्द सुनाई देताहै सो दसप्रकारका प्रमाण ।

अथर्वणवेदकी हंसउपनिषदम् ।

मूल–नादो दशविधो जायते चिंचिणीप्रथमोद्वितीयोघंटानादस्तृतीयःशंखनादश्चतुर्थस्तंत्रीनादःपंचमस्तालनादष्षष्ठोमंजरीनादःसप्तमोभेरीनादअष्टमोमृदंगनादोनवमोवेणुनादोदशमोमेघवच्छब्दः
ब्रह्मके प्राप्तिमें नाद है सो श्रवण कर पुनः प्रमाण ।

सामवेदे नादविन्दूपनिषदि ।

मूल–यत्र कुत्रापि वा नादे लगति प्रथमं मनः ।
तत्र तत्र स्थिरीभूयात्तेन सार्धं विलीयते ।

भापार्थ–प्रथम साधनमें यह देखै कि कोई नादमें मन लगाताहै या लगावे यथा सितार जो इनमें लगा तौ ध्वन्यात्मकमें मन लगा शब्दमें मन लय होकर स्थित होगा सो शब्द दोप्रकारका एक वर्णात्मक जो स्वतएव नित्य एकध्वन्यात्मक जो तालद्वारा हो ।

श्लोक–सिद्धासने स्थितो योगी मुद्रां संधाय वैष्णवीम् ।
शृणुयाद्दक्षिणे कर्णे नादमन्तर्गतं सदा ॥
अभ्यस्यमानो नादोऽयं ब्रह्मणो वृणुते ध्वनिम् ।
पक्षाद्विपक्षमखिलं जित्वा तुर्यपदं व्रजेत् ॥
श्रूयते प्रथमाभ्यासे नादो नानाविधो महान् ।
वर्धमाने तथाभ्यासे श्रूयते सूक्ष्मसूक्ष्मता ॥
आदौ जलजतन्व्योश्च भेरीनिर्झरसंभवः ।
मध्ये मर्दलशब्दाभो वण्टाकाहलजस्तथा ॥
अन्ते च किंकिणीवंशीवीणाभ्रमरनिस्वनः ।
इति नानाविधे नादे श्रूयते सूक्ष्मसूक्ष्मता ॥

भापार्थ–प्रथम जिज्ञासुपुरुपको चाहिये एकांतमें सिंहासन याने पंथी मार और नाक नेत्र कान बंद करे दोनों हाथोंके अंगूठासे कान दोनों बन्द करे दोनों बीचकी अंगुरीसे नेत्र (आंख) बंद करे फिर सुरत अन्दर में प्रवेश करे तब नानाप्रकारके शब्द सुनवेमें आवेंगे दाहिने कानसे विचित्रनाद सुनवेमें आवेंगे अभ्यास एक पक्ष वा द्वे पक्ष करे तो नाद श्रवणमें आवेगा जैसा अभ्यास वढता जायगा तैसे ही नाद सूक्ष्मते सूक्ष्म सुनवेमें आवैहै ।

भारते मोक्षपर्वणि ।

श्लोक–शब्दस्य हि ब्रह्मण एप पंथा यन्नामभिध्यायति धीरपार्थः ।
सिद्धेन्यथार्थे न यतेत भूयः परिश्रमं तत्र समीक्षमाणः ॥

भावार्थ—जो पुरुष ब्रह्मकी प्राप्तिके नानामार्ग खोजता भ्रमता वृथा परिश्रम करताहै वह केवल शब्दका अभ्यास कर संसार तरे काहेते कि ब्रह्मशब्द ॐकारको पकारिके कमलनालते निकसि सृष्टि रची उसीशब्दसे वेद-चार भये तहां.(दृष्टांत जैसे राहके चलने वाला जंगलमें रातहोगई तो वो ग्रामको खोजता तहां स्वान (कुत्ता) या आदमीकी आवाजपाकर वही ओर चलकर पहुंचता) तैसेही शब्दसे ब्रह्मकी प्राप्तिभई सो शब्द बहुत प्रकारके है ऊपर कहआयेहैं कौन दशा होती जब शब्द सुनताहै सो कहैहैं ।

सामवेदे नादोपनिषदि ।

श्लोक—प्रथमे चिंचिणी गात्रे द्वितीये गात्रभञ्जनम् ।
तृतीये खेदनं याति चतुर्थे कम्पते शिरः ॥
पञ्चमे स्रवते तालु षष्ठेऽमृतानिषेवणम् ।
सप्तमे गूढविज्ञानम्परा वाचा तथाष्टमे ॥
अदृश्यता च नवमे दिव्यंचक्षुस्तथामलम् ॥
दशमे पश्यति ब्रह्म भवेद्ब्रह्मात्मसन्निधौ ॥

भावार्थ—प्रथमनादके श्रवणमें अंगमें चिंचिणीकी नाईं प्रतीत होवैहै।दूसरेमें शरीरके अंग टूटने लगैहै । तीसरेमें चित्तखिन्नता । चतुर्थमें शिरकंपता । पंचममें तालुस्रवता। षष्ठमें अमृतपान । सप्तममें गूढपदार्थोंका ज्ञान । अष्टममें परावाचाकी प्राप्ति । नवममें दिव्यदृष्टि अन्तर्धान याने गुप्तहोजानेकी शक्ति । दशममे नित्यानंदस्वरूप परब्रह्मके दर्शन तहां मन नही पहुंचता सो मन लय हुआ तब देहशिथिल फिर जीवन्मुक्त योगी स्वेच्छासंचारी होताहै । इति मंत्रयोग ।

राजयोगःपातञ्जले ।

सूत्र—'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः' ।

भावार्थ—योग नाम चित्तकी वृत्तिनिरोध सो पांचप्रकारका चित्तवृत्ति-निरोधहै तिसे राजयोग कहतेहै ।

सूत्र–"प्रमाणविपर्य्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः" ॥

भापार्थ–प्रमाण विपर्यय विकल्प निद्रा स्मृति ये पांच प्रकारकी चित्तकी वृत्तिहै तिनमें इनके स्वरूप सुनो प्रमाण दोप्रकारके प्रत्यक्षप्रमाण अनुमान प्रमाण सो प्रत्यक्ष प्रमाण जो शास्त्रमें दृष्ट कहे प्रत्यक्ष वस्तु दीखना । अनुमान दो प्रकारका संज्ञासे भास याने जंगलमें अग्नि होगी निश्चय यहां धुवां है अवलोकसे विपर्य्यय मिथ्या ज्ञानमें सत्य स्वरूप देखना यथा शुक्तिमे रजत(चांदी) जानपरती सो मिथ्या यह विपर्य्यय लक्षण विकल्पलक्षण तहां प्रमाण ।

श्रुति–"शब्दज्ञानानुपाती वस्तुशून्यो विकल्पः" ।

अर्थ–शून्यवस्तुमें शब्दजन्य ज्ञानका अनुपाती तिसका नाम विकल्प अब निद्राको कहेहै ।

सूत्र–"अभावप्रत्ययालंबनावृत्तिर्निद्रा" ।

अर्थ–बाह्यवृत्तिका सर्वविषयसे उपराम हो तमोगुणाश्रयचित्तवृत्ति अवरोध सो निद्रा । इति ।

सूत्र–अनुभूतिविपर्यासप्रमोपः स्मृतिः ।

अर्थ–प्रत्यक्षादि प्रमाण ताको स्मृति कहतेहै इति । सो ऊपरकी कही हुई पांच वृत्तियोंका अनुरोध याने इनके वश चित्त न हो सो राजयोग पतंजलिने अपने योगसूत्रमें कहा हठयोग मन्त्रयोग लययोग ये राजयोगके अन्तरहैं सोई बात हठयोगप्रदीपिकाकार स्वात्मारामयोगीने अपने ग्रन्थमें कहीहै ।

हठयोगप्रदीपग्रंथे ।

श्लोक–पीठानिकुंभकाश्चित्रादिव्यानि करणानि च ।
सर्वाण्यपि हठाभ्यासे राजयोगफलावधि ॥

भापार्थ–यह बात हठयोगमें पद्मादि आसनचक्र सूर्य्यभेदन विचित्र कुंभक खेचरी आदि मुद्रासे ये सब राजयोग अन्तरहै वहां जैसे क्रिया योग प्रमाण ।

श्रुति–तपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोगः ॥

भाषार्थ–आसनादिक तपकरना वेदाध्ययन ईश्वराराधनकरना यह क्रिया योग सो भी हठयोगमें है सो सब राजयोगमेंहैं सो महादेवजी अमानसखंडमें कहतेहैं ।

श्लोक–राजत्वात् सर्वयोगानां राजयोग इति स्मृतः । इति

पुनः–राजंतं दीप्यमानं तं परमात्मानमव्ययम् ।
प्रापयेद्देहिनो यस्तु राजयोगः स कीर्तितः ॥

भाषार्थ–हठयोग मंत्रयोग लययोग इन सबका राजा यासे राजयोग राजते स्वयंप्रकाशद्वारा परमात्माकी प्राप्ति तासे राजयोग इति सो राजयोगका ज्ञान सुनो ।

श्लोक–जगुस्तदङ्गाष्टकमुत्तमाशया यमादिसंज्ञं यमिवर्यसेवितम् ।
समासतस्तस्य फलं च लक्षणं वदामि वृद्धर्षिमतानुरोधतः ॥

भाषार्थ–तिस राजयोगमें ऋषिनके किये अनुष्ठान, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि सोई बात पातंजलयोगमें है ।

सूत्र–"यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणा
ध्यानसमाधयोऽष्टावंगानि" । इति

भाषार्थ–यहसूत्रका अर्थ ऊपर कह आये योगके अंगआठ सो जानना सो अष्टांगयोगमें प्रथम यमको कहते हैं सो यम दशप्रकारकाहे ।

श्लोक–अहिंसनं सत्यमचौर्यमार्जवं क्षमा धृतिः शौचमुपस्थनिग्रहः॥
मिताशनं दीनजनानुकंपनं यमा दशैते मुनिवर्यसंमताः ॥

भाषार्थ–अहिंसा सत्य अस्तेय आर्जव क्षमा धैर्य शौच ब्रह्मचर्य्य मिताहार दया ये दशप्रकारके यमहैं प्रथम अहिंसाका स्वरूप किसी जीवको न सताना प्रमाण–

याज्ञवल्क्ये ।

श्लोक–कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा ।
अक्लेशजननं प्रोक्तमहिंसेयं च योगिभिः॥

भापार्थ--पूर्व ऊपर कह आये जिन्हें तिनमें यह अहिंसाका नाम है ।

सत्यलक्षणंमनुस्मृतिचतुर्थाध्याये ।

श्लोक–सत्यं ब्रूयात्प्रियं ब्रूयान्न ब्रूयात्सत्यमप्रियम् ।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादिति धर्मः सनातनः ॥

पुनः–हंसोपाख्याने हंसनारायणवाक्यं ब्रह्माणं प्रति ।

श्लोक–सत्यं स्वर्गस्य सोपानं पारावारस्य नौरिव ।
न पावनतमं किंचित्सत्यस्याध्यागमात्क्वचित् ॥

पुनः अथर्ववेदकी मुंडकोपनिषदमें ।

मूल–सत्यमेव जायते नानृतं सत्येन पंथा विततो देवयानः। इति ।

पुनः।श्रुतिः"सत्येनलभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा"(पुनः)हरिश्चंद्रवाक्यम्।

श्लोक–अश्वमेधसहस्राणि सत्यं च तुलया धृतम् ।
अश्वमेधसहस्रेभ्यः सत्यमेव विशिष्यते ॥

भापार्थ–हे शिष्य! ऊपर जितने प्रमाण दिये सो केवल सत्यका प्रतिपादन करैहैं सत्यस्वर्गकी नसेनीहै न सत्यबराबर कोई तप है न यज्ञ मोक्षके लिये सत्यविमानपर बैठ नित्यानंदमें रहै झूठ न बोलै प्राण भी जाय जैसे हरिश्चंद्र राजाका सर्वस्व गया मिथ्या नही बोले सो सत्यकहे अब यमका तीसरा अंग अस्तेय लक्षण कहैहैं ।

याज्ञवल्क्यस्मृतिः ।

श्लोक–कर्मणा मनसा वाचा परद्रव्येषु निस्पृहः ।
अस्तेयमिति संप्रोक्तमृषिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

भापार्थ–मनकरके भी पराई द्रव्यकी अपेक्षा न करे जो भगवत्ने दिया ताहीमें संतोप इसे अस्तेय कहतेहैं योगवाशिष्ठमें"संतोपः परमो लाभः"इत्यादि।

आर्जवलक्षण ।

श्लोक–विहितेषु च द्रव्येषु मनोवाक्कायकर्मणा ।
प्रवृत्तौ वा निवृत्तौ वा एकरूपत्वमार्जवम् ॥

भापार्थ—प्राप्तवस्तुमें हर्ष अप्राप्तमें शोक नही प्रशंसामें अहंकार न सत्य-भापणमें अहंकार इसको आर्जव कहतेहै ।

अत्र क्षमालक्षण ।

श्लोक-प्रियाप्रियेषु सर्वेषु समत्वं यच्छरीरिणाम् ।
क्षमा सैवाति विद्वद्भिर्गदिता वेदवादिभिः ॥

भापार्थ—प्रियभाषण वा अप्रियभापण करनेवालेन के विषे समता राग-द्वेप रहित उसे वेदाभ्यासी क्षमा कहतेहै ।

पुनः महाभारते भीष्मपर्वणि ।

श्लोक-परश्चेदेनमतिवादवाणैर्भृशं विदूयेच्छम एवेह कार्य्यः ।
संरोप्यमाणः प्रतिहृष्यते यः स आदत्ते सुकृतं वै परस्य॥

भापार्थ—साधुको कोई दुर्वचन कहे ताको सहन करे श्रवण कानके धर्म है तिनकी व्युत्पत्ति न करे ।

सुभापितरत्नाकरे ।

श्लोक—क्षमा शस्त्रं करे यस्य दुर्जनः किं करिष्यति ।
अतृणे पतितो वह्निः स्वयमेवोपशाम्यति ॥

धैर्यलक्षणं भर्तृहरिशतके ।

श्लोक—आरभ्यते न खलु विघ्नभयेन नीचैः
प्रारभ्य विघ्नविहता विरमंति मध्याः ॥
विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमानाः
प्रारब्धमुत्तमजना न परित्यजंति ॥

भापार्थ- जो पुरुप खल वा विघ्नके भयसे कार्यका आरम्भ नही करते वे अधम । जो करके छोडदेते हैं वे मध्यम । जो विघ्नका भय त्याग कार्यमें तत्पर बने रहते वे उत्तम पुरुप धैर्यवान् गिनेजाते है ।

शौच याज्ञवल्क्यसंहितामें ।

श्लोक—शौचं तु द्विविधं प्रोक्तं बाह्याभ्यंतरतस्तथा ।
मृज्जलाभ्यां स्मृतं बाह्यं मनःशुद्धिस्तथांतरम् ॥

भापार्थ–अन्तः शौच बाह्यशौच दो प्रकारकेहैं मृत्तिकादिकसे हाथ धोना तडागादिमें स्नान ये बाह्यशौच प्राणायाम षट्कर्म जो हठयोगमें कह आयेहैं पहिले तिनसे अन्तःशुद्धि ये शौचलक्षण इति ।

गौतमसंहितायाम् ।

श्लोक–त्रिकालं स्नानहीनो यः संध्योपासनवर्जितः ।
स विप्रः शूद्रतुल्यो हि सर्वकर्मबहिष्कृतः ॥

भापार्थ–जो ब्राह्मण त्रिकाल स्नान और त्रिकाल संध्योपासनादि नहीं करता वह ब्राह्मण शूद्रवत्है । .

ब्रह्मचर्य्यलक्षण दक्षसंहितामें ।

श्लोक–स्मरणं कीर्तनं केलिः प्रेक्षणं गुह्यभाषणम् ॥
संकल्पोऽध्यवसायश्च क्रियानिष्पत्तिरेवच ॥
एतन्मैथुनमष्टांगं प्रवदंति मनीषिणः ।
न ध्यातव्यं न वक्तव्यं न कर्तव्यं कदाचन ॥
एतैः सर्वैर्विनिर्मुक्तो यतिर्भवति नेतरः ।

भापार्थ–आठ अंग मैथुनके हैं सो इनसे बचै सो ब्रह्मचर्य स्त्रीको मनमें स्मरण न करे मुखसे कीर्तन न करे स्त्रीसे एकांतमें बात न करे हास्य अंगस्पर्श भोगका मनमें संकल्प भोगका उपाय या भोगकरना आठअंग हैं ।

मनुस्मृतौ ।

श्लोक–न संभाषेत्स्त्रियं कांचित्पूर्वं दृष्ट्वा च न स्मरेत् ।
कथां च वर्जयेत्तासां न पश्येल्लिखितामपि ॥

भापार्थ–ब्रह्म चारीको चाहिये स्त्री न देखे न कागदपै स्त्रीके चित्र देखे न उसका चरित्र सुने न मनमें स्मरण करे यह ब्रह्मचर्य लक्षणहै ।

मिताहारलक्षणहठयोगप्रदीपिकामें ।

श्लोक–सुस्निग्धमधुराहारश्चतुर्थांशविवर्जितः ।
भुज्यते शिवसंप्रीत्यै मिताहारः स उच्यते ॥

भापार्थ–स्निग्ध वा मधुर भोजन भगवतके अर्पण कर प्रसादबुद्धि पर भोजन करे परंतु चार भाग करे चौथा भाग आप न खाय तीन भाग आप खाय तिसका नाम मिताहार है ।

अमृतबिन्दूपनिषदि ।

श्लोक–अत्याहारमनाहारं नित्यं योगी विवर्जयेत् ॥

भापार्थ–थोडा खाना न कि बहुत खाना सम भोजन योगीको चाहिये जिससे भजनमें बाधा न हो ।

दया जाबाल्योपनिषदि ।

श्लोक–"दया सर्वेषु भूतेषु सर्वत्रानुग्रहः स्मृतः" इति ।

पुनः–प्राणा यथात्मनोभीष्टा भूतानामपि ते तथा ।
आत्मौपम्येन भूतानां दयां कुर्वन्तु मानवाः ॥

भापार्थ–सब प्राणियोंमें आत्मा (परमात्मा) की सत्ता जान सब पर दया करना सो दया कहतेहैं । इति ।

नियमलक्षणदूसराअंग ।

श्लोक–जपस्तपो दानमथागमश्रुतिस्तथास्तिकत्वं व्रतमीश्वरार्चनम् ।
यथाप्तितोषो मतिरप्यतित्रपा बुधैर्दशैते नियमाः समीरिताः ॥

भापार्थ–दशप्रकारके नियम सो साधन यह जोगका दूसरा अंगहै जप तप दान शास्त्र श्रवण-आस्तिकता व्रत ईश्वर पूजन सन्तोष मति लज्जा । इति ।

जपलक्षणं याज्ञवल्क्यसंहितायाम् ।

श्लोक–ऋपिश्छन्दोधिदैवंचध्यानंमंत्रस्यसत्तम ।
यस्तु मंत्रंजपेद्वार्गि तदेवहि फलप्रदम् ॥

भापार्थ–एकाग्र मन करके जो गायत्री वा गुरुमंत्र या इष्टदेवका मन्त्र दोप्रकारका जप वाणीसे अन्तःकरणसे सो प्रीतियुक्त ताको नाम जपहै ।

तपोलक्षणं महाभारते ।

श्लोक–विधिनोक्तेन मार्गेण कृच्छ्रचांद्रायणादिभिः ।
शरीरशोपणं प्राहुस्तपसां तप उत्तमम् ॥

भापार्थ-धर्मशास्त्रादि ग्रन्थोंमें कृच्छ्र चान्द्रायणव्रत अमावसते पूर्णिमा तक इसमें भोजन घटते बढते ऐसे बहुत तप हैं शरीरदुर्बल सो तप नहीं मनसे तपै ।

दानलक्षणं संवर्तसंहितायाम् ।

श्लोक-सर्वेपामेव दानानामन्नदानं परं स्मृतम् ।
सर्वेपामेव जंतूनां यतस्तज्जीवितं फलम् ॥
यस्मादन्नात्प्रजाः सर्वाः कल्पेऽकल्पे सृजत्प्रभुः ।
तस्मादन्नात्परं दानं न भूतं न भविष्यति ॥

भापार्थ-सर्वोपरि अन्नदान श्रेष्ठ ऐसा ऋपीनको संमत है पृथ्वी आदि दानते विद्या दानसे अन्नदान श्रेष्ठहै ।

शास्त्रश्रवणलक्षण याज्ञवल्क्यसंहितामें ।

श्लोक-वेदांतश्रवणं प्रोक्तं सिद्धांतश्रवणं बुधैः । इति ।

भापार्थ-वेदांत उपनिपद सुनना ये ज्ञानके सहायक भागवतादि पुराण-भक्तिके वृद्धिकारक स्मृतिमें धर्मकी वृद्धि सो उनको महाजनोंसे सुनना चाहिये।

आस्तिकलक्षणमुपनिषदि ।

मूल-धर्माधर्मेषु विश्वासो यस्तदास्तिक्यमुच्यते । इति ।

भापार्थ-धर्ममें प्रीति तथा अधर्म निवृत्तिमें रुचि शास्त्रवाक्य मंत्र गुरुवाक्य संतमहात्मावोंका उपदेश तिसमें विश्वास सो आस्तिक्य ।

पूजालक्षण श्रुति ।

"आत्मध्यानंमानसिकार्चनं" बुधः ।

भापार्थ-आत्माका अंतःकरणमें ध्यान तथा परमात्माकी मूर्तिका मन-द्वारा पूजा करे बाहर भगवन्मूर्ति यथा शालग्रामशिला वा अन्यदेवमूर्ति पापाण वा धातु या चित्र इनकी पोडशोपचार पूजा करै ।

व्रतलक्षणश्रुतिमें ।

"एतैर्व्रतैरपि हेयुर्महापातकिनो मुक्ता भवेयुः ।

भापार्थ—कैसा भी पाप वा अंतःकरण मलिन सो एकादशी आदि व्रतद्वारा शुद्ध होताहै श्रुतिवाक्यहै ।

संतोपलक्षणम् ।

श्लोक—संतोपं परमास्थाय सुखार्थी हि यतो भवेत् ।
संतोपमूलं हि सुखं दुःखमूलं विपर्ययः ॥

भापार्थ—याने संतोप महान् सुख असंतोप महान् दुःख तहां कहेहै योगवाशिष्ठमें "संतोपः परमो लाभः" याने संतोप परमलाभ नीतिमें कहाहै "असंतुष्टा द्विजा नष्टा" याने असंतुष्ट द्विज नष्ट होतेहै यह संतोप लक्षण ।

मतिलक्षणयाज्ञवल्क्यमें ।

श्लोक—विहितेषु च सर्वेषु श्रद्धा या सा मतिर्भवेत् । इति ।

भापार्थ—वेदोक्तधर्ममेंसे न हटे वेदवाक्यरहित तिनमें अरुचि ताका नाम मति ऐसा बुधजन कहेहैं ।

लज्जालक्षण ।

श्लोक—वेदलौकिकमार्गेषु कुत्सितं कर्म यद्भवेत् ।
तस्मिन्भवति या ह्रीस्तु लज्जा सैवेति कीर्तिता ॥

भापार्थ—वेदोक्तकर्म या लौकिककर्म जो निंदितहैं तिनके करनेमें भय उसे लज्जा बुधजन कहेहैं इति । नियम योगका दूसरा अंग समाप्त ।

आसनअंगतीसरा पातंजलमें ।

सूत्र—"स्थिरसुखमासनम्" ।

भापार्थ—जिससे सुखपूर्वक शरीर स्थिरहो उसे आसन कहतेहैं सो योंतो चौरासी आसन महादेवजीने कहे तामें योगिराजोंने चार आसन मुख्य कहेहैं।

हठयोगप्रदीपिकामें ।

श्लोक—तेभ्यश्चतुष्कमादाय सारभूतं ब्रवीम्यहम् ।
सिद्धं पद्मं तथा सिंहं भद्रं चेति चतुष्टयम् ।

भापार्थ–तिन चौरासीनमें चार आसन मुख्य यथा सिद्धपद्मसिंहभद्र ये चार इनमें भी गोरखनाथयोगीने मुख्य दो ही आसन मानेहैं सिद्ध और पद्म सो कहे हैं।

गोरखपटलमें ।

श्लोक–योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितं कृत्वा हृदि न्यस्य च
मेढ्रे पादमथैकमेव हृदये कृत्वा हनुं सुस्थिरम् ॥
स्थाणुः संयमितेन्द्रियोऽचलदृशा पश्येद्भ्रुवोरंतरं ।
ह्येतन्मोक्षकपाटभेदजनकं सिद्धासनं प्रोच्यते ॥

भापार्थ–प्रथम वामपादकी एडी गुदा और लिंगके मध्य स्थानमें करे और दक्षिणपादकी लिंगके ऊपर स्थानमें स्थापन करे मुखकी ठोडी हृदयमें लगावे सब इंद्रियोंकूं जीत अचलहो दृष्टि दोनों भौहोंके मध्यमें रोपै इसे मोक्षका द्वार कपाटभेदन सिद्धासन योगीजन कहेहैं ग्रंथविस्तारके भयते और आसन नहीं कहे ।

प्राणायाम ४ अष्टांगयोगदर्शनमें ।

सूत्र–तस्मिन् सति श्वासप्रश्वासयोर्गतिविच्छेदः प्राणायाम इति ।

भापार्थ–सिद्धासनमें बैठ श्वास या प्रश्वासको रोकना तिसे योगीजन प्राणायाम कहतेहैं सो ताकी तीन वृत्तिहैं ।

सूत्र–बाह्याभ्यंतरस्तंभवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टोदीर्घसूक्ष्मे।इति।

भापार्थ–इससूत्रका अर्थ यह याने प्राणायाममें तीन वृत्तिहैं बाह्य आभ्यन्तर दो स्तंभस्वरूपहैं सूक्ष्मस्थूल सो प्राणायाम तीन प्रकारकाहै रेचक-पूरक कुम्भक ।

अमृतबिन्दूपनिषदि प्राणायामरेचकलक्षणम् ।

श्लोक–उत्क्षिप्य वायुमाकाशं शून्यं कृत्वा निरात्मकम् ।
शून्यभावेन युंजीयाद्रेचकस्येति लक्षणम् ॥

भापार्थ-उदरकी वायु नासापुटद्वारा विरेचन कर मस्तकमें लेजावे तब नीचास्थान शरीर शून्य होगा यह रेचक प्राणायाम इसका अभ्यास गुरुद्वारा सीखे ।

पूरकप्राणायामलक्षणम् ।

श्लोक-वक्त्रेणोत्पलनालेन तोयमाकर्षयेन्नरः ।
एवं वायुर्ग्रहीतव्यः पूरकस्येति लक्षणम् ॥

भापार्थ-जैसे पानीका आकर्षण मुखद्वारा नाल पुरुप करताहै ऐसे बाह्यस्थ वायु नासाद्वारा आकर्षण करके प्राणोंकी गति नीचे ऊपर रोकै चाहै भीतर चाहै बाहेर उसे अपने स्वाधीन राखे यह पूरकलक्षणहै ।

कुंभकप्राणायामलक्षणम् ।

मूल-नोच्छ्वसेन्न च निःश्वसेन्नैव गात्राणि चालयेत् ॥
एवं तावन्नियुंजीत कुंभकस्येति लक्षणम् ॥

भापार्थ-प्रथम रेचक वा पूरकका निरोध कर ब्रह्मांड (मस्तक) में सब अवयवोंकरके अचलहो इसप्रकार वायुको वश करना ता प्राणायामका नाम कुंभक यहां यहविपय संक्षेपसे कहा आगे अभ्यासमें कहैंगे यह गुरुद्वारा प्राप्तहै ।

प्रत्याहार ५ अंग योगदर्शनमें ।

सूत्र-स्वविपयेभ्योऽसंयोगेन।चित्तस्य स्वरूपानुकारइवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः । इति ।

भापार्थ-विपयोंसे चित्तको अपने निवृत्ति होनेमें चित्तस्वरूपके अनुकार इंद्रियोंका होना सो प्रत्याहार तहां (कपिलसंहिता) "संहारश्चेन्द्रियाणां च प्रत्याहारः" याने इंद्रियोंके व्यापारका नाशकरना शून्य जिनको चित्तसे न अनुसंधानकरे तिसे प्रत्याहार कहते हैं । पुनः-

आत्मपुराणे ।

श्लोक-मनोहराणां भोज्यानां युवतीनां च वाससाम् ।
चित्तस्यापि च सान्निध्याच्चलेच्चित्तं सतामपि ॥

भापार्थ–मनके हरनेवाले इनते दूर रहै यथा खीर पूरी मोहनभोग स्त्रीको न देखै वस्त्र सुवर्णके भूपण इत्यादि ये विपयके सहायक इनते दूर रहै इनते अंतःकरणमें भी प्रीति न करे योगी सो प्रत्याहारहै।

धारणालक्षण ६ अंग।

श्लोक–यस्तु तिष्ठति कौंतेय धारणासु यथाविधि।
मरणं जन्म दुःखं च सुखं चापि विमुच्यते॥

भापार्थ–पुरुपको चाहिये कि प्रथम चित्तको सावधान करे फिर जावस्तु को धारे उसे त्यागै नहीं जैसे पनिहारीके शिरपर जलघट उसमें सुरति चलतीहै बतातीहै तैसे ही जानों तो जन्ममरन दुःखसे छूटकर परमगतिको प्राप्त होगे प्रमाण।

पातंजलयोगसूत्र।

सूत्र–देशबंधश्चित्तस्य धारणा। इति।

भापार्थ–यह चित्तको किसी एक जगह स्थित करे जैसे अंःकरणमें चक्रादिकोंके शोधनमें या भगवद्गुणानुसंधान तिसे धारणा कहतेहैं।

ध्यानलक्षण ७ अङ्ग पातंजलमें।

सूत्र–तत्र प्रत्यैकतानता ध्यानम्। इति।

भापार्थ–जो आपना ध्येयपदार्थ परमात्मा ताके स्वरूपके ध्यानमें मग्न रहना चित्त तहांते न हटै सो ध्यान कहाताहै वहां पुनःप्रमाण।

मुंडकोपनिपदि।

मूल–ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः। इति।

भापार्थ–मनशुद्ध एकाग्र जाका सो परमात्माके ध्यान करनेमें तदाकारवृत्ति जाकी ऐसा पुरुप परमात्माको प्राप्त होताहै यह ध्यानहै इति।

समाधिलक्षणअंग।

सूत्र–तज्जयात्प्रज्ञालोकः।

भापार्थ–ध्येयपुरुपके विपय चित्त जाका लयहो यह शरीर शून्य जडवत्

ताका नाम समाधि सो दोप्रकारकी प्रमाण " समाधिर्हिद्विधा प्रोक्तःसंकल्पा निर्विकल्पकः" इत्यादि इतिअष्टांगयोगसमाप्त ।

अभ्यासयोगः ।

हे–शिष्य यह तौ मैं अष्टांगयोग कहा अब अभ्यासयोग जामें सब योगोंका सार सो संक्षेपसे सूक्ष्मद्वारा कहताहूं जिससे जिज्ञासुको सूक्ष्ममार्ग कहताहूं केवल प्राणद्वारा नाडी शुद्ध कर सुरति नादमें लगाय भगवतको प्राप्त होतेहैं यह अभ्यासयोग अतियोगहै ।

योगशिखोपनिषदि ।

मूल–ज्ञाने तु जन्मनैकन योगादेव प्रजायते ।
तस्माद्योगात्परतरो नास्ति मार्गस्तु मोक्षदः ॥

भावार्थ–ज्ञानसे अनेकजन्ममें मोक्ष होतीहै परंतु सो ज्ञानयोग मिलके शीघ्र ही मोक्ष होतीहै सो प्राणद्वारा जो योगी सुषुम्णामार्गद्वारा ब्रह्मरंध्रमें प्रवेश कर अर्चिरादिमार्गमें प्राप्त होतेहैं वेई ब्रह्मके अधिकारी सोई बातका आशय गोपालसहस्रनामसे मिलताहै "सुषुम्णामार्गसंचारी देहस्यांतरसंस्थितः । देहेन्द्रियमनःप्राणसाक्षी सर्वगतोपि वा" इत्यादि वही प्राण मन अंतमें संस्थित जो सूक्ष्ममार्ग याने सुषुम्णामार्गद्वारा गमन करताहै केवल योगिनके सो नित्यधाम विरजाके पार सो विरजा नाम श्रीयमुनाजीका दूसरा नामहै सो बात नित्यधामका प्रतिपादन (महाशिवसंहितामें) " सुषुम्णातो पराविरजा विरजा ब्रह्मस्वरूपिणी,, । इत्यादि ।

अर्थ–सो योगी विरजाके पार नित्यधाममें प्राप्त होतेहैं सो विरजा ... सुषुम्णाते परेहै सो सुषुम्णा वज्रजालमें ग्रसीहै सो बातका प्रमाण और ग्रंथ सम्मत ।

योगशिखोपनिषदि ।

श्लोक–सुषुम्णावज्रनालेन पवमानं ग्रसेत्तथा ।
वज्रदंडसमुद्भूता मणयश्चैकविंशतिः ॥

सुषुम्णायां स्थिताः सर्वे सूत्रेमणिगणा इव ।
मोक्षमार्गप्रतिष्ठाना सुषुम्णा विश्वरूपिणी ॥
यथैव निश्चितःकालश्चंद्रसूर्य्यनिबंधनात् ।
आपूर्य्य कुंभितो वायुर्वहिर्नो याति साधके ॥
पुनःपुनस्तद्वदेव पश्चिमद्वारलक्षणम् ।
पूरितस्तुस तद्वारैरीपत्कुंभकतां गतः ॥
प्रविश्य सर्वगात्रेषु वायुः पश्चिममार्गतः ।
रेचकक्षीणतां याति पुनः संपूरयेत्ततः ॥ इति ॥

भापार्थ–हे शिष्य! जो द्वार पश्चिमकाहै सुषुम्णाके तीर उसे वायु आच्छादित करैहै वज्रनालमें सुषुम्णा मिलिके मेरुदंडके भीतर भिदी जैसे मालाकी गुरिया सूतमें पुही तैसे सब अंगमें नाडी तिनको शुद्ध कर फिर सुषुम्णाद्वारा प्राणविजय कर शब्दनादश्रवण ब्रह्मरंध्रपै सुनै ताको पकरि सुरति आगे चल जैसे बोलनेवालेकी आवाज सुन वही ओर पुरुष चलताहै तैसे सुरति शब्दको पकरि जात सो नाद नाडीशुद्धि विना नहीं सुनिवेमें आता सो अब प्रथम नाडिनका भेद सुनो ।

अथर्वप्रश्नोपनिषदि ।

मूल–अत्रैतदेकशतं नाडीनां तासां शतं शतमेकैकस्याः ।
द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः प्रतिशाखं नाडीसहस्राणि ॥

भापार्थ–इस शरीरमें एकसौ नाडी मुख्यहैं तिनमें सौ सौ शाखा नाडी निकसी पुनः तिन नाडीशाखावोंते एक एकते बहत्तर बहत्तर नाडी ,से बहत्तरहजार नाडी इस शरीरमें हैं प्रमाण योगचूडामणौ "द्विसप्तसहस्र।।णमतिनाडीपुतैतिलम्" शरीरका आधार मस्तकहै तामें सब नाडीनका आधार सुषुम्णाका वासहै अब तिनमें मुख्य दशहैं ।

गोरक्षशतके ।

श्लोक–इडा च पिंगला चैव सुषुम्णाथ तृतीयका ।
गांधारी हस्तिजिह्वा च पूषा चैव यशस्विनी ॥

सुषुम्णायां स्थिताः सर्वे सूत्रेमणिगणा इव ।
मोक्षमार्गप्रतिष्ठाना सुषुम्णा विश्वरूपिणी ॥
यथैव निश्चितःकालश्चंद्रसूर्य्यनिबंधनात् ।
आपूर्य्य कुंभितो वायुर्बहिर्नो याति साधके ॥
पुनःपुनस्तद्वदेव पश्चिमद्वारलक्षणम् ।
पूरितस्तुस तद्वारैरीपत्कुंभकतां गतः ॥
प्रविश्य सर्वगात्रेषु वायुः पश्चिममार्गतः ।
रेचकक्षीणतां याति पुनः संपूरयेत्ततः ॥ इति ॥

भावार्थ—हे शिष्य ! जो द्वार पश्चिमकाहै सुषुम्णाके तीर उसे वायु आच्छादित करैहै वज्रनालमें सुषुम्णा मिलिके मेरुदंडके भीतर भिदी जैसे मालाकी गुरिया सूतमें पुही तैसे सब अंगमें नाडी तिनको शुद्ध कर फिर सुषुम्णाद्वारा प्राणविजय कर शब्दनादश्रवण ब्रह्मरंध्रपै सुनै ताको पकरि सुरति आगे चल जैसे बोलनेवालेकी आवाज सुन वही ओर पुरुष चलताहै तैसे सुरति शब्दको पकरि जात सो नाद नाडीशुद्धि विना नहीं सुनिबेमें आता सो अब प्रथम नाडिनका भेद सुनो ।

अलंबुपा कुहूश्चैव शंखिनी दशमी स्मृता ।
एतन्नाडीमयं चक्रं ज्ञातव्यं योगिभिः सदा ॥

भापार्थ–इडा पिंगला सुपुम्णा गांधारी हस्ती पूपा यशस्विनी अलंबुपा कुहू शंखिनी ये दशनाडीहैं अबकौननाडी कहाँ किस किस स्थानमें सो कहैहैं।

योगखंडे ।

श्लोक–इडा वामे स्थिता भागे दक्षिणे पिंगला तथा ।
सुपुम्णा मध्यदेशे तु गांधारी वामचक्षुपि ॥
दक्षिणे हस्तिजिह्वा च पूपा कर्णे च दक्षिणे ।
यशस्विनी वामकर्णे वदने चाप्यलंबुपा ॥
कुहूश्च लिंगदेशे तु मूलाधारे तु शंखिनी ।
एवं द्वारं समाश्रित्य तिष्ठंति दश नाडयः ॥

भापार्थ–नासाके वामपुटमें इडा नाम नाडीका स्थान नासाके दक्षिण-पुटमें पिंगलानाडीका स्थान मध्यमें सुपुम्णा रहतीहै बांयें नेत्रमें गांधारीका निवास दक्षिणनेत्रमें हस्तिका जिह्वामें दहिने कानमें पूपा बायें कानमें यश-स्विनी मुखमें अलंबुपा लिंगमें कुहूका स्थानहै मूलाधारमें शंखिनी ऐसे ये दशनाडीहैं । सो अपने अपने स्थानपर आरूढहैं तिनमें तीन नाडी मुख्य इडापिंगला सुपुम्णा ताको प्रमाण ।

भारद्वाजसंहितायाम् ।

श्लोक–तासां मुख्यतमास्तिस्रस्तिसृष्वेकोत्तमोत्तमा ।
मुक्तिमार्गेषु सा प्रोक्ता सुपुम्णा विश्वधारिणी ॥

भापार्थ–पूर्व कहीहुई नाडीनमें तीन मुख्यहैं इडा पिंगला सुपुम्णा सो तीनोंमें सुपुम्णा मुख्यहै । तिसे-योगीजन मुक्तिका दरवाजा कहतेहैं सब नाडीनकी उत्पत्ति ।

जाबालोपनिषदि ।

श्लोक–ऊर्ध्वं मेढ्रादधो नाभेः कंदयोनिः खगांडवत् ।
तत्र नाड्यः समुत्पन्नाः सहस्राणां द्विसप्ततिः ॥

भापार्थ–लिंगदेशके ऊपर नाभिके किंचित् नीचे कंदका स्थानहै तहांते नाडीनकी उत्पत्ति तिनमें सुषुम्णाका भिन्न स्थानहै सो ताको सुनो ।

सौभरिऋषिकृतयोगदीपिका ।

श्लोक–चतुरंगुलविस्तारमायामं च तथाविधम् ।
अंडाकृतिवदाकारं भूषितं च त्वगादिभिः ॥

भापार्थ–मनुष्यके लिंग और गुदाके नीचेमें सिवनीहै तिसते चार अंगुल ऊपर कंदका स्थान उसका आवर्त (गुलाई) चारि अंगुलकी तिसकी आकृति मुरगीके अंडेके समान सो चारों ओर कफसे घिराहै सो ताके मध्यस्थानमें सुषुम्णाका मूलस्थानहै ।

याज्ञवाल्क्यसंहितायाम् ।

श्लोक–कंदस्य मध्यमे गार्गि सुषुम्णा संप्रतिष्ठिता ।
पृष्ठमध्ये स्थितेनास्थ्ना सह मूर्धानमागता ॥

भापार्थ–पूर्वोक्त कंदके मध्य हेगार्गि । सुषुम्णाका मूल उत्पत्ति सो तहांसे सुषुम्णा पीठमें जो मेरुदण्ड ताके अंतरह्वै ब्रह्मरंध्रपर्यंत गई सो यह रहस्य गुप्तहै इसका भेद योगाभ्यासीको गुरुद्वारा समझनेमें आताहै यहां लिखनेते अर्धज्ञानी भ्रमजातेहैं अब प्राणको ऐसे चलावे वो मार्ग सुनो और सुरति सो सुषुम्णाके मूलस्थानते षट्चक्रोंको भेदन कर फिर ऊपर तालुके एकसहस्र दल कमल तापै जाय स्थितहो परन्तु कण्ठमें जो चक्र तहांते दो मार्ग हे । पूर्वमार्ग पश्चिममार्ग सो सुषुम्नाके दो भेदहै तिनमें जो पश्चिममार्ग सो ग्रीवाके पीछे जो स्थित मेरुदंड तिसके द्वारा भी प्राण ब्रह्मरंध्रविषे जावैहै और पूर्वमार्ग सो भ्रूमध्यदेश विषे जो आज्ञाचक्र उसके द्वारा जो ब्रह्मरंध्रपै जावे इन दोनोंमें पश्चिममार्ग श्रेष्ठ ऐसा योगियोंका मत है प्रमाण ।

अथर्वयोगशिखोपनिषदि ।

श्लोक–द्वितीयं सुषुम्णाद्वारं परिशुद्धं विसर्पति । इति ।

भाषार्थ–विज्ञानी योगीको चाहिये कि कहेभये पश्चिमद्वार जो सुषुम्णाका द्वितीयमार्ग ताकेद्वारा प्राण वशीकर ब्रह्मरंध्र में पहुंचे ऐसा योगी कहेहैं ।

योगप्रदीपिकायाम् ।

श्लोक--विधिवत्प्राणसंयामैर्नाडीचक्रे विशोधिते ।
सुषुम्णावदनं भित्त्वा सुखाद्विशति मारुतः ॥

भाषार्थ–विधिपूर्वक प्राणनसे चक्र भेदन कर ते नाडी शुद्ध सुषुम्णाका मुख्य भेदन कर प्राण सुखसे दशमद्वार ब्रह्मरंध्रमें प्रवेश करते प्राणायाम करनेका तात्पर्य्य नाडी शुद्धतासे शरीर लघु होताहै जब सब मिटेगा तब जो सुषुम्णाके मध्य ह्वैके जो ब्रह्मरंध्रपै कुण्डलनी सर्पकी नांई गोलकुण्ड ताको बांद छेदपै बंद करैहै सो ताके हटेते वो खुल जाताहै तो फिर ब्रह्मांडके बाहर हुआ तहांते अर्चिरादि मार्ग सो कुंडलनी सुषुम्णाको पीडित करैहै ।

हठयोगप्रदीपिकायाम् ।

श्लोक--कन्दोर्द्ध्वे कुण्डली शक्तिः सुप्ता मोक्षाय थे
वन्धनाय च मूढानां यस्तां वेत्ति स योगवित्

भाषार्थ–कन्दके ऊपरभागमें सुषुम्णाके मलस्थानपर ताको जो योगी जगाय हटायदेते ते मोक्षमार्गमें पद देतेहैं ।

याज्ञवल्क्यसंहितायाम् ।

त्रिरावेष्ट्य मुखेन मध्ये स्वपुच्छमास्येन ।
नाभौ सदां तिष्ठति कुण्डली सा धिया समाधाय ।

भाषार्थ–वह कुंडलनी नाम सार्पिणीसम सुषुम्णा नाडीको रसे तीन वलकर पूंछ मुंहमें नाय बैठीहै नाभिके अधोभागमें स

है इसकारण जो योगी प्राण और आत्मा दशमद्वार लेजाया चहै सो वह विना सुषुम्णा भेदन दशममें नहीं जायँगे तिसकूँ बंधमुद्राद्वारा कुंडलनी हठावे तो योगी सुषुम्णाद्वारा मोक्षको प्राप्त होगा सो बंध तीन प्रकारके हैं उड्डियानबंध, मूलबंध, जलंधरबंध, सो तीनोंके लक्षण भिन्नकर सुनो ।

उड्डियानबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—उदरे पश्चिमतानं नाभेरूर्ध्वं च कारयेत् ।
उड्डियानो ह्यसौ बंधो मृत्युमातंगकेसरी ॥

भावार्थ—प्राणको रेचकपूर्वक उदरके दहिने तरफ आकर्षण करे नाभिकूँ किंचित् ऊर्ध्व ऊपरको आकर्षण करे यह मृत्युमत्तगजको सिंहसम उड्डियान बंध है ।

जलंधरबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढम् ।
बंधो जलंधराख्योयं जरामृत्युविनाशकः ॥

भावार्थ—कंठको संकोच कर ठोडी हृदयमें लगावे दृढ करे यह जलंधर बंधहै ।

मूलबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—पार्ष्णिभागेन संपीडय योनिमाकुंचयेद्दृढम् ।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य मूलबंधोऽभिधीयते ॥

भावार्थ—सिद्धासनपूर्वक वामपदकी येडी गुदा और लिंगके मध्यमें जाको योनिस्थान कहतेहैं ताको पीडन कर अपानवायु ऊपरको चढावे गुदाद्वारा आकुंचन करना यह मूलबंधहै उड्डियान बंध प्राणरेचनकालविषे करे जालंधर प्राणायामके कुंभकके समय करे मूलबंध प्राणके पूरककालमें करे इन तीनोंसे कुंडलनीको बोध होगा उड्डियान मूलबंधसे अपानवायु ऊर्द्ध्वगामी होगी तासे जठरानल प्रदीप्त होगी सो जठरानलकी उष्णतासे जो गरमी

अथर्वयोगशिखोपनिषदि ।

श्लोक–द्वितीयं सुषुम्णाद्वारं परिशुद्धं विसर्पति । इति ।

भावार्थ–विज्ञानी योगीको चाहिये कि कहेभये पश्चिमद्वार जो सुषुम्णाका द्वितीयमार्ग ताकेद्वारा प्राण वशीकर ब्रह्मरंध्र में पहुंचै ऐसा योगी कहैहैं ।

योगप्रदीपिकायाम् ।

श्लोक--विधिवत्प्राणसंयामैर्नाडीचक्रे विशोधिते ।
सुषुम्णावदनं भित्त्वा सुखाद्विशति मारुतः ॥

भावार्थ–विधिपूर्वक प्राणनसे चक्र भेदन कर ते नाडी शुद्ध होनेते सुषुम्णाका मुख्य भेदन कर प्राण सुखसे दशमद्वार ब्रह्मरंध्रमें प्रवेश करते है । प्राणायाम करनेका तात्पर्य्य नाडी शुद्धतासे शरीर लघु होताहै जब सब शरीर मिटैगा तब जो सुषुम्णाके मध्य ह्वैके जो ब्रह्मरंध्रपै कुण्डलनी नाम सो सर्पकी नाई गोलकुण्ड ताको बांद छेदपै बंद करैहै सो ताके हटेते वो द्वार खुल जाताहै तो फिर ब्रह्मांडके बाहर हुआ तहांते अर्चिरादि मार्ग मिलताहै सो कुंडलनी सुषुम्णाको पीडित करैहै ।

हठयोगप्रदीपिकायाम् ।

श्लोक--कन्दोर्द्ध्वे कुण्डली शक्तिः सुप्ता मोक्षाय योगिनाम् ।
बन्धनाय च मूढानां यस्तां वेत्ति स योगवित् ॥

भावार्थ–कन्दके ऊपरभागमें सुषुम्णाके मलस्थानपर कुंडलनी सोतीहै ताको जो योगी जगाय हटायदेते ते मोक्षमार्गमें पद देतेहैं ।

याज्ञवल्क्यसंहितायाम् ।

श्लोक–शिरां त्रिरावेष्टय मुखेन मध्ये स्वपुच्छमास्येन निगृह्य सम्यक् ॥
नाभौ सदा तिष्ठति कुण्डली सा धिया समाधाय निबोधयेत्ताम् ॥

भावार्थ–वह कुंडलनी नाम सार्पिणीसम सुषुम्णा नाडीको अपने शरीरसे तीन वलकर पूंछ मुंहमें नाय बैठीहै नाभिके अधोभागमें सदा स्थित

है इसकारण जो योगी प्राण और आत्मा दशमद्वार लेजाया चहै सो वह विना सुषुम्णा भेदन दशममें नहीं जायँगे तिसकूँ बंधमुद्राद्वारा कुंडलनी हठावे तो योगी सुषुम्णाद्वारा मोक्षको प्राप्त होगा सो बंध तीन प्रकारके हैं उड्डियानबंध, मूलबंध, जलंधरबंध, सो तीनोंके लक्षण भिन्नकर सुनो ।

उड्डियानबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—उदरे पश्चिमतानं नाभेरूर्ध्वं च कारयेत् ।
उड्डियानो ह्यसौ बंधो मृत्युमातंगकेसरी ॥

भापार्थ—प्राणको रेचकपूर्वक उदरके दहिने तरफ आकर्पण करे नाभिकूँ किंचित् ऊर्ध्व ऊपरको आकर्पण करे यह मृत्युमत्तगजको सिंहसम उड्डियान बंध है ।

जलंधरबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—कंठमाकुंच्य हृदये स्थापयेच्चिबुकं दृढम् ।
बंधो जलंधराख्योयं जरामृत्युविनाशकः ॥

भापार्थ—कंठको संकोच कर ठोडी हृदयमें लगावे दृढ करे यह जलंधर बंधहै ।

मूलबन्धलक्षणम् ।

श्लोक—पार्ष्णिभागेन संपीड्य योनिमाकुंचयेद्गुदम् ।
अपानमूर्ध्वमाकृष्य मूलबंधोऽभिधीयते ॥

भापार्थ—सिद्धासनपूर्वक वामपदकी येडी गुदा और लिंगके मध्यमें जाको योनिस्थान कहतेहैं ताको पीडन कर अपानवायु ऊपरको चढावे गुदाद्वारा आकुंचन करना यह मूलबंधहै उड्डियान बंध प्राणरेचनकालविषे करे जालंधर प्राणायामके कुंभकके समय करे मूलबंध प्राणके पूरककालमे करे इन तीनोंसे कुंडलनीको बोध होगा उड्डियान मूलबंधते अपानवायु ऊर्द्ध्वगामी होगी तासे जठरानल प्रदीप्त होगी सो जठरानलकी उष्णतासे जो गरमी

ताकी व्याकुलताते कुंडलनी हटजावे सो सुषुम्णामें सुरति प्रवेश कर ब्रह्म-रंध्रमें प्रवेश जैसे मोरके भयते सर्प भागे तैसे बंधते कुंडलनी भागै ब्रह्म-रंध्रके आगे अर्चिरादि मार्ग सो गुरुद्वारा जो योगाभ्यासी तासे जानाजाताहै यहां शास्त्रका काम नहीं इति।

इति श्रीयुतगुरुदुर्गाप्रसादात्मज अ० र० प्रियादासशुक्लप्रणीते श्रीशास्त्रसारसिद्धान्तमणौ योगप्रकरण सम्पूर्णम्॥ ७ ॥

अथ मोक्षप्रकरणम् ८.

शिष्य हे गुरुजी महाराज ! आपने अनुग्रह कर कर्म धर्म ज्ञान भक्ति तथा योगाभ्यास ये सब सुनाये तिनको सुन अंतःकरणमें अति आनंद हुआ अब कृपा कर यह कहिये इन सबका सार संसारसे निवृत्तहो यह चेतन कहां जाताहै कौन गतिको प्राप्त होताहै मोक्ष क्या वस्तु ? और कै प्रकारका? मोक्ष-शब्दका अर्थ क्या? सो ज्ञाननिधि कृपा कर कहो ।

गुरु—हे शिष्य! जो तुमने कहा कि यह चेतन कहां जाताहै सो शुद्ध चैत-न्यस्वरूप जो कहआये तिसके साधन द्वारा परमगतिको जाताहै सो आगे कहैंगे जो तुमने कहा कि मोक्ष क्या वस्तु सो मोक्ष नाम बंधनसे छूटे तीनों कर्म संचित आगामी कर्तृत्व इनते छूटे तथा त्रयतापविनिर्मुक्त याने आध्यात्मिक आधिभौतिक आधिदैविक इन तीनोंते बचे उसेही मोक्ष कहतेहैं सो मोक्ष(कौ-शिकउपनिषद्में) चारप्रकार "मोक्षश्चतुर्विधो भवति"याने मोक्ष चारप्रकारकी सायुज्य सालोक्य सामीप्य सार्ष्टि सो इनमें जाको जौन प्रिय उसीको पुष्ट करैहैं प्रमाण ।

मू०—केचिद्वदंति निरवयवगुणातीतवस्तुज्ञानं मोक्षः केचिद्वदंति साकारस्याकारविनाशः आकारशून्य उभयपक्षविहीनस्तं च कथयंति केचित् एकादशीव्रतादिद्वारा मोक्षं केचिद्भक्तिविधानेन

मोक्षं केचिन्मनोलयं मोक्षं केचित् महावाक्यकथनमात्रंमोक्षं केचिद् अहं ब्रह्म मोक्षं केचिद् सोहमस्मि मोक्षं केचिन्नानादर्शनं मोक्षं कथयंति ।

भावार्थ—हे शिष्य! कोई तो रूपरहित होना उसीको मोक्ष कोईका मत साकार कोई शून्य कहताहै कोईका मत कि एकादशीव्रत सोई मोक्षका कारण कोई भक्ति मोक्षका कारण कोई मनका लय मोक्ष मानताहै कोई तत्त्वमसि इसका अर्थ वही मोक्ष जो तू मैं अभेद कोई मैं ब्रह्महूँ कोई नाना तीर्थभ्रमण ऐसा मानतेहैं परंतु ये सब सत्यहैं मिथ्या नहीं इनका सारभूतपै लक्ष्य नहीं केवल मुखके कथनते नहीं होवे यहां अहंकारसे नहीं कार्य बने अपने अपने मतमें भ्रमैहैं ।

श्लोक—योगी देहाभिमान्येव भोगी कर्मणि तत्परः ।
ज्ञानी मोक्षाभिमान्येव तत्त्वज्ञानाभिमानतः ॥

भावार्थ—हे शिष्य ! देखो अहंकार ही बंधनका कारण तामें तो सब फँसे और मोक्षकी इच्छा सो कैसेबनै योगीजनोंको देहका अभिमान भोगी जन यज्ञादि कर्म करते तिसमें स्वर्गका भोगहै ज्ञानी जिनको कहते हैं वे अपनेको मुक्त समझ रक्खा तो अब मोक्षको कौन पूछे और कोई बातपै निश्चय नहीं ताको सुनो ।

श्लोक—कर्मयोगाश्चविद्वांसःस्वःप्राप्तिंचांतरालयम् ।
सत्यवैकुंठकैलासान्क्षीराब्धिसाकेतयोस्तथा ॥
विश्वरूपंचैतन्यमेतन्मायास्वरूपकम् ।
मायापरेभवेद्ब्रह्म तत्परे ब्रह्म केवलम् ॥

भावार्थ—हे शिष्य! सुनो कर्मकांडी स्वर्ग प्राप्तिको ही मोक्ष योगी अंतकरण मेंही मोक्ष धाम मानतेहैं कोई कैलासकी प्राप्तिको कोई वैकुंठकी प्राप्तिको कोई

श्लोक-क्रीडार्थं देवदेवस्य विष्णुर्लीलाधिकारिणी ।
लोकैश्चतुर्भिर्दशाभिः सागरैर्द्वीपसंयुतैः ॥
भूतैश्चतुर्विधैश्चापि भूधरैश्चमहोच्छ्रयैः ।
परिपूर्णमिदं रम्यमंडं प्रकृतिसंभवम् ॥
दशोत्तरगुणोपेतं सप्तावारणसंयुतम ।
कलाकाष्ठादिरूपेण यः कालःपरिवर्तते ॥
कालेनैव जगत्सर्वं स्थितिसंहारणं भवेत् ।
तावंति रात्रिवर्षाणि ब्रह्मणोव्यक्तजन्मनः ॥
क्षये तु ब्रह्मणःप्राते सर्वसंहारको भवेत् ।
अंडमंडगता लोका दह्यंते कालवह्निना ॥
सर्वोत्मानस्तथाविष्णुः प्रकृतौ विनिवेशितः ।
अंडावरणभूतानि प्रकृतौ लयमाप्नुयुः ॥
सा सर्वजगधारप्रकृतिर्हरिसंश्रिता ।
जगत्सर्वलयःस्यात्तु प्रकृतावेवसर्वदा ॥
असख्यंप्रकृतेःस्थानं निविडध्वांतमव्ययम् ॥

भावार्थ—हे शिष्य! देवदेव जो परमात्मा सच्चिदानंद घन तिनकी इच्छासे क्रीडाके अर्थ यह जगतउत्पन्नकिया तिसके अधिकारी विष्णु भगवान् भये सो ब्रह्मांडमें चौदह लोक रचे समुद्र द्वीप व पर्वत वनस्पति चर अचर नानाप्रकारके जीव तिनमें उत्पन्न किये सुंदर सबवस्तुसे परिपूर्ण अतिमनोहर ऐसे असंख्य ब्रह्मांड उत्पन्न किये सो सप्त आवरणके भीतर पृथिवी आप् तेज वायु आकाश अग्नि प्रकृति इनके अंतर जैसे वेलफलपे सात ते चढीहों तैसे ब्रह्मांडपर सात आवरणहैं तिनके

बाहर विरजाहै परंतु ये सब ब्रह्मांडकी लीला कालके अधीनहैं कालमें स्थिति और कालमें ही नाश होताहै उसी कालके चारयुग सतयुग त्रेता द्वापर कलियुग ये चारों एक एक हजार बीतजायँ तब ब्रह्माका एक दिन होताहै ऐसे जब ब्रह्माकी रात्रि होतीहै तब प्रलय जब सौ वर्ष ब्रह्माके होतेहैं । तब महाप्रलय होताहै तब ब्रह्माका नाश होताहै तब सृष्टि सबलोक ब्रह्मांड तिन्हें कालाग्नि भस्म करदेताहै सो सब प्रकृति याने मायामें लय सो माया विष्णुमें लय होती है फिर इच्छाते उत्पत्ति होती है सो इनते वो स्थान दूर और विलक्षण है सो सुनो महादेववाक्य ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक–त्रिपाद्विभूतिरूपंतु शृणुभूधरनंदिनि ।
प्रधानपरमव्योम्नोरंतरे विरजानदी ॥
वेदांगस्वेदजनिततोयैः प्रस्नाविता शुभा ।
तस्याःपारे परव्योम्नि त्रिपाद्भूतिसनातनी ॥
अमृतं शाश्वतं नित्यमनंतं परमं पदम् ।
अनेककोटिसूर्याग्नितुल्यता नैव भव्यगे ॥
सर्ववेदमयं शुद्धं सर्वं प्रलयवर्जितम ।
असंख्यमजरंनित्यं जाग्रत्स्वप्नादिवर्जितम् ॥
हिरण्मयं पदं ब्रह्म ब्रह्मानंदसुखावहम् ।
समानाधिक्यरहितमाद्यंतरहितंशुभम् ॥
तेजसात्यद्भुतं रम्यं नित्यमानंदसागरम् ।
एवमादिगुणोपेतं ततः सर्वोत्तमं,पदम् ॥

भापार्थ–महादेवजी कहेहैं कि हे पार्वती ! तुम एकाग्र चित्त कर सुनो जहांको चेतन जाय आवता नहीं सो विरजाके पार त्रिपादविभूति नाम ऐसा धाम है कैसाहै वो नित्यहै कोई कालमें नाश नहीं शुद्धसत्त्व है वहां तीनों

अवस्था नहीं जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति जादा कमती नहीं सूर्य्य चंद्र भी वहाँ नहीं न अग्नि इस बातको श्री गीताजी पुष्ट करैहै ।

श्लोक–न तद्भासयते सूर्य्यो न शशांको न-पावकः ।
यद्गत्वा न निवर्तंते तद्धाम परमं मम ॥

भापार्थ–कैसा वो धाम जहां सूर्य्यका प्रकाश न चंद्रका प्रकाश वह धाम स्वतएव प्रकाशमानहै प्रमाण ।

श्रुति–"न तत्र सूर्य्यो भाति न चंद्रतारकं नेमा विद्युतो भांति कुतोयमग्निः । तमेव भांतमनु भांति सर्वमिदं विभाति"इत्यादि ॥

भापार्थ–इस श्रुतिका भी अर्थ ऊपर कहे सम जानना सो धाम मन करके भी नहीं जानाजाता प्रमाण ।

भागवते अ० २ ।

श्लोक–पदं तत् परमं विष्णोर्मनो यत्र प्रसीदति ।
मानसे पूजने सक्तास्ते यान्ति परमं पदम् ॥

भापार्थ–हे शिष्य ! वो धाम सर्वोपरि जहां मनकी भी पहुंच नहीं परंतु जो मनकी वृत्ति लयकर भगवत्का आराधन मानसिक करतेहैं वे तहांको प्राप्त होवेहैं प्रमाण ।

महाशिवसंहितायाम् ।

श्लोक–तद्विष्णोः परमं धाम शाश्वतं नित्यमच्युतम् ।
नहि वर्णयितुं शक्यं कल्पकोटिशतैरपि ॥
तत्प्रवेष्टुमशक्यं च ब्रह्मविष्णुमहेश्वरैः ।
ज्ञानेन योगमार्गेण वीक्ष्यते योगिपुंगवैः ॥
अहं ब्रह्मा च देवाश्च न जानंति महर्षयः ।
सर्वोपनिषदामर्थं दिव्यद्या वक्ष्यामि सुव्रते ॥

भाषार्थ—हे पार्वतीजी ! उस धामकी ब्रह्मा विष्णु तथा हम भी इच्छा करते हैं और वो अतिगोप्य स्थानहै ताको ज्ञान तथा योगमार्गद्वारा योगी भगवद्भक्त ही प्राप्त होतेहैं सो बात उपनिषदोंसे प्रमाण मानी जातीहै त्रिपाद विभूति उपनिषदमें तथा आश्वलायन शाखामें ऋग्वेदमें ।

"तद्विष्णोःपरमंपदंसदापश्यन्तिसूरयःदिवीवचक्षुराततम्" इत्यादि ।

भाषार्थ—सो विष्णुका भी परमपद स्थान ताको सूरि अर्थात् नित्य-मुक्त जिनकी वासनाका नाश हुआ ऐसे दिव्यदृष्टि शुद्ध चैतन्य सो तहांको प्राप्त होतेहै तहांके अधिपतिका कैसा स्वरूपहै ताको कहैहैं ।

पद्मपुराणे ।

श्लोक—अत्र हंत परं धाम गोपवेषो जगत्पतिः ।
तद्भाति परमं धाम गोभिर्गोपैः सुखाह्वयम् ॥
तत्पदं ज्ञानिनो विप्रा यांति संवासमिच्छवः ।
तद्विष्णोः परमं धाम मोक्ष इत्यभिधीयते ॥

भाषार्थ—सो परम धामके विषे श्रीहरि भगवत् सच्चिदानंद जिन्हें श्रीकृष्ण कहतेहैं ते गोपवेष याने मोरपंखका मुकुट वनमाला मुरली हाथमें विरा-जमान गोप भक्तजन कर शोभितहैं । तहांको ज्ञानद्वारा निश्चय होयहै सो धाममें प्राप्त ते मोक्ष होयहै यह विधि सो अब तहांके प्राप्त होनेके मार्गमें कौन कौन स्थान कौन कौन लोक परैहै ताको अर्चिरादि मार्ग कहतेहैं सो सुनो ।

सदाशिवसंहितायाम् ।

श्लोक—महर्लोकः क्षितेरूर्ध्वमेककोटिप्रमाणतः ।
कोटिद्वयेन विख्यातो जनलोको व्यवस्थितः ॥
चतुष्कोटिप्रमाणं तु तपोलोको विराजितः ।
उपरिष्टात्ततः सत्यमष्टकोटिप्रमाणतः ॥

भाषार्थ—हे शिष्य ! देखो जब यह चैतन्य शुद्धहो भगवद्भक्तिके प्रभाव से संसारसे मुक्तहो परंपदको जाताहै तब मार्गमें प्रथम महर्लोक जो पृथ्वीसे एककोटि योजन ऊपर तहांको प्राप्त होता तहांसे द्वैकरोड योजन चले पर जनलोक मिलताहै फिरि चारिकरोड योजन वहांसे तपलोक तहांते आठ कोटि योजन पर सत्यलोक मिलैहै यहां ग्रंथ विस्तारके भयते लोकनका गुण वैभव नहीं वर्णन किया तहांते और बहुत लोकहैं । तिन्हें नहीं कहेंगे अब यहांते सप्त आवरण परैहै ।

श्लोक—एतस्माद्बहिरावृत्तिः सप्तावरणसंज्ञका ।
तदूर्ध्वं सर्वतत्त्वानां कार्य्यकारणमानिनाम् ।
निलयं परमं दिव्यं महावैष्णवसंज्ञकम् ॥
शुद्धस्फटिकसंकाशं नित्यस्वच्छं महोदयम् ॥
निरामयं निराधारं स्थिरबुद्धिसमाकुलम् ।
भासमानं स्ववपुपा वयस्यैश्च विजृम्भितम् ॥
मणिस्तंभसहस्रैस्तु निर्मितं भवनोत्तमम् ।
वज्रवैदूर्य्यमाणिक्यग्रथितं रत्नदीपकम् ॥
हेमप्रासादमावृत्य तरवः कामजातयः ।
रत्नकुंडैरसंख्यातैः पुरुषैर्निलयवासिभिः ॥
स्त्रीरत्नैः परमाह्लादैः संगीतध्वानिमोदितैः ।
स्तुतं च सेवितं रम्यं रत्नतोरणमंडितम् ॥
अनन्तयोजनोच्छ्रायमनंतयोजनायतम् ॥
यत्र शेते महाविष्णुर्भगवाञ्जगदीश्वरः ।
सहस्रमूर्तिर्विश्वात्मा सहस्राक्षः सहस्रपात् ॥
यन्निमेषे जगत्सर्वं लयीभूतं व्यवस्थितम् ।
इंद्रकोटिसहस्राणां ब्रह्मणां च सहस्रकम् ॥

यदंशेन समुद्भूता ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ।
कार्य्यकारणसंपन्ना गुणत्रयविभावकाः ॥

भाषार्थ—तप लोकसे सप्तावरण भेदन कर यह चेतन आगे चलताहै तहां वह वैष्णवोंके ईश्वर महाविष्णुका स्थान सो कैसा स्थान निरवयव निराधार याने पृथ्वी पर्वतके ऊपर नहीं तामें मणि वैडूर्य स्फटिक इत्यादिक हजारों मंडप शोभित तहां नानाप्रकारके तडाग वनयुक्त शोभित तहां नानाप्रकारके शृंगार किये स्त्रीनसहित श्वेतविष्णु नानाप्रकारके ध्वनिके बाजे बजते तहां परम आह्लादसे सिंहासनपर विराजमान तेई विष्णुके अंशते क्षीरसागरके निवासी पद्मनाभ उत्पन्न भये तिनते ब्रह्मा विष्णु महादेव प्रतिब्रह्मांडमें होते भये सो भी स्थान विरजापार महावैकुंठ याहीको श्रीवैष्णवजन याचते अब वो स्वधामको कहैहैं जाके अंशते महावैकुंठ भी उत्पन्न जाके अंशते महाविष्णु भी हैं सो वो कौन धामहै ।

नारदपंचरात्रे ।

श्लोक—तद्वेदाः परमं धाम मदीयं पूर्वसूचितम् ।
एतद् गुह्यं समाख्यानं ददातु वांछितं हितम् ॥
तदूर्ध्वं तु परं दिव्यं सत्यमन्यव्द्यवस्थितम् ।
न्यासिनां योगिनां स्थानं भगवद्भावितात्मनाम् ॥
महाहारिमोंदतेऽत्र सर्वशक्तिसमन्वितः ।
तदूर्ध्वं तु स्वयं भातं गोलोकं चाप्यतः परम् ॥

भाषार्थ—महादेवजी कहैहैं कि हे पार्वति! मैं अब उस धामका वर्णन करताहूँ जहांकी रहस्य अतिगोप्यहै ताको हम तुमते पहिले सूचित करचुके तहां योगीजन भगवतकी अनन्यता भक्तिके धारण करनेवाले वेही प्राप्त होते सो महावैकुंठते परे श्रीगोलोकधामहै जहांकी प्राप्तिसे पुनः जन्म मरण नहीं होता ताको हमसे श्रीनारदजी कहगयेथे सो तुम्हारे प्रति संक्षेपमें कहैहैं ।

वृहन्नारदे ।

श्लोक–गोलोकोहि महादिव्यः प्रकाशोभयवर्जितः ।
तन्मध्येतु महारम्यं नाम्ना वृन्दावनं शुभम् ॥
नानारत्नमयैर्दिव्यैर्विमानैरुपशोभितम् ।
दिव्यस्त्रीपुंभिराक्रांतं विचरद्भिश्च तद्वने ॥

भापार्थ–हे गिरजे ! वह गोलोक कैसाहै ताको हमसे नारदजी बतायो स्वतएव प्रकाश करताहै वहां कोई कालआदिका भय नहीं तामें सात परकोटेहैं तामें कोई कोटमें मुक्तजन निवास करतेहै कोईमें नंदादिक गोप वास करते है ताके मध्यमें श्रीवृन्दावन धामहै सो महारम्यहै सो वह नानाप्रकारके कल्पवृक्षोंकरके शोभितहै तहां नानाप्रकारके मंदिर शोभित तहां विचित्र स्त्री विचरैहैं।

श्लोक–रम्यं निकुंजं तन्मध्ये कल्पद्रुमसमाकुलम् ।
वालसूर्य्यनिभैस्तुंगैः प्रासादैर्वहुभिर्वृतम् ॥

भापार्थ–ताके मध्यमें निकुंजरम्यहै सो कल्पवृक्ष लतानकरके आच्छादितहै वालसूर्य्यसम प्रकाशमयवर है ।

श्लोक–तन्मध्ये मंडपं दिव्यं मणिकांचनशोभितम् ।
चंदनागुरुकर्पूरकुंकुमामोदवासितम् ॥
मध्ये सिंहासनं तत्र कोटिसूर्य्यसमप्रभम् ।
मध्ये पद्मं सहस्रारं कस्तूरीगंधशोभितम् ॥

भापार्थ–ता निकुंजके मध्यमें सुंदर मणिनको मंडपहै सो चंदन कुंकुम कर्पूरादिकर सुवाससे शोभित है तहां सहस्रदल कमल तामें एक विचित्र सिंहासन जाकी प्रभासे कोटिन सूर्य्यका तेज लाजै है ।

श्लोक–तन्मध्ये कर्णिकायां तु समासीनश्च श्रीहरिः ।
सुंदरास्यश्श्याममूर्तिर्दिव्याभरणशोभितः ॥

द्विभुजो मुरलीहस्तो निवीतो वनमालया ।
कोटिमन्मथसौंदर्यजगन्मोहनविग्रहः ॥

भापार्थ—तीन कमलके मध्य कर्णिकामें श्रीकृष्ण जी विराजमानहैं नाना प्रकारके भूपणकर अंग सुशोभितहैं और द्विभुजा तामें एकहाथमें वंशी लिये दूसरेमें सुमनकी छडी शोभित सो जिनकी विग्रहपर कोटिन कामदेव न्यवछावॅर जगत्के मोहनेवाले ।

श्लोक—पोडशाब्दवयोरूपो यौवनेन विराजितः ।
विशालभालदेश तु कुंकुमेन सुगंधिना ॥
वामांगे राधिकां देवीं नित्यं वृन्दावनेश्वरीम् ।
तस्यैव सदृशीं शक्तिं ललिताद्यसमन्विताम् ॥

भापार्थ—सो श्रीकृष्णमहाराज जिनके वाम भागमें श्रीराधिका महाराणी विराजमान सो तिनकी आठ शक्ति श्रीललिता चंपकलता चंद्ररेखा विशाखा तुंगभद्रा इंद्रलेखा रंगदेवी सुदेवी ये अष्ट सखिनके मध्य युगुलकिशोर तथा सदा वहांके निवासी सोरह वरसके ही रहैहैं सो कोई सखी छत्र कोई चमर कोई पंखा कोई पानदान ऐसे अनगनतिन सखीजनके आवर्तमें विराजमान मंदहसन कर सबको मोहते तहां जब यह चेतन समह होताहै और युगुलमूर्तिके दर्शन कर कृतार्थ होताहै तब भगवत् आज्ञासे ताको अनेक प्रकारके अलंकारतासे शोभित कर माला प्रसाद दे सेवाका अधिकारी करते हैं सो हे पार्वति ! यह सब गुप्त रहस्य केवल महात्माओंकी कृपासे जाननेमें आवैहै सो याप्रकार श्रीमहादेवजीने पार्वतीजीसे सुनाई अब हे शिष्य! सो रहस्य भगवत्कृपा और गुरु तथा संत महात्माओंकी कृपासे हमने तुम्हें सर्व शास्त्रका सार तथा सिद्धांतनिर्विघ्नताते सुनाया सम्पूर्ण किया तासे अब कोई एक स्थलमें जाय सब बातोंका स्मरण कर मनन कर भगवत्का ध्यान करो जाय याप्रकार गुरुके अमृतवचन सुन शिष्य गद्गदहो गुरुकी परिक्रमा

कर पुष्प चढाय दंडवत्कर विनय कर अपने आश्रमको गया सो जो जिज्ञा आदिते अंततक याको विचारेगा सो ताको संसारको मानापमान न सतावेगा इति । मोक्षप्रकरणं राधावल्लभार्पणमस्तु ॥

श्लोक-शास्त्रसारेतिसिद्धान्तमणिर्भाषासमन्वितः ।
चौबेपुराधिष्ठितेनप्रियादासेननिर्मितः ॥

इति श्रीयुतशुक्लदुर्गाप्रसादात्मज अ० र० प्रियादासशुक्लप्रणीते श्रीशास्त्रसारसिद्धान्तमणौ मोक्षप्रकरण सम्पूर्णम् ॥ ८ ॥



पुस्तक मिलनेका पता-

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-मुंबई.